यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन

(YASHPAL AUR BIRENDRA KUMAR BHATTACHARYA KE UPANYASON KA TULANATMAK ADHYAYAN)

[मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल के हिन्दी विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.) की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध]

A THESIS SUBMITTED IN PARTIAL FULFILLMENT OF THE REQUIREMENTS FOR THE DEGREE OF DOCTOR OF PHILOSOPHY

पूजा शर्मा

PUJA SARMA

MZU Regd. No 1900206

Ph.D. Regd. No. MZU/Ph.D./ 1316 of 26.07.2019

हिन्दी विभाग

शिक्षा एवं मानविकी संकाय

DEPARTMENT OF HINDI

SCHOOL OF EDUCATION AND HUMANITIES

अगस्त, 2022

AUGUST, 2022

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन

(YASHPAL AUR BIRENDRA KUMAR BHATTACHARYA KE UPANYASON KA TULANATMAK ADHYAYAN)

प्रस्तुतकर्ता

पूजा शर्मा

हिन्दी विभाग

PUJA SARMA

Department of Hindi

शोध-निर्देशक

डॉ. अमिष वर्मा

हिन्दी विभाग

Dr. Amish Verma

Department of Hindi

मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल के शिक्षा एवं मानविकी संकाय के अंतर्गत
हिन्दी विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.) की उपाधि के
लिए अपेक्षित आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध

Submitted in partial fulfilment of the requirement of the degree of Doctor of Philosophy in Hindi of Mizoram University, Aizawl.

डॉ. अमिष वर्मा
सहायक आचार्य
हिन्दी विभाग
मिज़ोरम विश्वविद्यालय
आइज़ोल -796004

केंद्रीय विश्वविद्यालय
A Central University
(Accredited by NAAC with 'A' Grade)

Dr. Amish Verma
Assistant Professor
Department of Hindi
Mizoram University,
Aizawl-796004

Mobile No,: 09436334432 / 09774009181; E-mail: amishjnu@gmail,com; Website: www,mzu,edu,in

दिनांक: 01.08.2022

<u>प्रमाण-पत्र</u>

प्रमाणित किया जाता है कि **पूजा शर्मा** ने मेरे निर्देशन में मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल की **डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.- हिन्दी)** की उपाधि हेतु **'यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन'** विषय पर शोध कार्य किया है। प्रस्तुत शोध कार्य शोधार्थी की अपनी निजी गवेषणा का फल है। यह इनका मौलिक कार्य है। जहाँ तक मेरी जानकारी है, प्रस्तुत शोध-प्रबंध या इसके किसी भी अंश को किसी विश्वविद्यालय या संस्थान में किसी प्रकार की उपाधि हेतु अद्यावधि प्रस्तुत नहीं किया गया है।

मैं प्रस्तुत शोध-प्रबंध को मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल की **डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.- हिन्दी)** की उपाधि हेतु मूल्यांकन के लिए प्रस्तुत करने की संस्तुति करता हूँ।

(डॉ. अमिष वर्मा)
शोध-निर्देशक

हिन्दी विभाग
मिज़ोरम विश्वविद्यालय
आइज़ोल

अगस्त, 2022

घोषणा पत्र

मैं **पूजा शर्मा** एतद् द्वारा घोषित करती हूँ कि प्रस्तुत शोध-प्रबंध की विषय-सामग्री मेरे द्वारा किए गए शोध कार्य का सुपरिणाम है। इस शोध-सामग्री के आधार पर न तो मुझे और जहाँ तक मुझे ज्ञात है, न किसी अन्य को कोई उपाधि प्रदान की गई है और न ही यह शोध-प्रबंध मेरे द्वारा कोई अन्य उपाधि प्राप्त करने के लिए किसी अन्य विश्वविद्यालय या संस्थान में प्रस्तुत किया गया है। इस शोध-प्रबंध लेखन के दौरान जिन ग्रंथों की सहायता ली गयी है, उसे समुचित रूप से उद्धृत किया गया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल के सम्मुख हिन्दी विषय में **डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.- हिन्दी)** की उपाधि के लिए प्रस्तुत किया जाता है।

(पूजा शर्मा)
शोधार्थी

(प्रो. सुशील कुमार शर्मा)
अध्यक्ष

(डॉ. अमिष वर्मा)
शोध-निर्देशक

भूमिका

वैज्ञानिकता के इस युग में भारत में नहीं बल्कि विश्व के भिन्न-भिन्न विश्वविद्यालयों में तुलनात्मक साहित्य को विशेष महत्व दिया जा रहा है। तुलनात्मक साहित्य वह अनुशासन है, जिसमें एक से अधिक रचनाओं अथवा भिन्न-भिन्न भाषाओं में रचित साहित्य का अध्ययन किया जाता है। इसके जरिए किसी भी दो भिन्न युगों या एक ही युग की दो भिन्न भाषाओं या एक ही भाषा के दो भिन्न रचनाकारों के साहित्य की कथावस्तु, विचारधारा, युगीन परिस्थितियाँ, भाषा शैली आदि की समानता एवं भिन्नता के संबंध में ज्ञान प्राप्त करना आसान हो गया। यह किसी विषय-वस्तु की ही तुलना नहीं करता अपितु हमारे सीमित ज्ञान क्षेत्र को भी बढ़ाता है। अत: आज शोध के क्षेत्र में यह अध्ययन विधि विशेष रूप से काफी प्रचलित है तथा इसे अधिक महत्व दिया जा रहा है।

मेरे एम.फिल. के लघु शोध-प्रबंध का विषय 'बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास 'मृत्युंजय' और जुमसी सिराम के उपन्यास 'मातमुर जामोह' का तुलनात्मक अध्ययन' था। उस दौरान मैंने बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के साहित्य को पढ़ा। मुझे ऐसे कुछ बिंदु मिले जो हिन्दी साहित्यकार यशपाल के साहित्य में भी दिखाई पड़ते हैं। इन दोनों लेखकों का समय भी लगभग एक ही है। इसलिए मैंने इन दोनों लेखकों के उपन्यासों के तुलनात्मक अध्ययन का विषय चुना। प्रस्तुत शोध-प्रबंध '**यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन**' में हिन्दी के अत्यंत महत्वपूर्ण उपन्यासकार यशपाल और असमिया के प्रतिष्ठित उपन्यासकार बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन-विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

अध्ययन की सुविधा हेतु सम्पूर्ण शोध-प्रबंध को पाँच अध्यायों में विभक्त किया गया है। पहला अध्याय है- '**यशपाल: जीवन, रचनात्मक परिवेश एवं लेखकीय चेतना का निर्माण**'। इस अध्याय को तीन उप-अध्यायों में विभाजित करते हुए यशपाल के जीवन, विशेषकर क्रांतिकारी और साहित्यिक जीवन, उनकी साहित्यिक दृष्टि एवं उनके समकालीन अन्य साहित्यकारों की रचना और उनकी साहित्यिक दृष्टि, यशपाल के साहित्य निर्माण के प्रेरणा स्त्रोत, उन पर पड़ने वाले प्रभाव तथा उनकी रचनाशीलता को रेखांकित करने एवं इन्हें समझने का प्रयास किया गया है।

दूसरा अध्याय '**बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य: जीवन, साहित्यिक परिवेश एवं रचनाशीलता**' को तीन उप-अध्यायों में विभाजित करते हुए बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के जीवन, विशेषकर साहित्यिक जीवन, उनकी साहित्यिक दृष्टि एवं उनके समकालीन साहित्यिक परिदृश्य को समझते हुए उनकी रचनाओं तथा उनकी साहित्यिक उपलब्धि की चर्चा की गयी है।

तीसरा अध्याय '**यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री और स्त्री-पुरुष संबंध**' है। इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में विभाजित करते हुए यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री प्रश्नों की अभिव्यक्ति और उनके प्रति इन दोनों रचनाकारों के दृष्टिकोणों को समझने का प्रयास किया गया है। इसके अलावा इन दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में प्रेम तथा स्त्री-पुरुष संबंधों की अभिव्यक्ति के अंतर्गत दांपत्य प्रेम के साथ-साथ विवाहपूर्व एवं विवाहेतर प्रेम एवं काम-संबंध के प्रति रचनाकारों के दृष्टिकोण को तुलनात्मक रूप से समझने की कोशिश की गई है।

चौथा अध्याय '**यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों के विविध पक्ष**' है। इस अध्याय को चार उप-अध्यायों में बाँटते हुए इसमें यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में अभिव्यक्त जाति-वर्ण संबंधी दृष्टिकोण, वर्ग चेतना और आर्थिक विषमता संबंधी दृष्टिकोण, उपन्यासों में भारत छोड़ो आंदोलन की अभिव्यक्ति के स्वरूप तथा उत्तर भारत और असम में उस आंदोलन के प्रभाव, भारत की आजादी और विभाजन के दौरान उत्तर भारत तथा असम में घटित घटनाओं के प्रभाव को तुलनात्मक रूप से समझने एवं विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

पंचम अध्याय '**यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का शिल्प**' है। इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में विभाजित करते हुए यशपाल के उपन्यासों और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के हिन्दी में अनूदित उपन्यासों में प्रयुक्त भाषा के स्वरूप की तुलना करने की कोशिश की गयी है। इसके साथ ही इन दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में प्रयुक्त विविध कथा प्रविधियों रेखांकित करते हुए इनके कथा-शिल्प को तुलनात्मक रूप से स्पष्ट करने का प्रयास भी किया गया है।

अंत में उपसंहार प्रस्तुत किया गया है, जो इस शोध प्रबंध के सम्पूर्ण विवेचन और विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्षों का समाहार है। इसके साथ ही इसमें शोध प्रबंध के महत्वपूर्ण निष्कर्षों को बिंदु बार तरीके से प्रस्तुत करने का प्रयास भी किया गया है।

इस शोध कार्य के दौरान बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के हिन्दी में अनूदित उपन्यासों को ढूँढने और प्राप्त करने में कुछ दिक्कतें भी आयीं। भट्टाचार्य जी के हिन्दी में अनूदित छह उपन्यासों में से चार 'आउट ऑफ प्रिंट' हो चुके हैं। इन उपन्यासों को मैंने गोहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी, राजीव गाँधी विश्वविद्यालय, ईटानगर, तेजपुर विश्वविद्यालय, तेजपुर, दरंग कॉलेज, तेजपुर और तेजपुर कॉलेज, तेजपुर के पुस्तकालयों में ढूँढा, मगर

वहाँ भी ये उपन्यास उपलब्ध नहीं थे। इसके पश्चात् मैंने गुवाहाटी के एक पुस्तक प्रकाशक चंद्र प्रकाशन से संपर्क किया। चंद्र प्रकाशन के एक सदस्य ने मुझे बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य जी के घर जाने का सुझाव दिया। उनके बहुमूल्य सुझाव के कारण मैं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य जी के घर गयी, वहाँ उनकी पत्नी बिनीता भट्टाचार्य जी से मुलाकात हुई। उनकी पत्नी ने बड़ी ही सहृदयता एवं प्रेम से मुझसे बातचीत की और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के हिन्दी में अनूदित चार अप्राप्त उपन्यासों में से तीन उपन्यासों ('अँधेरा-उजाला', 'पाखी घोड़ा' और 'माँ') की फोटो कॉपी करवाकर मुझे दी। लेकिन उनके परिवार से भी 'प्रजा का राज' उपन्यास ('इयारुइंगम' का हिन्दी अनुवाद) मुझे उपलब्ध नहीं हो सका। साहित्य अकादमी से यह पुस्तक प्रकाशित है। लेकिन वहाँ भी यह पुस्तक अनुपलब्ध है। बार-बार वहाँ संपर्क करने के बावजूद यह पुस्तक उपलब्ध नहीं हो सकी। ऐसी स्थिति में हिन्दी में अनूदित होने के बावजूद हिन्दी में अनूदित उपन्यास उपलब्ध नहीं हो सका और इसलिए उसे पूरी तरह शोध में शामिल नहीं किया जा सका। लेकिन हमने यथा अवसर जरूरत पड़ने पर मूल असमिया उपन्यास से ही संदर्भ लिये हैं, यह मानते हुए कि अनुवाद में भी यह उसी रूप में मौजूद होगा। मैं चंद्र प्रकाशन के उस सदस्य के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ, जिन्होंने मुझे बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के घर जाने की सलाह दी। साथ ही आदरणीय बिनीता भट्टाचार्य जी के प्रति भी आदर के साथ आभार व्यक्त करती हूँ। उनका सहयोग मेरे लिए अतुलनीय है।

मैं उन सभी लोगों के प्रति आभार व्यक्त करना चाहूँगी, जिन्होंने प्रस्तावित विषय पर शोध कार्य पूरा करने में मेरी सहायता की और मुझे प्रोत्साहित किया।

मैं अपने शोध-निर्देशक, मिज़ोरम विश्वविद्यालय, हिन्दी विभाग के सहायक आचार्य डॉ. अमिष वर्मा के प्रति बहुत आदर और सम्मान के साथ आभार व्यक्त करती हूँ। उनके सहयोग और परामर्श के कारण ही मैं इस शोध कार्य को पूरा करने में सक्षम हो

सकी। इस शोध-कार्य के दौरान सर ने मेरी बहुत सहायता की और समय-समय पर महत्वपूर्ण सलाह मुझे देते रहे। शोध-कार्य के दौरान मुझसे जो छोटी-बड़ी गलतियाँ हुईं, उन सभी को बड़े भाई की तरह माफ कर उन्होंने प्यार से समझाया और जीवन पथ पर आगे बढ़ने के लिये मेरा मार्गदर्शन किया। यह सच है कि उनके सहयोग और निर्देशन के बिना मेरे लिये इस शोध कार्य को संपन्न करना संभंव नहीं होता।

मैं हिन्दी विभाग, मिज़ोरम विश्वविद्यालय के सभी गुरुजन प्रो. संजय कुमार सर, प्रो. सुशील कुमार शर्मा सर, डॉ. सुषमा कुमारी मैम, डॉ. अखिलेश कुमार शर्मा सर के प्रति भी आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने शोध-कार्य के दौरान मुझे महत्वपूर्ण सुझाव दिए और मुझे प्रोत्साहित करते रहे।

डॉ. अभिषेक कुमार यादव सर (हिन्दी विभाग, राजीव गाँधी विश्वविद्यालय, ईटानगर), आशा दीदी और खुशबू मैम को तहे दिल से धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ। उन्होंने मुझे शोध-कार्य को समय से पूरा करने के लिये प्रोत्साहित किया और अमूल्य सुझाव दिए।

मैं अपने विभाग की पीएच.डी. की शोध छात्रा मेरी प्यारी सहेली रोबी लललोमकिमी को भी धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ। शोध कार्य के दौरान उसने मेरी बहुत सहायता की और हम दोनों एक दूसरे को समय से शोध कार्य पूरा करने के लिये प्रोत्साहित करते रहे।

मैं अपने माता-पिता एवं बड़े भाई को भी तहे दिल से प्रणाम सहित धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ, जिन्होंने हमेशा मेरा साथ दिया और शोध कार्य को समय से पूरा करने के लिये प्रोत्साहित करते रहे। इसके साथ ही अपनी सासु माँ और ससुर जी को भी प्रणाम

सहित ध्यन्यवाद ज्ञापित करती हूँ, जिनके आशीर्वाद के कारण यह शोध कार्य पूरा कर पाने में सक्षम हो सकी हूँ।

जीवनसंगी प्राणजित के प्रति बहुत प्यार और आभार व्यक्त करती हूँ। घर से दूर होस्टल में रहकर पढ़ने में उन्होंने हमेशा मेरा सहयोग किया और मुझे गृहस्थी के झंझटों से दूर रखा। आर्थिक रूप से मुझे निश्चिंत रखने के साथ-साथ वे लगातार मानसिक रूप से मुझे प्रोत्साहित करते रहे और मेरी महात्वाकांक्षा की ओर आगे बढ़ने के लिए सदैव मुझे प्रेरित किया।

अंत में मैं यह कहना चाँहूगी कि अगर मेरे इस शोध-कार्य से अकादमिक जगत में किसी को थोड़ा-सा भी लाभ मिल सका तो मैं अपने इस प्रयास को सफल समझूँगी।

29 जुलाई, 2022 **पूजा शर्मा**

मिज़ोरम विश्वविद्यालय
आइज़ोल

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

भूमिका i - vi

अध्याय 1: यशपाल: जीवन, रचनात्मक परिवेश एवं लेखकीय चेतना का निर्माण 1 - 48

1.1 यशपाल का जीवन एवं रचनात्मक समकाल

1.2 यशपाल की लेखकीय चेतना का निर्माण

1.3 यशपाल की साहित्यिक उपलब्धि

अध्याय 2: बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य: जीवन, साहित्यिक परिवेश एवं रचनाशीलता 49 - 81

2.1 बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के जीवन प्रसंग

2.2 बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का साहित्यिक परिवेश

2.3 बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य की रचनाशीलता

अध्याय 3: यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री और स्त्री-पुरुष संबंध 82 - 120

3.1 यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री

3.2 यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री-पुरुष संबंध

अध्याय 4: यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों के विविध पक्ष 121 - 179

4.1 जाति-वर्ण संबंधी दृष्टि

4.2 वर्ग-चेतना और आर्थिक विषमता

4.3 भारत छोड़ो आंदोलन की औपन्यासिक अभिव्यक्ति

4.4 भारत की आजादी और विभाजन

अध्याय 5: यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का शिल्प 180 - 216

5.1 भाषा

5.2 कथा-शिल्प

उपसंहार 217 - 230

संदर्भ ग्रंथ सूची 231 - 236

बायो डाटा

अनुसंधित्सु का विवरण

अध्याय-1

यशपाल: जीवन, रचनात्मक परिवेश एवं लेखकीय चेतना का निर्माण

1.1 यशपाल का जीवन एंव रचनात्मक समकाल

1.2 यशपाल की लेखकीय चेतना का निर्माण

1.3 यशपाल की साहित्यिक उपलब्धि

1. यशपाल: जीवन, रचनात्मक परिवेश एवं लेखकीय चेतना का निर्माण

1.1 यशपाल का जीवन एंव रचनात्मक समकाल

जीवन प्रसंग:

हिन्दी साहित्य को आदर्शवादी धरातल से उठाकर यथार्थ की भावभूमि पर खड़ा करने वाले प्रख्यात साहित्यकार यशपाल का जन्म एक खत्री परिवार में 3 दिसंबर, 1903 ई. को फिरोजपुर छावनी में हुआ। उनके पिता हीरालाल अपने पूर्वजों के निवास स्थान काँगड़ा में छोटी सी जमीन पर एक कच्चे मकान में रहते थे। वे रुपया सूद पर लगाते थे। लोगों द्वारा सूद एवं मूल रुपया समय पर न लौटाने तथा रुपया मारे जाने के कारण धीरे-धीरे उनकी आर्थिक स्थिति खराब होती जा रही थी। उनकी एक दुकान भी थी, जिसे उनके भाईयों ने हड़प लिया।[1] आर्थिक परेशानी के कारण कुछ समय बाद उन्हें शहर जाकर छोटी-मोटी नौकरी भी करनी पड़ी थी। यशपाल की माता प्रेमादेवी संस्कारी, धनाढ्य, उच्चकुल परिवार में उत्पन्न हुई थी। हीरालाल के साथ अनमेल विवाह और दिनों-दिन बढ़ती आर्थिक तंगी के कारण भावी संतान के उज्वल भविष्य के लिये वे पति का साथ छोड़ फिरोजपुर चली आईं और फिरोजपुर छावनी की कन्या पाठशाला में अध्यापिका की नौकरी करने लगीं।[2] कुछ वर्षों बाद अपने दोनों पुत्रों (यशपाल और धर्मपाल) की उच्च शिक्षा के लिए माता प्रेमादेवी फिरोजपुर से पंजाब आकर स्थायी रूप से बस गयीं। माँ के संबंध में कृतज्ञता व्यक्त करते हुए यशपाल लिखते हैं- "हम दोनों को सफल और आदर्श बनाने के लिए माँ काँगड़े का पहाड़ी इलाका छोड़कर पंजाब के लू से तपने वाले मैदानों में आर्यकन्या पाठशालाओं की नौकरी करके निर्वाह कर रही थीं। इस नौकरी से माँ को कुछ उद्देश्य या परमार्थ के कर्तव्य की पूर्ति का भी संतोष होता था।"[3]

शिक्षा- यशपाल की प्रारंभिक शिक्षा सात-आठ वर्ष की ऊम्र में काँगड़े के गुरुकुल में आरंभ हुई। इसका कारण यह था कि उनकी माता आर्य समाज के विचारों के प्रति आकर्षित थीं।

अत: वे अपने बेटे को भी आर्य धर्म का तेजस्वी और ब्रह्मचारी प्रचारक बनाना चाहती थीं। इसीलिए उन्होंने यशपाल को गुरुकुल में भर्ती कर दिया। बचपन में माता-पिता से दूर गुरुकुल के कठोर अनुशासन में रहते हुए गुरुकुल के निमयानुसार नंगे पाँव या खड़ाऊँ पहनकर चलना, काठ के तख्त पर सोना, सख्त सर्दी में सूर्योदय से पहले ठंडे पानी से नहाना और भोजन के बाद अपना लोटा-थाली स्वयं माँजना, संध्या पलथी मारे, आँखे मूँद कर ऊँचे स्वर में मंत्रोचारण करना उन्होंने सीखा।[4] इसके साथ ही यशपाल के नि:शुल्क पढ़ने को लेकर उनके सहपाठी उनकी खिल्ली उड़ाया करते थे। प्राय: बीमार होते रहने के कारण कमजोर हो जाने पर गुरुकुल के दूसरे बच्चों की तुलना में विशेष गरम कपड़े और पौष्टिक आहार के रूप में मक्खन मलाई आदि अधिक दिये जाने पर भी दूसरे बच्चे उनपर ताने कसते थे। इन सब वजहों से उन्हें गुरुकुल का वातावरण असह्य लगने लगा।[5] इन्हीं सब परिस्थितियों से जूझते हुए कुछ वर्ष व्यतीत करने के पश्चात् प्रबल संग्रहणी रोग होने के कारण लगभग चौदह वर्ष की आयु में उन्हें गुरुकुल की पढ़ाई बीच में ही छोड़नी पड़ी।[6] वहाँ से निकलकर वे सन् 1917 ई. में लाहौर के डी. ए. वी स्कूल की सातवीं कक्षा में दाखिल हुए।[7] यहाँ भी आर्य समाज के प्रभाव के कारण शिक्षा का माध्यम हिन्दी था, उर्दू नहीं पढ़ाई जाती थी। लेकिन लाहौर में व्यावहारिक जीवन में ज्यादातर उर्दू भाषा का प्रयोग किया जाता था। उर्दू न आने के कारण उन्हें हर तरफ कठिनाई महसूस होती थी। फलस्वरूप उन्होंने जल्द ही कामचलाऊ उर्दू सिख ली। सन् 1919 ई. के आस-पास उनकी माता फिरोजपुर छावनी के प्राइमरी आर्य कन्या पाठशाला में नियुक्त हुईं, जिसके कारण उन्हें लाहौर छोड़ फिरोजपुर छावनी में लौट जाना पड़ा। यहाँ आकर वे छावनी के सरकारी मिडिल स्कूल में दाखिल हुए।[8] सरकारी मिडिल स्कूल से प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होकर वे मनोहरलाल मेमोरियल हाईस्कूल में भर्ती हुए। इस दौरान उन्हें आर्य समाज द्वारा अछूत बालकों की शिक्षा के लिए खोली गयी रात्रि पाठशाला में हेडमास्टर नियुक्त किया गया। उनका मासिक वेतन आठ रूपये था। यह उनकी पहली कमाई थी। अपनी पढ़ाई करते हुए लगभग साल भर वे इस नौकरी को करते रहे। एक ओर जहाँ वे आर्थिक परेशानी के कारण

पढ़ाई के साथ-साथ नौकरी भी करते रहे, वहीं दूसरी ओर घर के कामों में भी माँ की सहायता भी किया करते थे।[9] मनोहरलाल मेमोरियल हाईस्कूल से मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण हुए और अपने स्कूल में अव्वल आये।[10] मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् पंजाब नेशनल कॉलेज में दाखिल हुए। अपनी कड़ी मेहनत से उन्होंने दो साल की पढ़ाई एक साल में पूरी की और सन् 1925 ई. में बी.ए की पढ़ाई पूरी कर ली।[11] उसके पश्चात् वर्ष 1926 ई. में उन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय से 'प्रभाकर' की परीक्षा भी पास कर ली।[12] पंजाब नेशनल कॉलेज में पढ़ाई के दौरान ही उनके जीवन में एक नया मोड़ आया जो उनके लिए अत्यंत महत्वपूर्ण साबित हुआ।

क्रांतिकारी जीवन-यशपाल के जीवन में नेशनल कॉलेज की शिक्षा का विशेष महत्व रहा। उन्हें क्रांति की प्रेरणा इसी कॉलेज से मिली। हालाँकि बचपन से ही उनके मन में अंग्रेजों के प्रति विद्रोह की भावना पनपने लगी थी। इस संदर्भ में वे स्वंय कहते हैं-**"**मैंने अपने बचपन में बहुत कुछ देखा। मैंने अंग्रजों को सड़क पर सर्वसाधारण जनता से सलामी लेते देखा है। हिंदुस्तानियों को उनके सामने गिड़गिड़ाते देखा है, इससे अपना अपमान अनुभव किया है और उसके प्रति विरोध अनुभव किया है।"[13] छोटी-सी उम्र में मुर्गी को छेड़ने के कारण अंग्रेज महिला द्वारा किये गये अभद्र व्यवहार और मारने की धमकी के प्रत्युतर में यशपाल ने भी उन्हें मुँहतोड़ जबाव दिया। परिणाम यह हुआ कि अंग्रेज महिला के मैनेजर ने यशपाल की शिकायत उनकी माँ से कर दी और उन्हें माँ के हाथों मार खाना पड़ा। इससे उनके मन में उस अंग्रेज महिला के प्रति तिरस्कार की भावना भर गई। वैसी ही काशीपुर के 'द्रोणसागर' की घटना ने यशपाल के मन में अंग्रेजों के प्रति विरोध की भावना को पैदा किया। विद्यार्थी जीवन में गुरुकुल की शिक्षा ने भी यशपाल के मन में अंग्रेजों के प्रति विरोध की भावना को पल्लवित किया।[14] 'मनोहरलाल मेमोरियल स्कूल' में मैट्रिक की पढ़ाई के दौरान वे कांग्रेस के राजनैतिक कार्य से जुड़े। वह एक ऐसा दौर था जब गाँधी जी द्वारा चलाये गये असहयोग आंदोलन की धूम पूरे देश में मची हुई थी। जनता स्वतंत्रता की

लालसा में अपना सब कुछ त्यागकर इस आंदोलन में कूद पड़ी थी। यशपाल इससे अछूते नहीं रह सके। उन्होंने गाँव-गाँव घूमकर आंदोलन का प्रचार-प्रसार किया।[15] लेकिन गाँधी जी द्वारा चौरी-चौरा कांड के कारण असहयोग आंदोलन को स्थगित कर देने पर यशपाल के मन में गाँधी के प्रति निराशा की भावना पैदा हुई और वे गाँधीवादी मार्ग छोड़कर क्रांति की ओर झुक गए। नेशनल कॉलेज में दाखिल होने पर उनका परिचय क्रांतिकारी भगतसिंह, सुखदेव और भगवतीचरण वोहरा से हुआ। नेशनल कॉलेज के राष्ट्रभक्तिपूर्ण वातावरण में यशपाल एवं उनके साथियों द्वारा डैनब्रीन की 'माई फाइट फार आयरिश फ्रीडम', मैजिनी और गैरीबाल्डी की जीवनियों, फ्रांसीसी राज्यक्रांति का इतिहास, वोल्तेयर और रूसो के रूढ़िवाद विरोधी क्रांतिकारी विचार, वीरा फिगनर, क्रौपोटकिन आदि रूसी क्रांतिकारियों की जीवनियों, तालस्ताय और तुर्गनेव के उपन्यासों तथा शचीन्द्रनाथ सन्याल के 'बंदी जीवन' (आपबीती) और 'रौलेट कमेटी की रिपोर्ट' आदि के अध्ययन ने भी देश की स्वतंत्रता के लिए कुछ करने की चाह रखनेवाले इन नवयुवकों की क्रांतिकारी भावना को प्रभावित किया। इसके साथ ही क्रांतिकारी गतिविधियों में दिलचस्पी रखने वाले इतिहास व राजनीतिशास्त्र के प्रो. जयचंद्र विद्यालंकार जी ने भी यशपाल की क्रान्तिकारी भावना को प्रोत्साहित किया था।[16] उसी दौरान वे भगतसिंह के साथ मिलकर देश के लिए अपना जीवन समर्पित करने की प्रतिज्ञा लेते हैं।[17] सन् 1926 ई. तक आते-आते वे पूरी तरह क्रांतिकारी बन गए और अपने आपको क्रांतिकारी दल के कार्य में समर्पित कर दिया।[18] क्रांतिकारी दल के कार्यों में उनके योगदान को हम निम्नलिखित बिंदुओं के अन्तर्गत देख सकते है:

1. साण्डर्स वध- ब्रिटिश सरकार ने साइमन की अध्यक्षता में 8 नवम्बर 1927 ई. को 'साइमन कमिशन' का गठन किया। इस आयोग का काम इस बात की सिफ़ारिश करना था कि क्या भारत इस योग्य हो गया है कि यहाँ के लोगों को और अधिक संवैधानिक अधिकार

दिए जाएँ और यदि दिए जाएँ तो उसका रूप क्या हो?[19] लेकिन इस कमिशन को गठित करने के पीछे ब्रिटिश सरकार का मूल उद्देश्य था नेताओं को संतुष्ट कर जातीय आंदोलन को समाप्त करना। इस आयोग में एक भी भारतीय सदस्य को शामिल नहीं किया गया जो भारतवासियों के लिए एक अपमानजनक विषय था।[20] 3 फरवरी सन् 1928 ई. को साइमन अपने साथियों सहित भारत आये। जैसे ही उन लोगों ने भारत में पदार्पण किया वैसे ही 'साइमन गो बैक' का नारा चारों ओर गूँजने लगा।[21] लाहौर में 'नौजवान भारत सभा' ने भी 'साइमन गो बैक' का नारा लगाकर विरोध प्रदर्शन किया। लाला लाजपत राय इस प्रदर्शन में शामिल हुए और डी. एस. पी. साण्डर्स के लाठीचार्च से घायल होकर 17 नवम्बर को उनकी मृत्यु हो गई।[22] पुलिस के इस कार्य से सभी क्रांतिकारी चिड़ गए। क्रांतिकारी दल ने लाला लाजपत राय की मौत का बदला लेने का फैसला किया। चंद्रशेखर आजाद के नेतृत्व में लाला लाजपत राय की मृत्यु के एक महीने बाद क्रांतिकारी भगतसिंह और राजगुरु ने लाहौर के डी. ए. वी. कॉलेज के सामने साण्डर्स की हत्या कर दी।[23] इस क्रांतिकारी कार्य को अंजाम देने वाले फरार क्रांतिकारियों के लिए पैसा इकठ्ठा करने की जिम्मेदारी यशपाल को दी गई थी, जिसे उन्होंने बखूबी निभाया।

2. **असेम्बली में बम कांड**- असेम्बली में बम विस्फोट की योजना क्रांतिकारी भगत सिंह और यशपाल ने तैयार की थी। 4 अप्रैल सन् 1929 ई. के दिन असेम्बली में हिंदुस्तानी जनमत के विरोध के बावजूद वाइसराय की विशेष स्वीकृति पर 'सार्वजनिक सुरक्षा' और 'औद्योगिक विवाद' बिलों को कानून बनाने की घोषणा की जाने वाले थी।[24] उसी दिन भगतसिंह और बटुकेश्वरदत्त ने बम विस्फोट कर विदेशी सरकार की जड़ों को हिला दिया। इस विस्फोट के पीछे उनका उद्देश्य असेम्बली में बिस्फोट कर भागना नहीं था, बल्कि गिरफ्तार होकर अपने संगठन 'हिंदुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र सेना' के उद्देश्य से ब्रिटिश सरकार को अवगत करना था कि 'क्रांति का उद्देश्य कुछ व्यक्तियों का रक्तपात करना ही

नहीं है, बल्कि मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण की प्रथा को समाप्त करके इस देश की जनता के लिए आत्मनिर्णय और समान अवसर का अधिकार प्राप्त करना है।'[25]

3. लाहौर में बम फैक्टरी- क्रांतिकारी भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त की गिरफ्तारी के बाद हिंदुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संगठन द्वारा लाहौर में बम फैक्टरी का निर्माण किया गया, जिसमें बम बनाने के कार्य में यशपाल का योगदान महत्वपूर्ण रहा। सुराग मिलने पर खुफिया पुलिस द्वारा बम फैक्टरी में छापे मारे जाने पर सुखदेव को गिरफ्तार कर लिया गया। सौभाग्यवश यशपाल उस दिन फैक्टरी नहीं गये थे। पुलिस द्वारा बम फैक्टरी में छापे मारने एवं सुखदेव की गिरफ्तारी की खबर सुनते ही उन्होंने लाहौर से भाग जाना ही उचित समझा। यशपाल को पकड़ने के लिए इनाम की घोषणा की गयी थी। वे वेश बदलकर लाहौर से काँगड़ा चले गये।[26] वहाँ से वे अपने अन्य क्रांतिकारी साथियों से सम्पर्क करने सहारनपुर चले गये। वहाँ पहुँचकर सहारनपुर बम फैक्टरी में भी बम बनाने के कार्य में उन्होंने सक्रिय सहयोग दिया। दुर्भाग्यवश यह फैक्टरी भी पुलिस की नजरों में पड़ गयी और उनके साथी शिववर्मा और जयदेव कपूर भी पकड़े गये।[27] परन्तु वे भाग निकले। यहाँ से भी वे वेश बदलकर कलकत्ता चले गये। वहाँ पहुँकर वे भगवतीचरण वोहरा से सम्पर्क करने में सफल हुए और उनसे विचार-विमर्श करने कश्मीर की ओर रवाना हो गए।[28] कश्मीर जाने का उनका उद्देश्य था बम बनाने की विधि सीखना। वहाँ जाकर उन्होंने केमिस्ट्री के लेक्चरर देवदत्त से बम बनाने की विधि सिखी।[29] बम बनाने की विधि सीखकर वे कश्मीर से रोहतक आए। यहाँ आकर उन्होंने लेखाराम वैद्य के मकान में बम बनाने का काम शुरू किया। इस कार्य में उन्हें अनेक परेशानियों का समाना करना पड़ा। बम बनाने की प्रक्रिया में उबलते हुए तेजाब से पीले रंग का धुआँ अधिक मात्रा में निकलता था, जिससे उनके शरीर का रंग हल्दी जैसा पीला हो गया, साथ ही उन्हें तेज खासी और सिर दर्द रहने लगा।[30]

4. वाइसराय की स्पेशल ट्रेन के नीचे बम विस्फोट- यशपाल एवं उनके साथियों ने बम्बई से दिल्ली आते वक्त वाइसराय की गाड़ी को बम से उड़ाने का फैसला लिया। परन्तु यह योजना स्थगित कर दी गई। इसके पश्चात् 23 दिसम्बर, 1929 ई. को वाइसराय कोल्हापुर से दिल्ली जानेवाले थे।[31] रेल सुबह छ: बजे दिल्ली पहुँचने वाली थी। उसी समय बम विस्फोट करने की योजना बनायी गयी। गाड़ी निश्चित समय पर पहुँचते ही यशपाल ने बटन दबाकर विस्फोट किया। लेकिन वाइसराय बच गए।[32]

गिरफ्तारी- हिंदुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र सेना का प्रतिनिधित्व स्वीकार करने के पश्चात् आयरिश महिला सावित्री देवी के मकान पर पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। यहीं से उनके जेल जीवन की शुरुआत हुई।[33]

जेल में ऐतिहासिक विवाह एवं रिहाई- प्रकाशवती जी का परिवार परम्परावादी था। इसके बावजूद भी उन्होंने क्रांति का मार्ग अपना लिया था। माता-पिता द्वारा विवाह के लिए दबाव ढालने पर प्रकाशवती जी ने अपना घर छोड़ दिया एवं सम्पूर्ण रूप से क्रांतिकारी कार्य में लग गईं। उसी दौरान उनका परिचय यशपाल से हुआ और धीरे-धीरे वे दोनों प्रेम के बंधन में बंध गये। क्रांति की राह पर चलते हुए दोनों ने एक-दूसरे को अपना जीवन साथी मान लिया था। 1932 ई. में पुलिस से मुठभेड़ में गोलियाँ समाप्त हो जाने पर यशपाल गिरफ्तार कर लिए गए और उन पर मुकदमा चलाया गया, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें चौदह वर्ष की सजा सुनायी गयी।[34] इतने लम्बे समय के लिए बंदी बनाए जाने पर उन्हें अपना जीवन अंधकारमय प्रतीत होने लगा। वे अपनी प्रेमिका प्रकाशवती जी को अपने प्रेम बंधन से मुक्त करना चाहते थे, ताकि उनका भावी जीवन नष्ट न हो। अत: उन्होंने प्रकाशवती जी को स्थिति से अवगत कराने की चेष्टा की और पत्र द्वारा उन्हें संकेत दिया- "जीवन को व्यावहारिक और वास्तविक दृष्टिकोण से ही देखना चाहिये। व्यक्ति का मूल्य उससे समाज या दूसरे व्यक्तियों को प्राप्त होने वाले संतोष और उपयोग से ही होता है। जिस व्यक्ति की उपस्थिति या स्मृति केवल अभाव या निरन्तर दुख का कारण

बने, उससे मुक्ति पा लेना ही अपने प्रति न्याय है। जो दाँत सदा पीड़ा ही दे, उसे निकलवा कर उसकी जगह दूसरा दाँत लगवा लेना ही न्याय और कर्तव्य है, आदि-आदि...।"[35] इस पत्र का परिणाम बिल्कुल उलटा हुआ। प्रकाशवती जी ने यशपाल से जेल में विवाह करने के लिए बरेली के जिला मेजिस्ट्रट की अदालत में अर्जी दे दिया। प्रकाशवती जी द्वारा ऐसा कदम उठाये जाने पर जेल के स्वास्थ निरिक्षक मेजर मल्होत्रा एकदम भावुक हो गये और कहने लगे कि- "मैं यह सोचता रहा कि तुम्हें तो अभी दस-ग्यारह साल जेल में रहना है- भगवान करे तुम छूट जाओ तो अच्छा ही है पर इस लड़की का त्याग देखो। त्याग और धर्म की ऐसी भावना हिन्दू नारी के अतिरिक्त संसार में कहीं सम्भव नहीं है। मैं मानता हूँ तुम भी असाधारण देशभक्त और वीर आदमी हो। तुमने अपना जीवन देश के लिए बलिदान किया है। तुम्हारी गिरफ्तारी के समय मैं बड़े ध्यान से पत्रों में सब समाचार पढ़ता रहता था। मैं नेहरू परिवार के लोगों, विजयलक्ष्मी और श्यामकुमारी को भी जानता हूँ, परंतु मैं सोचता हूँ, इस लड़की को तुमसे शादी करने से मिलेगा क्या? उसका तो यह असाधरण त्याग आदर्श है। हिन्दू धर्म और हिन्दुस्तान आज भी जो मर नहीं गया तो ऐसी ही देवियों के धर्म और आचारबल से। मुझे तो यही संतोष है कि मुझे ऐसी देवी के दर्शन करने का अवसर मिलेगा।"[36] जेल में विवाह हो सकता है या नहीं इस संबंध में कोई स्पष्ट कानूनी नियम न होने की स्थिति में विवाह की अनुमति दे दी गयी। अत: 7 अगस्त, 1936 ई. को उन दोनों का विवाह सम्पन्न हुआ।[37] यह विवाह अंग्रेजी राज में घटित एक ऐतिहासिक घटना के रूप में दर्ज हुई और जेल कानून में एक ऐसी धारा जोड़ी गयी, जिसके तहत जेल जीवन में कोई भी कैदी शादी नहीं कर सकेगा।[38]

शादी के बाद कुछ ही दिनों में यशपाल गम्भीर रूप से बीमार पड़े। इस कारण सजा की अवधि पूरी होने के सात-आठ वर्ष पहले ही 2 मार्च 1938 को उन्हें रिहा कर दिया गया।[39]

देहवासन- यशपाल के शरीर में बचपन से ही कई रोगों ने अपना घर बना लिया था, जो ताउम्र उनके साथ रहा। इन रोगों से लड़ते हुए 26 दिसम्बर, 1976 को उनकी मृत्यु हो गई।[40]

यशपाल का रचनात्मक समकाल:

हिन्दी साहित्य को नयी दिशा प्रदान करने वाले साहित्यकारों में यशपाल का स्थान महत्वपूर्ण है। यशपाल का रचनाकाल 1939 से 1974 तक फैला हुआ है, जो हिन्दी उपन्यास के इतिहास में प्रेमचंदोत्तर हिन्दी उपन्यास का दौर है। यशपाल के लेखन का आरंभिक युग भारत की गुलामी का युग था। यह असल में भारतीय समाज के संक्रमण का दौर था। एक ओर जहाँ भारतीय समाज तमाम किस्म की रूढ़ियों, अंधविश्वास, जातिवाद और अस्पृश्यता आदि से ग्रस्त था, वहीं दूसरी ओर यह भारतीय नवजागरण का दौर भी था जिसमें लोकतांत्रिक प्रगतिशील मूल्यों का प्रसार तेज़ी से हो रहा था। भारतीय नवजागरण के पुरोधाओं का एक तबका मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित था। यशपाल भी उन्हीं में से एक थे। हालाँकि प्रेमचंद ने अपने कथा साहित्य में जिस सामाजिक यथार्थवाद की नींव डाली आगे चलकर यशपाल ने भी उसी का प्रसार किया। मार्क्सवाद से प्रभावित होने के कारण यशपाल के साहित्य में नैतिक मान्यताओं की प्रतिष्ठा, शोषण एवं रूढ़ि के प्रति विद्रोह, समतामूलक समाज की स्थापना, उपेक्षितों और असहायों के प्रति सहानुभूति, आदि साफ तौर पर दिखाई देती है। इनकी कहानियों के संबंध में राजेंद्र यादव लिखते हैं- "यशपाल ने मार्क्सवादी दृष्टि से एक के बाद एक सशक्त कहानियाँ लिखीं। उन्होंने समाज के परंपरागत मूल्यों और रूढ़ियों के विरुद्ध व्यंग्य और युक्ति के हथियारों से तीखे प्रहार किये। जिस निर्भीकता से उन्होंने अंग्रेजी राज्य के खिलाफ 'साग' जैसी कहानियाँ लिखीं, उसी निर्भीकता से धर्म और पुरानी नैतिक मान्यताओं के विरुद्ध 'मनु की

लगाम', धर्मरक्षा, 'ज्ञानदान', 'प्रतिष्ठा का बोझ', 'दूसरी नाक' इत्यादि भी।"[41] उनके द्वारा रचित उपन्यास 'दादा कामरेड' सन् 1941 ई. में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास उन्होंने अपने क्रांतिकारी जीवन के अनुभवों पर लिखा है। इस उपन्यास में उन्होंने नायिका शैल और नायक हरीश के माध्यम से स्त्री-पुरुष के स्वच्छंद प्रेम को भी दर्शाया है। इसी तरह 'पार्टी कामरेड' उपन्यास में उन्होंने तत्वकालीन राजनैतिक आंदोलन के दौरान कम्युनिस्टों पर लगाये गये आरोपों का खण्डन किया है।

यशपाल के अलावा अमृतराय और रांगेय राघव इस दौर के ऐसे कहानीकार हैं, जिन्होंने प्रगतिशील कहानियों की रचना की। रांगेय राघव ने बंगाल के अकाल, देश-विभाजन, सांप्रदायिक द्वेष, मजदूरों के देशव्यापी हड़ताल, बेरोजगारी आदि को अपनी कहानियों का विषय बनाया। 'गदल', 'पंच परमेश्वर', 'कुत्ते की दुम' आदि रांगेय राघव की उल्लेखनीय कहानियाँ हैं। इसी तरह 'हजार मन राख और एक चिनगारी', 'गीली मिट्टी', 'एक गुमनाम आदमी' और 'तिरंगे कफन' आदि अमृतराय की प्रमुख कहानियाँ है। इन कहानियों में निम्न एवं सर्वहारा वर्ग के प्रति सहानुभूति एवं उनके साथ हुए अन्याय के प्रति विद्रोह दिखाई देता है।

इस दौर में मनोविश्लेषणपरक कथा-साहित्य भी लिखा गया। जैनेन्द्र, इलाचंद्र जोशी, अज्ञेय इस धारा के प्रमुख साहित्यकार हैं। इन साहित्यकारों पर फ्रॉयड के मनोविश्लेषणावाद का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। जैनेन्द्र ने अपनी कहानियों में मानव मन के अंतर्द्वंद्व के चित्रण के द्वारा मानवीय उदात्त भावनाओं को अभिव्यक्त किया है। 'पाजेब', 'जाह्नवी', 'ग्रामफोन का रिकार्ड', आदि इनकी प्रमुख कहानियाँ हैं। उन्होंने इन कहानियों में व्यावहारिक मनोविज्ञान का सहारा लिया है। साथ ही मनोवैज्ञानिक वास्तविकता के चित्रण के जरिए उन्होंने समाज की कुरीतियों एवं कुसंस्कारों के प्रति

विद्रोह की भावना भी पैदा की। 'पाजेब' बाल मनोविज्ञान पर आधारित कहानी है। इसके अलावा उन्होंने मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों की भी रचना की है, जिनमें 'परख'(1929), 'त्यागपत्र' (1937), 'सुनिता'(1935), 'कल्याणी'(1939), आदि प्रमुख हैं। 'परख' और 'सुनीता' प्रेमचंद युगीन उपन्यास हैं। इन उपन्यासों के जरिए जैनेन्द्र ने प्रेमचंद युगीन उपन्यास लेखन को एक नयी दिशा प्रदान की। 'त्यागपत्र' और 'कल्याणी' प्रेमचंदोत्तर दौर के प्रमुख उपन्यास हैं। इन उपन्यासों में पात्रों के मन की उलझनों, शंकाओं और गुत्थियों को कथा के माध्यम से व्यक्त किया गया है। 'त्यागपत्र' में मृणाल के आत्मपीड़न के मनोवैज्ञानिक की औपन्यासिक अभिव्यक्ति जैनेन्द्र ने की है।

इस धारा के दूसरे उपन्यासकार इलाचंद्र जोशी ने 'संन्यासी' (1941), 'पर्दे की रानी' (1942), 'प्रेत और छाया'(1944), 'निर्वासित'(1946), आदि उपन्यासों में मानव मन की दमित वासनाओं, कुंठाओं, इच्छाओं, अहंकार, अर्धचेतन अवस्था, आदि का चित्रण किया है।

इस धारा के तीसरे महत्वपूर्ण साहित्यकार अज्ञेय ने भी व्यक्ति मन की कुंठाओं और दमित वासानाओं का चित्रण साहित्य में किया है। साथ ही उन्होंने व्यक्ति के आत्मसंघर्ष एवं उसके परिवेश का चित्रण भी किया है। उनकी कहानियों में अस्तित्ववादी दर्शन का प्रभाव भी दिखाई देता है। उनके द्वारा रचित कहानियों में 'विपथगा', 'कोठरी की बात', 'जयदोल', 'गैंग्रीन', 'मेजर चौधरी की वापसी', 'शरणार्थी', आदि अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। 'शेखर: एक जीवनी'(दो भाग), 'नदी के द्वीप' और 'अपने अपने अजनबी' उनके प्रमुख उपन्यास हैं। 'शेखर: एक जीवनी' शेखर के माध्यम से मूलतः व्यक्ति विशेष के मनोविज्ञान और उसके व्यक्ति-स्वातंत्र्य की समस्या पर केन्द्रित है। 'नदी के द्वीप' भी एक मनोवैज्ञानिक

उपन्यास है, जिसमें स्त्री-पुरुष के यौन संबंधों के जरिए जीवन को व्याख्यायित करने का प्रयास अज्ञेय ने किया है। 'अपने अपने अजनबी' उपन्यास पर अस्तित्ववादी दर्शन का साफ प्रभाव दिखाई पड़ता है।

प्रेमचंदोत्तर युग में प्रगतिवादी और मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों के साथ-साथ ऐतिहासिक उपन्यास भी रचे गए। इस तरह के उपन्यासकारों में वृंदावन लाल वर्मा, चतुरसेन शास्त्री, राहुल सांकृत्यायन, हजारीप्रसाद द्विवेदी, आदि का नाम उल्लेखनीय है। इस युग के ऐतिहासिक उपन्यासों में भारतीय इतिहास के उन प्रसंगों की पुनर्रचना की गई है, जिनसे वर्तमान को नई दिशा एवं प्रेरणा मिल सके। ऐतिहासिक उपन्यासकारों में वृन्दावन लाल वर्मा को विशेष ख्याति प्राप्त हुई। 'गढ़कुंडार', 'विराटा की पद्मिनी', 'झाँसी की रानी', आदि उपन्यासों में ऐतिहासिक घटनाओं के माध्यम से उन्होंने राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना के प्रसार का काम किया। इसी तरह हजारीप्रसाद द्विवेदी का प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास है-'बाणभट्ट की आत्मकथा'। भारतीय संस्कृति का संश्लिष्ट चित्रण प्रस्तुत करने वाले उपन्यासकार चतुरसेन शास्त्री द्वारा रचित 'वैशाली की नगरवधू' में बौद्धकालीन संस्कृति का सजीव चित्रण मिलता है। यशपाल द्वारा रचित 'दिव्या' भी एक ऐतिहासिक उपन्यास है,जिसमें बौद्धकालीन वर्ण-व्यवस्था और उससे उत्पन्न संघर्ष का चित्रण है। इसमें यशपाल का मार्क्सवादी दृष्टिकोण भी परिलक्षित होता है। राहुल संस्कृत्यायन के ऐतिहासिक उपन्यासों में भी उनकी मार्क्सवादी जीवन दृष्टि दिखाई पड़ती है। 'सिंह सेनापति', 'जय यौधेय', 'मधुर स्वप्न' और 'विस्मृत यात्री' उनके ऐतिहासिक उपन्यास हैं। 'सिंह सेनापति' उपन्यास में जहाँ लिच्छवी-गणतंत्र की सामाजिक व्यवस्था एवं दशा का

वर्णन किया गया है, वहीं 'जय यौधेय' में यौधेय गणतंत्र की राजनैतिक, आर्थिक एवं सामाजिक दशा का वर्णन किया गया है।

1950 ई. के बाद यशपाल की 'उत्तराधिकारी', 'चित्र का शीर्षक', 'तुमने क्यों कहा था मैं सुंदर हूँ!', 'उत्तमी की माँ', 'ओ भैरवी',आदि कहानियाँ प्रकाशित हुईं। स्वतंत्रता के पश्चात् कथासाहित्य के क्षेत्र में पर्याप्त बदलाव आए। इसके प्रमुख कारण थे देश का विभाजन व सांप्रदायिक दंगे, स्वाधीनता के दौरान देखे गये स्वप्नों का बिखराव और इससे उत्पन्न व्यक्ति मन के अंतर्द्वंद्व, निराशा, कुंठा, संत्रास, जीवन मूल्य का विघटन, अकेलापन, स्त्री-पुरुष संबंधों में परिवर्तन आदि। इस दौर में कुछ ऐसे नए साहित्यकार उभरे जिन्होंने इस सबको अपने कथासाहित्य की विषयवस्तु बनाया।

कहानी के क्षेत्र में स्वातंत्र्योत्तर कहानियाँ विषय एवं शिल्प की दृष्टि से अपनी पूर्ववर्ती कहानियों से भिन्न हैं। इस दौर के कहानीकारों ने पूर्वग्रहों से मुक्त होकर जीवन के यथार्य को देखने एवं समझने का प्रयास किया। 'नयी कहानी' के साथ 'नयी' विशेषण महज पूर्ववर्ती कहानी से पार्थक्य दर्शाने के लिए ही प्रयुक्त नहीं हुआ, अपितु कहानी की नयी संवेदना, नयी दृष्टि, आदि को रेखांकित करने के लिए भी हुआ था। आगे चलकर हिन्दी कविता की ही तरह हिन्दी कहानी के क्षेत्र में भी अकाहानी, सचेतन कहानी, सक्रिय कहानी, आदि कई छोटे-छोटे आंदोलन हुए, जिसने हल्के-फुल्के ढंग से हिन्दी कहानी के स्वरूप को प्रभावित किया। 'नई कहानी' के कहानीकारों में राजेंद्र यादव, मोहन राकेश, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा सबसे महत्वपूर्ण हैं। इन साहित्यकारों ने बदलते हुए यथार्थ और नये अनुभव संबंधों की प्रामाणिकता पर बल दिया। फणीश्वरनाथ रेणु, धर्मवीर भारती, अमरकांत, उषा प्रियवंदा, मन्नू भंडारी, आदि जैसे कहानीकारों ने अपने युग के यथार्थ का

मार्मिक चित्रण कर नयी कहानी आंदोलन को और तीव्र किया। इस दौर में नगरीय जीवन बोध और यौन समस्याओं को चित्रित करने वाली कहानियों के साथ-साथ ग्रामीण अंचल की कहानियाँ भी लिखी जा रही थीं।

ग्रामीण अंचल के कहानीकारों में शिवप्रसाद सिंह, मार्कण्डेय और फणीश्वरनाथ रेणु के नाम प्रमुख हैं। 'आर पार की माला', 'मुर्दा सराय', 'इन्हें इंतज़ार है' आदि शिवप्रासाद सिंह के प्रमुख कहानी-संग्रह हैं। उन्होंने उपेक्षित, शोषित, दलित एवं पीड़ित ग्रामीण जनता को केंद्र में रखकर कहानियों की रचना की। मार्कण्डेय ने अपने प्रमुख कहानी-संग्रह है 'महुए का पेड़', 'हंसा जाई अकेला', 'भूदान', आदि में ग्रामीण समाज के यथार्थ और गांव में उत्पन्न हुए जाति-वर्ग संघर्ष को चित्रित किया है। फणीश्वरनाथ रेणु की कहानियाँ ग्रामीण जीवन को उसकी समग्रता में, उसके हर्ष-शोक, राग-विराग के साथ विशिष्ट ढंग से चित्रित करती हैं।

इस दौर की कहानियों में नगरीय बोध की प्रवृत्ति दिखाई देती है। नगरीय जीवन की विसंगतियाँ, जैसे सतही सहानुभूति, स्वार्थपरता, जीवन की कृत्रिमता, आदि का चित्रण नगरीय जीवन बोध की कहानियों में मिलता है। राजेंद्र यादव की 'अभिमन्यु की आत्महत्या', कमलेश्वर की 'खोई हुई दिशाएँ', 'जोखिम', 'कस्बे का आदमी', उषा प्रियवंदा की 'वापसी', निर्मल वर्मा की 'परिंदे', 'लंदन की एक रात', ज्ञानरंजन की 'फेंस के इधर-उधर', आदि नगरीय जीवन बोध की प्रमुख कहानियाँ हैं।

भारत विभाजन को लेकर मोहन राकेश ने इस दौर में एक अत्यंत महत्वपूर्ण कहानी लिखी- 'मलबे का मालिक'। इस कहानी में मोहन राकेश ने विभाजन के समय हुए सांप्रदायिक संघर्ष, मारकाट, डर, त्रास, घृणा, आदि को चित्रित किया है।

प्रेम-विवाह के कटु-मधुर संबंधों का चित्रण भी इस दौर के कहानीकारों ने अपनी कहानियों में किया है। कमलेश्वर का 'बयान', 'राजा निरबंसिया', राजेंद्र यादव का 'टूटना', मनु भंडारी का 'यही सच है' आदि इस तरह की प्रमुख रचनाएँ हैं।

सन् 1960 के बाद की कहानियों को साठोत्तरी कहानी की संज्ञा दी गयी है। इसी दौर में यशपाल के कुछ और कहानी-संग्रह- 'सच बोलने की भूल', 'खच्चर और आदमी', 'भूख के तीन दिन', 'लैम्प शेड' आदि प्रकाशित हुए। इन कहानियों में वे अपनी पूर्ववर्ती परपरा की रक्षा करते हुए दिखाई देते हैं।

1960 के आस-पास यशपाल के दो अत्यंत महत्वपूर्ण उपन्यास प्रकाशित हुए। पहला 'अमिता'(1956) और दूसरा 'झूठा सच' (प्रथम खंड- 1958 तथा द्वितीय खंड- 1960)। 'अमिता' एक ऐतिहासिक उपन्यास है। 'झूठा सच' उपन्यास भारत विभाजन को केंद्र में रखकर लिखा गया वृहद् उपन्यास है। इस उपन्यास में स्वतंत्रता-पूर्व और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की परिस्थितियों, जीवन दशाओं, समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया गया। यशपाल के अलावा भी कुछ ऐसे साहित्यकार हैं, जिन्होंने विभाजन की त्रासदी पर आधारित उपन्यास लिखे। राही मासूम रज़ा का 'आधा गाँव', भीष्म सहानी का 'तमस', जगदीशचंद्र का 'मुठ्ठी भर काँकर', कमलेश्वर का 'कितने पाकिस्तान' आदि इसी तरह के उपन्यास हैं।

इस दौर में कुछ आंचलिक उपन्यासकार भी उभरकर सामने आए। फणीश्वरनाथ 'रेणु', देवेंद्र सत्यार्थी, रांघेय राघव, उदय शंकर भट्ट, आदि इस विधा के प्रमुख उपन्यासकार हैं। 'रेणु' के उपन्यास 'मैला आँचल' और 'परती परिकथा' ने विशेष ख्याति पाई। 'रथ के पहिए'(1953 ई.), ब्रह्मपुत्र (1956 ई.), आदि देवेंद्र सत्यार्थी के प्रमुख उपन्यास हैं। उदय

शंकर भट्ट ने 'सागर लहरें और मनुष्य' में बम्बई के समीपवर्ती बरसोवा गाँव के मछुआरों की जीवन गाथा को चित्रित किया है।

सन् 1960 के बाद यशपाल के चार अन्य उपन्यास प्रकाशित हुए- 'बारह घंटे', 'अप्सरा का शाप', 'क्यों फँसें' और 'मेरी तेरी उसकी बात'। 'बारह घंटे' उपन्यास में यशपाल ने प्रेम संबंधी परंपरागत नैतिक मान्यताओं का खण्डन कर अपने मार्क्सवादी दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है। 'अप्सरा का शाप' में शंकुतला और दुष्यंत के पौराणिक आख्यान को उन्होंने नवीन दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया है। 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान गुप्त आंदोलनकारियों की गतिविधियों का वर्णन किया गया है।

इस दौर के उपन्यासों में एक नयी प्रवृत्ति उभरती हुई दिखाई देती है, जिसे आधुनिकतावाद कहा जाता है। इस प्रवृत्ति के प्रमुख उपन्यासकारों में मोहन राकेश, राजेंद्र यादव, निर्मल वर्मा, धर्मवीर भारती, श्रीकांत वर्मा, कमलेश्वर आदि प्रमुख हैं। मोहन राकेश ने 'अंधेरे बंद कमरे' उपन्यास में जहाँ दिल्ली के अभिजातवर्गीय दाम्पत्य जीवन और उसकी विसंगतियों को दर्शाया है, वहीं 'अंतराल' उपन्यास में स्त्री-पुरुष संबंधों की जटिलता को दर्शाया है। 'वे दिन', 'लालटीन की छत', 'एक चिथड़ा सुख', आदि निर्मल वर्मा के प्रमुख उपन्यास हैं, जिनमें अकेलापन, विजातीयता की अनुभूति, महायुद्ध के संत्रास, जीवन की व्यर्थता के बोध, आदि को दर्शाया गया है।

इस दौर के उपन्यासों को समृद्ध करने में स्त्री रचनाकारों का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा। इस दौर की स्त्री कथाकारों में मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा, मृदुला गर्ग,

कृष्णा सोबती, आदि महत्वपूर्ण हैं। 'आपका बंटी' और 'महाभोज' मन्नू भंडारी द्वारा रचित प्रसिद्ध उपन्यास हैं। उषा प्रियंवदा ने 'पचपन खम्भे लाल दीवारें', 'रुकोगी नहीं राधिका', 'शेषयात्रा' आदि उपन्यासों की रचना की। 'पचपन खम्भे लाल दिवारें' उपन्यास में उन्होंने एक मध्यवर्गीय स्त्री को केंद्र में रखकर आधुनिक स्त्री की मानसिक यंत्रणा को दर्शाया है। 'सूरजमुखी अंधेरे के' और 'जिंदगीनामा' कृष्णा सोबती के इस दौर में प्रकाशित महत्वपूर्ण उपन्यास हैं। 'सूरजमुखी अंधेरे के' उपन्यास में कृष्णा सोबती ने नारी जीवन की मनोवैज्ञानिक समस्या को उठाया है। 'जिंदगीनामा' में पंजाब की विगत शती की जिंदगी का सम्पूर्ण ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है। इसी दौर में प्रकाशित 'उसके हिस्से की धूप', 'वंशज', 'चित्तकोबरा', आदि मृदुला गर्ग के प्रमुख उपन्यास हैं।

कुल मिलाकर यशपाल का रचनात्मक समकाल आज़ादी के ठीक पहले से लेकर आठवें दशक के पूर्वार्द्ध तक विस्तृत रहा। यह हिन्दी कथा साहित्य के लिहाज से अत्यंत समृद्ध दौर रहा है, जिसमें हिन्दी कहानी और उपन्यास ने नई ऊँचाइयाँ हासिल कीं। कथ्य और शिल्प के प्रति रचनाकारों की गंभीरता के साथ-साथ कथ्य और शिल्प की विविधता भी इस दौर में पर्याप्त दिखाई पड़ती है। छोटे-बड़े अनेक साहित्यिक आंदोलनों ने भी इस दिशा में अपनी-अपनी भूमिका निभाई। स्वयं यशपाल के कथा लेखन में भी पर्याप्त विविधता दिखाई पड़ती है। निश्चित रूप से अपने युग के लेखन से यशपाल लगातार समृद्ध होते रहे। और, ठीक इसी तरह अपने युग के लेखन को भी यशपाल ने समृद्ध किया।

1.2 यशपाल की लेखकीय चेतना का निर्माण

साहित्य रचना के लिए प्रेरणा की अनिवार्यता को नकारा नहीं जा सकता। प्रेरणा के बिना साहित्य की रचना असम्भव है। चाहे कोई भी साहित्यकार हो, वह किसी-न-किसी भावना से प्रेरित एवं प्रभवित होकर ही साहित्य की रचना करता है। सभी साहित्यकारों के लिए प्रेरणाएँ एक जैसी नहीं होतीं। कोई प्रकृति की सुंदरता एवं कोमलता से प्रेरित होकर साहित्य रचता है, तो कोई प्रेम या अपने युग के राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक वातावरण से प्रेरित होकर साहित्य की रचना करता है।

यशपाल को बचपन से ही साहित्य रचना का शौक था। जब वे गुरुकुल में थे, वहाँ के शांत वातावरण में उन्होंने अपनी पहली कहानी 'अंगूठी' लिखी।[42] उन्हें शिक्षकों की वाहवाही मिली और वे प्रोत्साहित हुए। उसके बाद नेशनल कॉलेज में पढ़ाई के दौरान हिन्दी के शिक्षक विख्यात साहित्यकार उदयशंकर भट्ट ने उन्हें साहित्य रचना के लिए प्रोत्साहित किया। वे छोटे-छोटे गद्य-काव्य लिखकर 'प्रभा' एवं 'प्रताप' पत्रिका में प्रकाशित कराते रहते थे।[43] फिर एक लम्बी अवधि के बाद कारावास जीवन में उन्होंने बुलेट को छोड़कर बुलेटिन को अपनाया। जब वे नैनी जेल में थे, उस दौरान वे मन्मथनाथ गुप्त, शचीन्द्रनाथ सन्याल, जोगेशचन्द्र चैटर्जी के साथ मिलकर प्रत्येक रविवार को साहित्यिक चर्चा करते थे। उस दौरान उन्होंने अपनी 'मक्रील' और 'पहाड़ की स्मृति' जैसी कहानियाँ उन लोगों को सुनायी। उनकी इस कहानियों की उन्मुक्त प्रशंसा की गयी। अपनी कहानियों की प्रशंसा सुन वे अधिक प्रोत्साहित हुए और लेखन के प्रति अधिक सजग हुए।[44]

यशपाल के साहित्य पर भारतीय एवं पाश्चात्य साहित्यकारों का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। भारतीय साहित्यकारों में प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, रवींद्रनाथ टैगोर, बंकिमचंद्र चटर्जी, स्वामी दयानंद सरस्वती आदि का प्रभाव उनपर दिखाई देता है। इस

संदर्भ में वे स्वंय कहते हैं-"भारतीय लेखकों में, कवि रवींद्रनाथ टैगोर, मुंशी प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद तथा बंकिमचंद्र चटर्जी से मैं प्रभावित हूँ, बंकिमचंद्र चटर्जी बाबू को अपनी श्रद्धांजलि भेंट करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ क्योंकि हास्य रस की रचनाओं की प्रेरणा मुझे उनकी रचना 'चौबेजी का चिट्ठा' पढ़कर ही मिली थी एवं मेरी हास्यप्रधान-पुस्तक 'चक्कर-क्लब' इसी का परिणाम है। मैं बंकिमबाबू का बड़ा देनदार हूँ।"[45] पाश्चात्य साहित्यकारों में प्रमुखत: एक ओर जहाँ अंग्रेजी लेखक ऑस्कर वाइल्ड और बर्ट्रेण्ड रसेल एवं फ्रेंच कवि-उपन्यासकार अनातोले फ्राँस और वोल्टेयर का प्रभाव दिखाई देता है, वहीं दूसरी ओर रूसी लेखक मेरिया और चेखव का। इसका प्रमुख कारण यह है कि जेल में रहते हुए उन्होंने अंग्रेजी, रूसी व फ्रांसीसी भाषा की अनेक किताबें पढ़ी थीं।

उनके साहित्य पर सबसे ज्यादा प्रभाव कार्ल मार्क्स का दिखाई पड़ता है। दरअसल नैनी जेल में उनकी मुलाकात कम्युनिस्ट नेता शिवसिंह से हुई थी। उन्हीं से प्रभावित होकर वे मार्क्सवाद की ओर झुके। इस संदर्भ में यशपाल खुद कहते हैं-"नैनी सेण्ट्रल जेल बारक में ही नहीं, मेरी भावी साहित्यिक साधना या कथायात्रा पर भी नैनी में शिवसिंह की संगति का विशेष प्रभाव पड़ा।...अलबत्ता शिवसिंह की संगति में अध्ययन से समाजवाद या मार्क्सवाद के संबंध में मेरे विचारों के सुलझाव और उसके प्रति झुकाव में बहुत सहायता मिली। आलोचक यह प्रभाव मेरी सम्पूर्ण कथायात्रा पर पाते हैं। शायद कुछ पाठक मेरे उपन्यास 'देशद्रोही' के सोवियत से लौटे नायक डॉक्टर खन्ना में शिवसिंह की छाया और उपन्यास के चित्रणों में शिवसिंह से सुने वृत्तों की 'कल्पना' करें; यह तथ्य न होगा। अलबत्ता 'देशद्रोही' लिखने के लक्ष्य पर शिवसिंह की संगति का प्रभाव है।"[46]

यशपाल फ्रॉयड से भी प्रभावित थे। उनके 'अमिता' उपन्यास और कुछ दूसरी रचनाओं पर फ्रॉयड का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। उनके साहित्य में पाश्चात्य

साहित्यकारों के प्रभाव को देखकर कुछ लोग इन पर भारतीय-संस्कृति की उपेक्षा का आरोप भी लगाते हैं। उन सब के प्रत्युत्तर में यशपाल कहते है- "संस्कृति और ज्ञान भौगोलिक रूप और जातीय सीमाओं में बँधी रहने वाली वस्तुएँ नहीं हैं। उनका विकास जीवन के भौतिक रूप से और कम होता है। नवीन विचारधाराओं और ज्ञान को अपना लेने से हमारी संस्कृति का क्षय नहीं होगा अपितु समृद्धि होगी। सजीव समाज की संस्कृति प्रवाहशील नदी के समान होती है जिसमें प्रतिक्षण नया जल बहता है, परंतु उससे नदी का नाम और अस्तित्व नहीं बदल जाता।"[47]

यशपाल के क्रांतिकारी जीवन की भाँति साहित्यिक जीवन में भी उनकी पत्नी प्रकाशवती जी का प्रभाव अविस्मरणीय है। जेल से रिहाई के पश्चात् यशपाल ने जब 1938 से 'विप्लव' का प्रकाशन आरंभ किया, उस दौरान उनकी पत्नी प्रकाशवती जी ने कार्यालय का सम्पूर्ण दायित्व खुद के कंधों पर ले लिया एवं 'विप्लव' पत्रिका के वार्षिक ग्राहक और एजेंट निश्चित करने के लिए पंजाब गयीं। वहाँ से वे तीन सप्ताह में दो और अंक प्रकाशित करने लायक पूँजी लेकर आयीं।[48] वे कार्यालय के भार के साथ-साथ घर का काम भी बखूबी संभालती थीं। पत्नि प्रकाशवती के सहयोग और प्रभाव को स्वीकार करते हुए यशपाल कहते हैं- "उनकी सम्मति अथवा आलोचना का भी मुझ पर प्रभाव पड़ता है। यह निर्विवाद है कि सृजन के लिए अवसर देने में और उसका प्रकाशन करने में वे महत्वपूर्ण सहायक रही हैं।"[49]

यशपाल एक ऐसे साहित्यकार हैं, जिन्होंने अपने समय की राजनैतिक, सामाजिक परिस्थितियों से प्ररित एवं प्रभावित होकर साहित्य की रचना की है। यशपाल के लेखन का बिल्कुल आरंभिक युग गुलामी का युग था। ब्रिटिश सरकार द्वारा भारतीय जनता पर अत्याचार लगातार बढ़ता जा रहा था, जिससे भारतीय जनता के एक बड़े हिस्से में निराशा एवं कुंठा व्याप्त हो रही थी। लेकिन दूसरी ओर कुछ ऐसे लोग भी थे, जो

अहिंसात्मक या क्रांतिकारी आंदोलनों द्वारा जनता में जागृति फैलाने एवं अंग्रेजी सरकार को देश से खदेड़ने का अथक प्रयास कर रहे थे। यशपाल उन्हीं लोगों में से एक हैं, जिन्होंने क्रांतिकारी आंदोलन में खूब बढ़-चढ़ कर महत्वपूर्ण योगदान दिया। यशपाल सक्रिय क्रांतिकारी राजनीति से साहित्य की ओर आये, इसलिए यह बहुत स्वाभाविक है कि वे तत्कालीन समय की राजनैतिक गतिविधियों के आधार पर अपने साहित्य की रचना करते हैं। जेल से रिहा होने के पश्चात् भले ही उन्होंने सक्रिय राजनीति छोड़ दी, परन्तु इसका यह मतलब कतई नहीं है कि देश एवं समाज के प्रति अपने कर्तव्यों को उन्होंने तिलांजलि दे दी। वे अपनी ज़िम्मेदारी हथियार की जगह कलम से निभाते हैं। इस संबंध में अपनी आत्मकथा में यशपाल लिखते हैं-"राजनीति से सम्पर्क छोड़ देने का मतलब अपने देश और समाज की वर्तमान अवस्था और भविष्य से कोई सम्पर्क न रखना है। ऐसा वैरागी मैं नहीं हूँ। जेल से छूटने के बाद से मेरे विद्यार्थी जीवन की और जेल में दुबारा पोसी हुयी भावना फिर जाग उठी थी। निश्चय कर लिया था, मुझे जो कुछ भी करना है, साहित्य के साधन से ही करूँगा। विद्यार्थी जीवन के समय विदेशी शासन की उत्तेजक परिस्थितियों का प्रभाव कहिये या अपने तत्कालीन साथियों भगवतीचरण, भगतसिंह, सुखदेव आदि के बलिदान हो जाने के लिये आगे बढ़ जाने के निश्चय का मुझ पर प्रभाव मानिये कि वे खींच ही ले गये। मुझे संतोष है, उस समय उनकी संगति में किये गये निश्चय को निबाहने का पूरा यत्न किया। जेल से मुक्ति के पश्चात् जीवन का दूसरा अध्याय आरंभ हुआ। जान पड़ता है, वैयक्तिक प्रकृति से मेरा झुकाव, कई अन्य क्रांतिकारी साथियों की तरह, पिस्तौल के बजाये कलम की ओर था। अब अपना काम साहित्य के माध्यम से कर रहा हूँ।"[50]

अपने क्रांतिकारी जीवन में मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित होने के कारण उनके साहित्य पर इस विचारधारा का गहरा और साफ प्रभाव दिखाई देता है। यशपाल मार्क्सवाद के प्रति समर्पित होकर मार्क्सवादी विचारधारा को साहित्य की पृष्ठभूमि के रूप

में विकसित करने की कोशिश करते हैं। इस संबंध मे यशपाल स्पष्ट रूप से कहते हैं कि-"मैं अपनी व्यक्तिगत शक्ति को आंदोलन के क्रियात्मक काम में लगाने की अपेक्षा लेखक के तौर पर इस काम के लिए भावना, क्षेत्र और पृष्ठभूमि तैयार करने में अधिक उपयोगी हो सकता हूँ।"[51]

साहित्यकार सामाजिक व्यक्ति होने के नाते समाज का प्रमुख अंग होता है। समाज से प्राप्त संवेदनाओं को ही साहित्य के माध्यम से व्यक्त करना उनका दायित्व होता है। यशपाल साहित्य के जरिए अपने इस दायित्व को सफलातापूर्वक निभाते हैं। इस संबंध में वे लिखते हैं- "लिखने की प्रेरणा के लिए मुख्य स्त्रोत समाज के प्रति मेरा देय है। समाज का अंग होने के नाते अपने जीवन में या अपने आस-पास में जो अंतर्विरोध देखता हूँ, उसकी ओर विद्रूपमय लक्ष्य करके लिखता हूँ। कुछ हद तक मेरी चित्रकारी करने की अतृप्त प्रवृत्ति का भी इसमें योग है।"[52] अत: यशपाल अपने समाज की समसामयिक परिस्थितियों को बहुत ही निकट से देखा, सोचा, समझा था। जीवन के इन्हीं मधुर-कटु अनुभवों ने उन्हें साहित्य की ओर उन्मुख किया और समाज के प्रति कर्तव्य की यह भावना एवं अतृप्ति उनके लिए साहित्य रचना की प्रेरणा स्त्रोत बनी। इसके साथ ही समाज के शोषित वर्ग की दयनीय अवस्था, समाजिक विषमता, रूढ़ियाँ, अंधविश्वास, आदि ने भी उनके लेखकीय व्यक्तित्व और साहित्य को प्रभावित किया। वे अपने साहित्य के माध्यम से एक बेहतर वर्गहीन समाज की संकल्पना प्रस्तुत करते हैं और सामाजिक शोषण एवं आर्थिक विषमता के प्रति चेतना पैदा करने का प्रयास करते हैं। यशपाल लिखते हैं- "मनुष्य रूढ़ि, परम्परा, अंधविश्वास, अज्ञान और कुंठा का पुँज बन गया है। आर्थिक और सामाजिक दबाव से शोषक समाज ने उसकी मूल चेतना और उसके जीवन के बीच एक अनुर्वर पठार बना दिया है, जहाँ कोई बीज नहीं उगता। लाख जोतिए, बोइए, श्रम कीजिए कोई लाभ नहीं। इसलीए जिन्हें जीवन प्रिय है, जो उसे बदलना चाहते हैं, उनका एक मात्र कर्त्तव्य है- उस

पठार को तोड़ना, रचना-दृष्टि और जीवन के यथार्थ के बीच पड़े धार्मिक अंधविश्वास, रूढ़ परम्परा और कुंठा की परत को जड़ से उखाड़ फेंकना।"[53]

यशपाल को कई अन्य साहित्यकारों की भाँति साहित्य-लेखन की प्रेरणा प्राकृतिक सौंदर्य से नहीं मिली, बल्कि अपने आस-पास के समाज में मौजूद मनुष्य की आशा-निराशा, दु:ख-दर्द, कुंठा-हताशा आदि से मिली। 24 जनवरी,1973 को त्रिओल (मारीशस) के 'उत्तर युवक संघ' के तत्वावधान में आयोजित सभा में सभाध्यक्ष डॉ. रामप्रकाश ने अपने भाषण में द्वीप के प्राकृतिक वैभव की यशपाल द्वारा की गयी सराहना का उल्लेख करते हुए कहा था- "हमारा सौभाग्य है कि एक महान् लेखक को हमारा द्वीप सुंदर-रमणीय लगा है। हमें आशा है कि इस द्वीप की सुषमा से पाये सन्तोष और प्रेरणा से यशपाल इस द्वीप को कोई स्थायी मूल्य की रचना दे जायेंगे।"[54] इसके प्रत्युत्तर में यशपाल ने बहुत साफ शब्दों में कहा था- "स्वीकार करता हूँ, इस द्वीप का प्राकृतिक सौंदर्य अनूठा है। विश्राम, शान्ति और स्वास्थ्यदायक परंतु प्राकृतिक शोभा से रचना के लिए प्रेरणा-स्फूर्ति पाना मेरी पहुँच से बाहर है। मैं रचना के माध्यम से अपनी बात सागर की तरंगो, नदियों, झरनों, झूमते वृक्षों, चटक चाँदनी और सुनहली किरणों को नहीं सुनाता। न मेरी प्रेरणा का स्रोत मुख्यत: प्राकृतिक शोभा है। मैं मनुष्य हूँ, मेरा संबंध मानवी सुख-दु:ख और मानवीय अनुभूतियों से है। मैं मानवीय संबंधों और संपर्कों से सुख-दु:ख, व्याकुलता, स्फूर्ति या प्रेरणा अनुभव करता हूँ और मानव समाज को सम्बोधन के लिए लिखता-बोलता हूँ।"[55]

आर्थिक परिस्थितियाँ भी साहित्यकार को साहित्य-सृजन के लिए प्रेरित करतीहैं। कुछ ऐसे भी साहित्यकार हैं जो धन के लिए लिखते हैं, परंतु यशपाल इस प्रकार के साहित्य को असंगत मानते हैं। यदि साहित्य रचना द्वारा आर्थिक समस्या भी हल हो जाती है, तो यह उनके लिए असंगत नहीं है, परंतु धन प्राप्ति के उद्देश्य से साहित्य की रचना

किया जाए, वे इसे सही नहीं मानते। यशपाल के अनुसार- "हम नहीं मानना चाहते हैं कि लेखक केवल धन के लिए लिखता है और पर्याप्त धन पा जाने पर उसे लिखने की आवशयकता नहीं रहती। कोई कारण नहीं कि गरीबी से मुक्ति लेखक की कलम रोक दे। यदि वैभव लेखक की प्रवृत्ति का दमन करता है तो उसे ठुकरा देना चाहिए। लेखक के लिए सबसे बड़ा संतोष अपनी अनुभूति को गहराई से अभिव्यक्ति दे सकना है। दमन को स्वीकार कर, दी गयी कला विकासोन्मुख नहीं हो सकती।"[56] हालाँकि यशपाल का प्रारंभिक जीवन अभावग्रस्त था। अपने लेखन से प्राप्त धन से उन्होंने भी जीवन निर्वाह किया, परन्तु धन-प्राप्ति के उद्देश्य से उन्होंने साहित्य की रचना कभी नहीं की। इस संदर्भ में वे कहते हैं- "मैं भी कहानी लिखने की प्रेरणा या इच्छा आत्मसंतोष के लिए ही अनुभव करता हूँ और कहानियों के लिए प्राप्त पारिश्रमिक से निर्वाह कर लेता हूँ। कहानी बनाने से मुझे जीवन के लिए चिंतन और प्रयत्न की इच्छा को अभिव्यक्ति दे सकने का संतोष अनुभव होता है।"[57]

यशपाल अपनी लेखकीय प्रेरणा लिए अपनी अनुभूतियों को और अंत:प्रेरणा को आवश्यक मानते हैं। इस संबंध में वे अपने निबंध 'देखा, सोचा, समझा' में लिखते हैं- "अन्त:प्रेरणा और अनुभूति, इन दोनों चीजों को मैं अपने नित्य जीवन से पृथक अनुभव नहीं करता हूँ। मैं अनुभव करता हूँ कि अमुक प्रश्न उठाया जाना चाहिए अथवा अमुक समस्या की ओर ध्यान देना या मेरे विचार में यह उत्तर होना चाहिए और मैं अपने साथियों, अपने समाज को वह बात सुनाने या सुझाने की आवश्यकता अनुभव कर लिखना जरूरी समझता हूँ। ऐसे प्रश्न, समस्याएँ और बातें मुझे इतनी अधिक दिखायी देती हैं कि लिखना मुझे सदा ही आवश्यक और स्वाभाविक जान पड़ता है। कभी कुछ दूसरे कारण रुकावट डाल देते हैं तो नहीं लिख पाता हूँ वरना लिखना तो सदा ही चाहता हूँ। लिखना मैं अपना काम समझता हूँ। जैसे दूसरों के अपने काम हैं, मेरा काम लिखना है। मैं अपना काम न करूँ, यह मुझे अस्वाभाविक और अनुचित भी जान पड़ता है।"[58] यह कहा जा सकता है कि समाज

या व्यक्ति के जीवन की किसी भी समस्या को अपनी अनुभूतियों और अंत:प्रेरणा द्वारा समझ-बूझकर वे साहित्य का निर्माण करते हैं।

यशपाल वैचारिक चुनौतियों से प्रेरणा ग्रहण कर भी साहित्य की रचना करते हैं। उन्होंने मार्क्सवादी विचारधारा को दी गयी चुनौतियाँ को स्वीकरा। उन्होंने शरतबाबू के बांग्ला उपन्यास 'पाथेरदावी' और जेनैंद्र की 'सुनीता' से प्रेरित होकर 'दादा कामरेड' उपन्यास की रचना की। वे स्वंय कहते हैं- "यह उपन्यास बंगला उपन्यास सम्राट् शरत् बाबू के प्रमुख राजनीतिक उपन्यास 'पाथेरवादी' द्वारा क्रांतिकारियों के जीवन और आदर्श के संबंध में उत्पन्न हुई भ्रामक धारणाओं का निराकरण करने के लिए लिखा गया था परंतु इतना ही नहीं यह श्री जैनेन्द्र की आदर्श नारी पुरुष की खिलौना 'सुनीता' का भी उत्तर है।"[59]

इसी संदर्भ में श्री अवधनारायण मुद्गल यशपाल के बारे में लिखते हैं- "उनके प्रेरणा स्त्रोत अक्सर चुनौतियाँ हुआ करती थी। चुनौतियाँ किसी व्यक्ति या कर्म की नहीं, रचनाशीलता और वैचारिकता की। 'दिव्या' लिखने के लिए उन्होंने 'चित्रलेखा' की रचनाशीलता की चुनौती स्वीकार की थी और 'अमिता' के लिए फिल्मी वैचारिकता और ऐतिहासिक कल्पनाशीलता की चुनौती।"[60]

यशपाल के साहित्य सृजन के प्रेरणास्त्रोत संबंधी प्रश्न के उत्तर में उनकी पत्नी प्रकाशवती जी कहती हैं- "समाज में घटित समस्याओं और मान्यताओं के अतिरिक्त वास्तविक घटनाओं के सुने हुए प्रसंगों से प्रेरणा लेकर काल्पनिक, प्लाट का निर्माण करते थे। जैसे 'भंगला' 'कोकला डकैत' आदि कहानियाँ यथार्थ घटना के आधार पर रची गई हैं।"[61]

यशपाल की रचनाशीलता के प्रेरणा स्त्रोत के संबंध में यशपाल की पुत्रवधू मीनाजी यशपाल की अनेक कहानियों के संदर्भ देकर बताती हैं कि यशपाल किस प्रकार वास्तविक घटनाओं से प्रेरणा लेकर काल्पनिक-प्लॉट का निर्माण करते थे- "'चित्र का शीर्षक' संग्रहीत कहानी 'एक सिगरेट' ऐसी ही कहानियों में से एक है जो न्यायमूर्ति घिल्डीयाल (पहाड़ी जी का भाई) द्वारा बताए एक मुकदमें की घटना पर आधारित है।"[62] साथ ही वे यह भी कहती हैं कि "पापाजी में ईश्वर प्रदत्त दिव्य शक्ति थी जो जीवन के अंत तक लिखते गये।"[63]

एक बार रणधीर रांगा ने यशपाल से प्रेरणा स्त्रोत संबंधी प्रश्न पूछा था कि "कहानी या उपन्यास लिखने की प्रेरणा आपको जीवन और जगत से सीधे मिलती है या उनके प्रति बन चुके अपने किसी दृष्टिकोण से?"[64] इसके प्रत्युत्तर में यशपाल कहते हैं- "पार्थिव अनुभूति या कहें घटना तथ्य के आधार पर मैंने बहुत कम ही लिखा है।...इसीलिए, मेरी रचनाओं की मूल ध्वनि स्वीकृत मान्यताओं और वर्तमान परिस्थितियों के अंतर्विरोध की ही रही है।"[65]

निष्कर्षत: हम यह कह सकते हैं कि यशपाल की लेखकीय चेतना के निर्माण में प्रेरणा, प्रोत्साहन एवं प्रभाव महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। हालाँकि कोई भी साहित्यकार एक ही भावना से प्रभावित या प्रेरित होकर साहित्य की रचना नहीं करता। परिस्थितियों के बदलाव के साथ उसकी प्रेरणाओं में भी बदलाव दिखाई देते हैं। इस संदर्भ में यशपाल कहते हैं- "चाहे जिस उद्देश्य से लिखा जाए, लिख पाने के लिए प्रेरणा का होना अनिवार्य ही है, लेकिन सभी अवस्थाओं और परिस्थितियों में प्रेरणा का स्रोत एक ही हो या एक जैसा हो, यह आवश्यक नहीं है। समय-समय पर प्रेरणाएँ बिल्कुल अलग ढंग की हो सकती हैं।"[66] इससे स्पष्ट होता है कि यशपाल विभिन्न परिस्थितियों, परिवेश में जीते रहे,

फलस्वरूप उनके लिए समाज की अनेक घटनाएँ, परिस्थियाँ, पात्र, आदि साहित्य के लिए प्रेरणा-स्रोत बने।

1.3 यशपाल की साहित्यिक उपलब्धि

हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में प्रेमचंद की परम्परा को विकसित एवं सुदृढ़ बनाने में जिन साहित्यकारों का योगदान रहा है, उसमें यशपाल का महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने अपने विश्वबोध एवं सर्जनात्मक शक्ति के बूते आधुनिक हिन्दी साहित्य जगत में अपनी एक अलग पहचान बनाई। प्रारंभिक जीवन में वे क्रांतिकारी दल से जुड़े रहे, फलस्वरूप उनके साहित्य में क्रांति का स्वर और तेवर स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। वे अपने समय के बेहद सचेत एवं जागरूक रचनाकार रहे हैं। उन्होंने तत्कालीन समाज में व्याप्त शोषक-शोषित वर्ग के संघर्ष, सर्वहारा वर्ग के जीवन के संघर्ष, मध्यवर्गीय व्यक्ति के मन की जटिलताओं, उनके जीवन में व्याप्त विसंगतियों, असमानताओं, आर्थिक समस्याओं आदि को अपने साहित्य की विषयवस्तु बनाया। उनका साहित्य यथार्थ की धरती पर रचा गया साहित्य है, जिसमें पीढ़ियों का संघर्ष और सामाजिक जीवन का अंतर्द्वंद्व मुखरित है। उन्होंने अपने साहित्य में नयी उभरनेवाली समानांतर दुनिया और तत्कालीन सामाजिक जीवन की समस्याओं और सच्चाईयों को उजागर किया है। उन्होंने साहित्य की विविध विधाओं जैसे- कहानी, उपन्यास, निबंध, यात्रा-वृत्तांत, अनुवाद, आत्मकथा, आदि में अपनी कलम सफलतापूर्वक चलाई। इसके साथ ही वे 'विप्लव' पत्रिका के सम्पादन कार्य से भी जुड़े रहे। उनके साहित्यिक योगदान को निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत देखा जा सकता है:

कहानी-संग्रह:

हिन्दी साहित्य जगत में यशपाल ने पहले-पहल एक कहानीकार के रूप में पदार्पण किया था। जब वे गुरुकुल कांगड़ी में थे, उस दौरान उन्होंने 'अंगूठी' नामक कहानी लिखी थी, जो उनकी सबसे पहली कहानी थी।[67] नेशनल कॉलेज में पढ़ाई के दौरान भी वे 'प्रभा'

और 'प्रताप' पत्रिका में समय-समय पर कहानी लिखा करते थे।[68] क्रांतिकारी दल में शामिल होने के पश्चात् वे अपनी लेखनी को स्थगित कर सम्पूर्ण रूप से क्रांति की ओर झुक गए। लम्बे समय के बाद, जब वे कारावास में थे, उस समय उन्होंने फिर से कहानी लिखना आरंभ किया। 1939 से लेकर 1968 तक वे लगातार कहानियाँ लिखते रहे। उन्होंने समाज की अलग-अलग समस्याओं जैसे- आर्थिक समस्या, सामाजिक समस्या, वर्ग-भेद, विवाह की समस्या, शिक्षा की समस्या, आदि को अपने कहानियों की विषयवस्तु बनाया। इन कहानियों में यशपाल ने समाज पर तीखा व्यंग्य करते हुए अपने विद्रोहात्मक दृष्टिकोण को भी उजागर किया है।

सन् 1939 ई. में प्रकाशित **'पिंजरे की उड़ान'** यशपाल का पहला कहानी-संग्रह है। इसमें कुल बीस कहानियाँ संग्रहीत हैं, जिनके शीर्षक क्रमश: इस प्रकार हैं: 1. मक्रील, 2. नीरस रसिक, 3. हिंसा, 4. समाज सेवा, 5. प्रेम का सार, 6. पहाड़ की स्मृति, 7. पीर का मज़ार, 8. दुखी- दुखी!, 9. भावुक, 10. मृत्युंजय, 11. शर्त?, 12. तीसरी चिता, 13. प्रायश्चित, 14. हृदय, 15. परायी, 16. मज़हब, 17. कर्मफल, 18. दर्पण, 19. परलोक, 20. दुख।[69] इस संग्रह की अधिकांश कहानियाँ यशपाल ने जेल में रहते समय लिखी थीं। इन कहानियों में उन्होंने रोजमर्रा के जीवन की आर्थिक एवं सामाजिक विषमताओं के मार्मिक चित्रण के साथ नारी जीवन, पहाड़ी जीवन एवं प्राकृतिक सौंदर्य का सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है।

सन् 1941 ई. में प्रकाशित **'वो दुनिया'** यशपाल का दूसरा कहानी-संग्रह है। इसमें बारह कहानियाँ संकलित हैं, जो इस प्रकार हैं- 1. संन्यासी, 2. दो मुँह की बात, 3. बड़े दिन का उपहार, 4. दूसरी नाक, 5. मोटरवाली- कोयलेवाली, 6. तूफान का दैत्य,

7. कुत्ते की पूँछ, 8. शिकायत, 9. गुडबाई, दर्दे-दिल!, 10. जहाँ हसद नहीं, 11. नयी दुनिया, 12. वो दुनिया!।[70] इस संग्रह में संगृहीत कहानियों में नारी जीवन की समस्या, सामाजिक विषमता, श्रमिक जीवन की विडंबनाएँ, आदि जैसे विषयों को समाहित किया गया है।

यशपाल द्वारा रचित तीसरा कहानी-संग्रह **'तर्क का तूफान'** 1943 में प्रकाशित हुआ। इसमें 1. निर्वासिता, 2. अपनी करनी, 3. तर्क का तूफान, 4. मेरी जीत, 5. जन सेवक, 6. उतरा नशा, 7. डायन, 8. सोमा का साहस, 9. होली नहीं खेलता, 10. कानून, 11. जादू के चावल, 12. औरत, 13. भाषा, 14. परदा, 15. राजा, और 16. तर्क का फल कुल सोलह कहानियाँ संगृहीत हैं।[71] इन कहानियों के माध्यम से यशपाल पुरानी सड़ी-गली परम्पराओं तथा रूढ़ियों को त्याग देने की प्रेरणा देते हैं।

सन् 1943में उनके द्वारा रचित चौथा कहानी-संग्रह **'ज्ञानदान'** प्रकाशित हुआ, जिसमें तेरह कहानियाँ संकलित हैं- 1. ज्ञानदान, 2. एक राज, 3. गण्डेरी, 4. कुछ समझ न सका, 5. पराया सुख, 6. 80/100, 7. या सांई सच्चे!, 8. जबरदस्ती, 9. हलाल का टुकड़ा, 10. मनुष्य, 11. बदनाम, 12. दु:ख का अधिकार, 13. अपनी चीज़।[72]

उनके द्वारा रचित पाँचवा कहानी-संग्रह **'अभिशप्त'** सन् 1944 ई. में प्रकाशित हुआ। इसमें कुल सोलह कहानियाँ संगृहीत हैं। उसके शीर्षक हैं- 1. दास धर्म, 2. अभिशप्त, 3. काला आदमी, 4. समाधि की धूल, 5. रोटी का मोल, 6. छलिया नारी, 7. चार आने, 8. चूक गयी, 9. आदमी का बच्चा, 10.पुलिस की दफा, 11. रिजक, 12. भगवान किसके?, 13. नमक हलाल, 14. पुनिया की होली, 15. हवाखोर, 16. शम्बूक।[73]

'भस्मावृत चिंगारी' यशपाल का छठा कहानी-संग्रह है। इसका प्रकाशन सन् 1946 में हुआ। इसमें 1. भस्मावृत चिंगारी, 2. गुलाम की वीरता, 3. महादान, 4. गवाही, 5. वफादारी की सनद, 6. बान हिण्डनबर्ग, 7. भाग्य का चक्र, 8. पुरुष भगवान, 9. देवी का वरदान, 10. इस टोपी को सलाम, 11. सत्य का मूल्य, 12. सआदत, 13. साग, 14. पहाड़ का छल और 15. घोड़ी की हाय कुल पंद्रह कहानियाँ संगृहीत हैं।[74]

यशपाल का सातवाँ कहानी-संग्रह **'फूलो का कुर्ता'** 1949 में प्रकाशित हुआ। इसमें आठ कहानियाँ संकलित हैं, जो इस प्रकार हैं- 1. आतिथ्य, 2. भवानी माता की जय, 3. शिव-पार्वती, 4. खुदा की मदद, 5. प्रतिष्ठा का बोझ, 6. डरपोक कश्मीरी, 7. धर्मरक्षा, 8. जिम्मेवारी।[75]

सन् 1950 ई. में प्रकाशित **'धर्मयुद्ध'** उनका आठवाँ कहानी-संग्रह है। इसमें प्रायः प्रगतिशील मूल्यों से युक्त कहानियाँ हैं। इसमें 1. धर्म युद्ध, 2. मनु की लगाम, 3. विश्वास की बात, 4. जन गण मन अधिनायक जय हे, 5. खतडुआ, 6. मतिराम की बहादुरी, 7. 420, 8. आत्मिक प्रेम, 9. मंगला और 10. डॉक्टर कुल दस कहानियाँ संगृहीत हैं।[76]

उनका नौवाँ कहानी-संग्रह **'उत्तराधिकारी'** सन् 1951 ई. में प्रकाशित हुआ, जिसमें नौ कहानियाँ संकलित हैं। इस संग्रह की अधिकांश कहानियाँ यशपाल के अल्मोड़ा में व्यतीत किए गए पहाड़ी जीवनको केंद्र में रखकर लिखी गयी हैं, जो इस प्रकार हैं- 1. उत्तराधिकारी, 2. जाब्ते की कार्रवाई, 3. अगर हो जाता, 4. अंग्रेज का घुँघरू, 5. अमर, 6. चन्दन महाशय, 7. कुल-मर्यादा, 8. डिप्टी साहब, 9. जीत की हार।[77]

सन् 1952 में प्रकाशित **'चित्र का शीर्षक'** उनका दसवाँ कहानी-संग्रह है, जिसमें कुल तेरह समस्या प्रधान कहानियाँ संकलित हैं, जो इस प्रकार हैं- 1. चित्र का शीर्षक, 2. हाय राम!...ये बच्चे!!, 3. आदमी या पैसा?, 4. प्रधानमंत्री से भेंट, 5. मार का मोल, 6. शहनशाह का न्याय, 7. स्थायी नशा, 8. एक सिगरेट, 9. फूल की चोरी, 10. अनुभव की पुस्तक, 11. पाँव तले की डाल, 12. साहू और चोर, 13. इसी सुराज के लिए?[78]

उनका ग्यारहवाँ कहानी-संग्रह **'तुमने क्यों कहा था मैं सुंदर हूँ'** 1954में प्रकाशित हुआ। इसमें कुल तेरह कहानियाँ हैं- 1. कोकला डकैत, 2. हुकूमत का जुनून, 3. चोर बाजारी के दाम, 4. गवाही, 5. तमगे की चोट, 6. मिट्ठो के आँसू, 7. तीस मिनट, 8. अखबार में नाम, 9. असली चित्र, 10. कम्बलदान, 11. आबरू, 12. गमी में खुशी, 13. तुमने क्यों कहा था मैं सुंदर हूँ![79]

उनका बारहवाँ कहानी-संग्रह **'उत्तमी की माँ'** का प्रकाशन 1955 में हुआ। इसमें ग्यारह कहानियाँ संकलित हैं, जो इस प्रकार हैं- 1. उत्तमी की माँ, 2. नमक हराम, 3. पतिव्रता, 4. आत्म-अभियोग, 5. करुणा, 6. भगवान् के पिता के दर्शन, 7. न कहने की बात, 8. भगवान् का खेल, 9. करवा का व्रत, 10. नकली माल, 11. पाप का कीचड़।[80]

'ओ भैरवी' 1958 में प्रकाशित यशपाल का तेरहवाँ कहानी-संग्रह है, जिसमें बारह कहानियाँ हैं। उनके शीर्षक हैं- 1. ओ भैरवी, 2. वर्दी, 3. नकारा, 4. सामंती कृपा, 5. देवी की लीला, 6. गौ माता, 7. महाराजा का इलाज, 8. मूर्ख क्रोध, 9. सब की इज्जत, 10. न्याय और दण्ड, 11. मन की पुकार, 12. देखा-सुना आदमी।[81]

'सच बोलने की भूल' उनका चौदहवाँ कहानी-संग्रह है। इसका प्रकाशन 1962 में हुआ। इसमें कुल बारह कहानियाँ संगृहीत हैं, जो इस प्रकार हैं- 1. सच बोलने की भूल, 2. एक हाथ की उँगलियाँ, 3.आत्मज्ञान, 4. अपमान की लज्जा, 5. होली का मजाक, 6. खुदा का खौफ़, 7. नारद-परशुराम संवाद, 8. चौरासी लाख जोनी, 9. खुदा और खुदा की लड़ाई, 10. नारी की ना, 11. फलित ज्योतिष, 12. लखनऊ वाले।[82]

उनका पन्द्रहवाँ कहानी-संग्रह **'खच्चर और आदमी'** सन् 1964 में प्रकाशित हुआ। इसमें आठ कहानियाँ संकलित हैं, जो इस प्रकार हैं- 1. वैष्णवी, 2. मक्खी या मकड़ी, 3. उपदेश, 4. कलाकार की आत्महत्या, 5. जीव दया, 6. चोरी और चोरी, 7. अश्लील!, 8. सत्य का द्वन्द्व, 9. खच्चर और आदमी।[83]

सन् 1968 में प्रकाशित **'भूख के तीन दिन'** उनका सोलहवाँ कहानी-संग्रह है। इसमें ग्यारह कहानियाँ हैं- 1. भूख के तीन दिन, 2. शुरफा, 3. समय, 4. दीनता का प्रायश्चित, 5. भली लड़कियाँ, 6. दाग ही दाग, 7. मार्डन, 8. सीख, 9. खूब बचे!, 10. पागल है!, 11. आशीर्वाद।[84]

उनकी मृत्यु के पश्चात् उनका सत्रहवाँ और आखिरी कहानी-संग्रह **'लैम्प शेड'** 1977 ई. में प्रकाशित हुआ, जिसमें छः कहानियाँ संगृहीत हैं- 1. नैतिक बल, 2. सच्ची पूजा, 3. कौन जाने? 4. बिना रोमांस, 5. अपना-अपना एतकाद है, 6. लैम्प शेड।[85]

उपन्यास साहित्य:

यशपाल मूलत: एक सफल उपन्यासकार के रूप में हिन्दी साहित्य में विशेष रूप से ख्यात हैं। प्रेमचंद ने अपने कालजयी उपन्यास 'गोदान' में आदर्शवाद से पूरी तरह मुक्त होकर जिस यथार्थवादी दृष्टिकोण की ओर रूख किया था, उसी को आगे बढ़ाने का श्रेय यशपाल को है। उन्होंने कहानी के सीमित दायरे से निकलकर उपन्यास की विस्तृत भूमि पर उतरकर व्यक्ति एवं समाज की समग्र व्याख्या प्रस्तुत की है। सामाजिक समस्याएँ, राजनीति और प्रेम तथा स्त्री-पुरुष संबंध का सम्यक् चित्रण उनके उपन्यासों की निजी विशेषता है। उनके उपन्यासों में मानव जीवन के संघर्ष का सजीव चित्रण है। उन्होंने अपने उपन्यासों में वर्तमान समाज की जर्जर मान्यताओं के खोखलेपन को यथार्थवादी ढंग से प्रस्तुत किया है। उनके द्वारा रचित ग्यारह उपन्यास हैं- 1. दादा कामरेड, 2. देशद्रोही, 3. दिव्या, 4. गीता (जो पहले 'पार्टी कामरेड' नाम से प्रकाशित हुआ था), 5. मनुष्य के रूप, 6. अमिता, 7. झूठा सच (दो भाग), 8. बारह घंटे, 9. अप्सरा का शाप, 10. क्यों फँसें, 11. मेरी तेरी उसकी बात।

'दादा कामरेड' सन् 1941 ई. में प्रकाशित यशपाल का पहला उपन्यास है। जनवादी चेतना से अनुप्राणित इस उपन्यास में राजनैतिक सिद्धांतों तथा रोमांस का सम्यक् चित्रण किया गया है। इस उपन्यास में उपन्यासकार ने स्वतंत्रता के पूर्व क्रांतिकारियों के वैचारिक बदलाव के कारण आपस में हुए मतभेद का चित्रण बहुत बारीकी से किया है, जो स्पष्ट रूप से हमें क्रांतिकारी 'हरीश' एवं 'दादा' के कथनों में दिखाई देता है। यशपाल ने अपने क्रांतिकारी जीवन के अनुभवों को इस उपन्यास में व्यक्त किया है। इस उपन्यास में उपन्यासकार ने पूँजीवाद, गाँधीवाद, आतंकवाद का विरोध करते हुए समाजवाद का समर्थन किया है। इस उपन्यास में शोषण रहित मानव समाज का अपना

सपना प्रस्तुत करना यशपाल का मुख्य उद्देश्य रहा है। पूँजीपतियों के पंजों में फँसे शोषित वर्ग की रक्षा के लिए समाजवादी विचारधारा को स्वीकारने का संदेश यशपाल इस उपन्यास में जोरदार ढंग से प्रस्तुत करते हैं। उपन्यास के नायक हरीश एवं नायिका के स्वच्छंद प्रेम संबंध के जरिए उपन्यासकार ने प्रेम और काम संबंधी परंपरागत सड़ी-गली मान्यताओं का खण्डन भी किया है।

'दादा कामरेड' के बारे में विश्वंभरनाथ उपाध्याय लिखते हैं- "'दादा कामरेड' क्रांतिकारियों के प्रमाणिक जीवन-वृत्त की झलक पेश करता है। यही नहीं, यशपाल क्रांतिकारियों के कृत्यों और व्यक्तित्वों की गौरवगाथा नहीं गाते, वह क्रांतिकारियों की समझ को चुनौती देते हैं।"[86]

'देशद्रोही' सन् 1943 ई. में रचित यशपाल का दूसरा उपन्यास है। इस उपन्यास में यशपाल ने 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान कम्युनिस्टों पर लगाये गये आरोपों का सशक्त प्रत्युत्तर दिया है। इसके साथ ही पूँजीवादी सिद्धांतों का समर्थन करने वाली कांग्रेस पार्टी की कटु आलोचना की है। उपन्यास के प्रमुख पात्र डा. खन्ना को एक महान त्यागी, आदर्श साम्यवादी एवं निडर पार्टी प्रेमी के रूप में चित्रित किया गया है। उनकी कथा उपन्यास की मुख्य कथा है। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान अंग्रेजी शासन के खिलाफ कांग्रेस की क्रांतिकारी तैयारियाँ और कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा इस नीति का विरोध आदि भी उपन्यास की कथावस्तु का अंग हैं। उपन्यासकार ने स्त्री-पुरुषों के आपसी आकर्षण को स्वाभाविक मानकर ही कई नारियों से खन्ना के प्रेम-संबंध को चित्रित किया है। इब्बा, नूरन, गुलशो, खातुन, नर्गिस और अंत में उसकी पहली पत्नी राजदुलारी की बहन चंदा भी डा. खन्ना के विशिष्ट व्यक्तित्व से आकृष्ट होकर उसके जीवन में प्रवेश करती है। चंदा का पति राजाराम पूँजीवादी मनोवृत्ति का आदमी है और स्वभाव से शंकालु भी। चंदा अपने वैवाहिक जीवन में प्रेम से वंचित रहती है और इसलिए अतृप्त भी। चंदा को पति की गुलाम

के रूप में प्रस्तुत कर यशपाल ने पूँजीवादी समाज-व्यवस्था में नारी-पराधीनता तथा नारी शोषण की समस्या को यथार्थवादी ढंग से दर्शाया है। बद्रीबाबू के साथ राजदुलारी के पुनर्विवाह के चित्रण द्वारा यशपाल वैधव्य के बारे में अपने प्रगतिशील विचारों को भी प्रस्तुत करते हैं, साथ ही वे समाज की खोखली मर्यादाओं की खिल्ली भी उड़ाते हैं।

'दिव्या' सन् 1945 ई. में प्रकाशित यशपाल का तीसरा उपन्यास है। यह एक नायिका प्रधान उपन्यास है। इस उपन्यास की भूमिका में यशपाल लिखते हैं- "'दिव्या' इतिहास नहीं, ऐतिहासिक कल्पना मात्र है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर व्यक्ति और समाज की प्रवृत्ति और गति का चित्र है। लेखक ने कला के अनुराग से काल्पनिक चित्र में ऐतिहासिक वातारण के आधार पर यथार्थ का रंग देने का प्रयत्न किया है।"[87] इस उपन्यास का कथानक बौद्धकालीन सामाजिक पृष्ठभूमि पर आधारित है। उपन्यास की मुख्य कथा दिव्या के घटनाबहुल जीवन पर आधारित है।उपन्यास में सागल के गण समाज को केंद्र में रखकर पृथुसेन, मारिश, दिव्या, आदि के माध्यम से तत्कालीन समाज के अंतर्विरोध को उजागर किया गया है। इसके साथ ही इस उपन्यास में उपन्यासकार ने तत्कालीन सामाजिक वर्ण व्यवस्था, दासवर्ग के शोषण तथा सामंती व्यवस्था की कुरीतियों को भी बहुत ही बारीकी से चित्रित किया है। तत्कालीन समाज की विभिन्न समस्याओं जैसे- वर्ण व्यवस्था, अभिजात वर्ग की स्वार्थपरता, दासप्रथा, नारी शोषण, वेश्या जीवन आदि पर यशपाल ने मार्क्सवादी दृष्टिकोण से विचार करने का प्रयास किया है।

'पार्टी कामरेड' 1946 में प्रकाशित यशपाल का चौथा उपन्यास है। यही उपन्यास बाद में **'गीता'** नाम से प्रकाशित हुआ। 'दिव्या' की भाँति यह भी नायिका प्रधान उपन्यास है। इस उपन्यास में 1945 ई. के आम चुनाव और नौसैनिक विद्रोह की घटनाओं का वर्णन किया गया है। यह उपन्यास गीता नामक एक कम्युनिस्ट युवती पर केंद्रित है, जो पार्टी के

प्रचार के लिए बंबई की सड़कों पर पार्टी का अखबार बेचती है और पार्टी के लिए फंड इकट्ठा करती है। इसके साथ ही नौसैनिकों की हड़ताल के दौरान गीता घूम-घूमकर हड़ताल में आम जनता की भागीदारी के लिए भाषण देती है। इसके जरिए उपन्यासकार ने कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों की सच्ची लगन को दर्शाया हैं। आम चुनाव के दौरान कांग्रेसी नेता के निर्देशानुसार कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों पर किये गये हमले तथा गीता के चरित्र पर की गयी छींटाकशी के जरिए उपन्यासकार ने कांग्रेस पार्टी की अनैतिकता और अत्याचार को दर्शाया है। उपन्यास में कम्युनिस्ट पार्टी की सदस्य गीता के प्रयासों द्वारा पूँजीवादी पदमलाल भावरिया के हृदय परिवर्तन को भी दर्शाया गया है। इस संदर्भ में गोपाल राय लिखते हैं- "साम्यवादी दल के पक्ष में भावरिया का हृदय-परिवर्तन कराकर यशपाल अनजाने ही गाँधीवादी दर्शन के प्रवक्ता बन गये हैं।"[88]

'मनुष्य के रूप' सन् 1949 ई. में प्रकाशित यशपाल का पाँचवा उपन्यास है। इस उपन्यास की कथा कुल्लू-मनाली से आरंभ होकर बम्बई में समाप्त होती है। उपन्यास की प्रमुख नायिका एक पहाड़ी विधवा युवती सोमा के माध्यम से परिस्थितियों के घात-प्रतिघात से एक ही मनुष्य के बदलते हुए रूपों को बहुत ही प्रभावी ढंग से चित्रित किया है।

'अमिता' सन् 1956 ई. में प्रकाशित यशपाल का छठा उपन्यास है। 'दिव्या' की भाँति इस उपन्यास की कथावस्तु की निर्मिति भी ऐतिहासिक कल्पना के आधार पर हुई है। यह उपन्यास विश्वशांति की प्रेरणा से लिखा गया है।

'झूठा सच' यशपाल का सातवाँ उपन्यास है। स्वतंत्रता-पूर्व और प्राप्ति के बाद के यथार्थ को चित्रित करने वाला यह उपन्यास दो भागों में विभाजित है। पहला भाग **'देश और वतन'** 1958 ई. में प्रकाशित हुआ तथा दूसरेभाग **'देश का भविष्य'** का प्रकाशन 1960 में हुआ। दो भागों में विभक्त इस वृहद् उपन्यास में यशपाल ने स्वतंत्रता संग्राम के

समय दिखाई देने वाले व्यापक जागरण, विभाजन-पूर्व के पंजाब की स्थिति, वहाँ के जनमानस के गठन, निम्न मध्यवर्गीय जीवन की अव्यवस्था, आजादी की घोषणा के साथ भारत केबँटवारे की खबर औरउससे उत्पन्न घोर सांप्रदायिक दंगे, लूट-मार, बलात्कार, अत्याचार, स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के समाज, उसमें व्याप्त भ्रष्टाचार, उच्चवर्ग की स्वार्थपरता, निम्नमध्य वर्ग के नैराश्य आदि का चित्रण बहुत विस्तार और सूक्ष्मता से किया है।

'बारह घंटे' 1963 ई. में प्रकाशित यशपाल का आठवाँ उपन्यास है। यह कुल 112 पृष्ठों का एक लघु उपन्यास है। इस उपन्यास में यशपाल के पूर्ववर्ती उपन्यासों में दिखाई देने वाली राजनीतिक गतिविधियों का सर्वथा अभाव है।इस उपन्यास के माध्यम से उपन्यासकार ने विवाह एवं प्रेम संबंधी परंपरागत नैतिक मान्यताओं का खण्डन कर अपने मार्क्सवादी दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास की कथावस्तु के केंद्र में विधवा बिनी और विधुर फैंटम का परस्पर सहज आकर्षण है। उपन्यासकार ने बिनी और फैंटम के आकस्मिक आकर्षण के माध्यम से परंपरागत वैवाहिक मान्यताओं की निरर्थकता स्पष्ट की है। यशपाल आध्यात्मिक ढंग के आत्मिक प्रेम की जगह सहज प्रेम, जिसमें आत्मा ही नहीं शरीर भी शामिल है, को महत्व देते हैं। इस उपन्यास के संबंध में डा. पारसनाथ मिश्र लिखते हैं- "वस्तुत: 'बारह घण्टे' का मुख्य उद्देश्य प्रेम कहानी कहना नहीं, मौजूदा भारतीय समाज की प्रेम सम्बन्धी निर्जीव धारणाओं का पर्दाफाश करना है। उसके माध्यम से यशपाल जीवन और प्रेम सम्बन्ध को तर्कपूर्ण और वैज्ञानिक दृष्टि से देखने का परामर्श देते हैं, जिससे सन्तुलित और स्वस्थ सामाजिकता की स्थापना हो सके।"[89]

'अप्सरा का शाप' सन् 1965 में प्रकाशित यशपाल का नौवाँ उपन्यास है। इस उपन्यास की कथावस्तु कालिदास के प्रसिद्ध नाटक 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' पर आधारित है।

इस उपन्यास में उपन्यासकार ने शकुंतला की दर्दभरी पौराणिक कथा को नवीन सामाजिक मान्यताओं के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित करने का प्रयास किया है। साथ ही शकुंतला और दुष्यंत के प्रेम तथा विवाह पर आधारित कथानक के जरिए उपन्यासकार ने परंपरागत सामंती समाज की खोखली परम्परा पर व्यंग्य किया है। उपन्यास में मेनका के माध्यम से उपन्यासकार ने नारी की स्वतंत्रता, शोषण से मुक्ति, आदि प्रगतिवादी आदर्शों को भी दर्शाया है।

'क्यों फँसें' 1968 ई. में प्रकाशित यशपाल का दसवाँ उपन्यास है। 115 पृष्ठों का यह लघु उपन्यास स्त्री-पुरुष के काम संबंध को आधार बनाकर लिखा गया है। इस उपन्यास में यशपाल ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि समय के बदलाव के साथ ही विचारों तथा नैतिक अवधाराणाओं में भी परिवर्तन लाना प्रगति के लिए आवश्यक है। इसके साथ ही उपन्यास में यशपाल मनुष्य की काम-भावना को सहज मानते हैं। उपन्यास के प्रमुख पात्र भास्कर के शारिरिक संबंध कई स्त्रियों से बनते हैं, लेकिन विवाह को बंधन माननेवाला भास्कर उसमें फँसना नहीं चाहता। यशपाल भास्कर के जरिए मनुष्य की सहज काम भावना को यथार्थवादी ढंग से चित्रित करते हैं। इस उपन्यास में यशपाल ने स्त्री-पुरुष की समानता को भी रेखांकित किया है। उपन्यास के अंत में भास्कर कहता है-"नारी को सदा संपत्ति या अपनी तफरीह का सौदा ही समझना नारी के प्रति पुरुष का हीन विचार, मिथ्या अहंकार और अन्याय नहीं तो क्या है? आत्मविश्वासी, आत्मनिर्भर नर-नारी क्यों फँसायें! क्यों फँसें!"[90]

'मेरी तेरी उसकी बात' यशपाल का अंतिम उपन्यास है, जिसका प्रकाशन 1974 में हुआ। 568 पृष्ठों के इस वृहद उपन्यास के कथानक में प्रथम विश्वयुद्ध से लेकर 1945 में पृथक पाकिस्तान के लिए लगाये गये नारे तक की घटनाओं का सूक्ष्म ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है, हालाँकि उपन्यास में मुख्य रूप से सन् 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन का वर्णन

किया गया है। इस उपन्यास में उत्तर भारत के इलाकों में गुप्त आंदोलनकारियों द्वारा किये गये आंदोलन को दर्शाया गया है। इसके साथ ही उपन्यास की नारी पात्र उषा के माध्यम से उपन्यासकार ने आंदोलन में स्त्रियों और छात्रों की भागीदारी को स्पष्ट रूप से चित्रित किया है। उपन्यास में एक ओर जहाँ यशपाल ने देश की शिक्षित जनता को प्रभावित करने वाली राजनैतिक विचारधाराओं का विवेचन किया है, वहीं दूसरी ओर गाँधीवाद की कटु आलोचना भी की है।उपन्यास में स्त्री पात्र उषा के माध्यम से नारी मुक्ति के संघर्ष को भी यशपाल ने चित्रित किया है।

निबंध साहित्य:

कहानीकार एवं उपन्यासकार के अतिरिक्त यशपाल हिन्दी के अच्छे निबंधकारों में भी गिने जाते हैं। उन्होंने सामाजिक, राजनैतिक, विचारात्मक, व्यक्तिव्यंजक, आदि अनेक प्रकार के निबंधों की रचना की। इनके द्वारा रचित निबंधों में भी मार्क्सवादी विचारधारा का साफ प्रभाव दिखाई पड़ता है। यशपाल द्वारा रचित निबंध-संग्रह हैं: 1. .**'मार्क्सवाद'** (1940), 2.**'गाँधीवाद की शव परीक्षा'** (1941), 3. **रामराज्य की कथा'** (1951), **4. देखा सोचा समझा'** (1951), 5.**'बीबी जी कहती हैं मेरा चेहरा रोबीला है'** (1951), 6. **'न्याय का संघर्ष'** (1940), 7. **'चक्कर क्लब'** (1942), 8. **बात बात में बात'** (1950), 9. **'जग का मुजरा'** (1962)[91]

यात्रा-साहित्य:

यशपाल ने अपने जीवनमें कई देशों की यात्रा की। उन्होंने उन यात्राओं के आधार पर भी कुछ साहित्य की रचना की, जिसे यात्रा साहित्य की कोटि में रखा गया है। 1953 में प्रकाशित **'लोहे की दीवार के दोनों ओर'** में साम्यवादी और पूँजीवादी शासन प्रणाली का अंतर स्पष्ट करते हुए यूरोप के कुछ देशों और सोवियत रूस के अनुभवों का चित्रण किया

गया है। 1956 में प्रकाशित **'राह बीती'** में यशपाल ने पूर्वी यूरोप के देशों की यात्रा के संस्मरण प्रस्तुत किए हैं। इसी तरह अपनी मॉरीशस यात्रा का वर्णन यशपाल ने **'स्वर्गोद्यान: बिना साँप'** में किया है, जिसका प्रकाशन 1957 में हुआ।[92]

कथा-नाटक अथवा दृश्य कहानी:

यशपाल द्वारा रचित तीन कथा-नाटकों का एकमात्र संग्रह है 'नशे-नशे की बात', जो 1952 में प्रकाशित हुआ। इसमें तीन कथा-नाटक संकलित हैं- 1. **नशे-नशे की बात,** 2. **रूप की परख, 3. गुडबाई दर्दे-दिल!**। इन कथा-नाटकों अथवा दृश्य-कहानियों के संदर्भ में यशपाल स्वयं लिखते हैं कि "यह तीन दृश्य-कहानियाँ इस ढंग से लिखी गई हैं कि पढ़ने में दृश्य कहानी का प्रयोजन पूरा कर सकें और रुचि अथवा अवसर होने पर रंगमंच पर भी उतारी जा सकें।"[93]

आत्मकथा:

किसी भी साहित्यकार की आत्मकथा द्वारा उसके जीवन की पूरी जानकारी प्राप्त होती है। आत्मकथा युगीन इतिहास के धुंधले पृष्ठों पर प्रकाश डालती है। यशपाल की आत्मकथा '**सिंहावलोकन**' चार भागों में विभाजित है। चतुर्थ भाग अधूरा है। आत्मकथा के पहले खण्ड में उन्होंने अपने आरंभिक जीवन की कथा प्रस्तुत की है, जिसमें बाल्यकाल, शिक्षा-दीक्षा,परिवार तथा मित्रों का परिचय, क्रांतिकारियों से संपर्क, हिंदुस्तानी समाजवादी प्रजातंत्र संघ के गठन, असेंबली बम कांड आदि का विस्तार से वर्णन किया है। दूसरे खण्ड में काँगड़ा के प्राकृतिक सौंदर्य, कश्मीर की यात्रा, सहारनपुर बम फैक्टरी, पुलिस से मुठभेड़ और बहुत सारी क्रांतिकारी गतिविधियों का वर्णन यशपाल ने किया है। तीसरे खण्ड में उन्होंने हिंदुस्तानी समाजवादी प्रजातंत्र संघ के आंदोलन की भूमिका का

विस्तृत वर्णन किया है तथा भारत के स्वाधीनता संग्राम को नया मोड़ प्रदान करने में क्रांतिकारियों के अटूट साहस और बलिदान को रेखांकित किया है। इसके अलावा इस खंड में अपने जेल जीवन, विवाह, साहित्य की ओर झुकाव, जेल से रिहाई आदि का वर्णन भी उन्होंने विस्तार से किया है। आत्मकथा का चौथा भाग यशपाल पूरा नहीं कर पाए। चौथे भाग का एक अध्याय ही उन्होंने पूरा किया था और 26 दिसंबर, 1976 को उनकी मृत्यु हो गई।

अनुवाद साहित्य:

यशपाल एक सशक्त मौलिक रचनाकार के साथ-साथ अच्छे अनुवादक भी रहे हैं। उन्होंने रूसी तुर्कमानी लेखक केर्बाबायेब के उपन्यास 'Decisive Step' का 'पक्का कदम' (1949) शीर्षक से अनुवाद किया। इसी तरह मशहूर उज़बेक लेखक अस्कद मुख्तार के उपन्यास 'Sisters' का हिन्दी अनुवाद 'जुलैखां' (1960) नाम से यशपाल ने किया।[94] 1955 ई. में उन्होंने पर्लबक के उपन्यास का हिन्दी अनुवाद 'जनानी ड्योढ़ी' शीर्षक से किया। 1956 ई. में कमला मार्कण्डेय के अंग्रेज़ी उपन्यास 'Nectar In A Sieve' का 'चलनी में अमृत' शीर्षक से अनुवाद यशपाल ने किया। इसके साथ ही उन्होंने इसी वर्ष रूसी लेखक गालिना निकोलायेवा के उपन्यास 'Harvest' का हिन्दी अनुवाद 'फसल' शीर्षक से किया। प्रकाशवती जी के अनुसार चीनी दूतावास ने यशपाल से चीनी लेखक लू शुन की कहानियों का अनुवाद करवाया। इसके अलावा 1950 ई. में उन्होंने ल्यो शाओ ची कृत 'चीनी कम्युनिस्ट पार्टी' का हिन्दी अनुवाद भी किया। यह पुस्तिका अब अनुपलब्ध है।[95] इसके उपरांत 'साहित्य अकादमी' के लिए नॉर्वेजियाई लेखक इब्सन के नाटक 'मुर्गावी' का अनुवाद भी यशपाल ने किया है।[96]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि यशपाल ने गद्य साहित्य की तमाम विधाओं पर लेखनी चलाई। उनके साहित्य पर मार्क्सवाद गहरा प्रभाव दिखाई देता है। उन्होंने अपने साहित्य में अपने समय की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, आदि समस्याओं को उजागर किया है और कई बार मार्क्सवाद के अनुरूप उसका समाधान प्रस्तुत करने का प्रयास भी किया है।

संदर्भ:

---

[1] यशपाल, सिंहावलोकन (खंड एक), लोकभारती प्रकाशन, 2019, पृ. 40

[2] वही, पृ.41

[3] वही, पृ. 36

[4] वही, पृ. 26

[5] वही, पृ. 28-29

[6] वही, पृ.31

[7] वही, पृ. 19

[8] वही, पृ. 33

[9] वही, पृ. 36

[10] वही, पृ. 48

[11] डॉ. ज्योति पांडुरंग गायकवाड़, यशपाल के उपन्यासों में नारी पात्रों का चित्रण, ए.बी.एस. पब्लिकेशन, वाराणसी, 2014, पृ. 9

[12] यशपाल, सिंहावलोकन (खंड एक), पृ. 72

[13] वही, पृ. 25

[14] वही, पृ. 26-27

[15] वही, पृ. 44

[16] वही, पृ. 58

[17] वही, पृ. 59

[18] वही, पृ. 73

[19] प्रोफ़सर बिपिन चन्द्र, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2011, पृ. 241

[20] डॉ. सागर बरूवा, भारतर स्वाधीनता आंदोलनत असमर अवदान, जागरण साहित्य प्रकाशन, नगाँव, 2013, पृ.149

[21] वही, पृ.150

[22] यशपाल, सिंहावलोकन (खंड एक), पृ.104

[23] वही, पृ.110

[24] वही, पृ.123

[25] वही, पृ.132

[26] वही, पृ.143

[27] यशपाल, सिंहावलोकन (खंड दो), पृ.164

[28] वही, पृ.172

[29] वही, पृ.186

[30] वही, पृ.192-193

[31] वही, पृ. 235

[32] वही, पृ.247

[33] यशपाल, सिंहावलोकन (खंड तीन), पृ. 433

[34] वही, पृ. 449

[35] वही, पृ. 472

[36] वही, पृ. 476

[37] वही

[38] वही, पृ. 479

[39] डॉ. ज्योति पांडुरंग गायकवाड़, यशपाल के उपन्यासों में नारी पात्रों का चित्रण, पृ.12

[40] वही

[41] डॉ. रामचंद्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2017, पृ. 297

[42] यशपाल, सिंहावलोकन (खंड एक), पृ. 34

[43] वही, पृ. 60

[44] यशपाल, सिंहावलोकन (खंड चार), पृ. 508

[45] डॉ.(कु.)ऋतु वार्ष्णेय, यशपाल के उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2010, पृ. 33 पर उद्धृत

[46] यशपाल, सिंहावलोकन (खंड चार), पृ. 507

[47] डॉ.(कु.)ऋतु वार्ष्णेय, यशपाल के उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ, पृ. 33 पर उद्धृत

[48] यशपाल, सिंहावलोकन (खंड चार), पृ. 510

[49] डॉ.(कु.)ऋतु वार्ष्णेय, यशपाल के उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ, पृ. 34 पर उद्धृत

[50] यशपाल, सिंहावलोकन (खंड तीन), पृ. 488

[51] डॉ. भगवान दास पाठक, यशपाल के उपन्यासों की सामाजिक चेतना, रमन बुक सेंटर, मथुरा, 2010, पृ. 30 पर उद्धृत

[52] वही, पृ. 29 पर उद्धृत

[53] वही, पृ. 32 पर उद्धृत

[54] यशपाल, स्वर्गोद्यान बिना साँप, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद, 2016 पृ. 57

[55] वही

[56] डॉ. भगवान दास पाठक, यशपाल के उपन्यासों की सामाजिक चेतना, पृ. 30 पर उद्धृत

[57] डॉ.(कु.)ऋतु वार्ष्णेय, यशपाल के उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ, पृ. 31 पर उद्धृत

[58] यशपाल, यशपाल रचनावली (खंड-11), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007, पृ. 393

[59] डॉ. भगवान दास पाठक, यशपाल के उपन्यासों की सामाजिक चेतना, पृ. 31 पर उद्धृत

[60] डॉ. भूलिका त्रिवेदी, यशपाल: व्यक्तित्व एवं कृतित्व, चिंतन प्रकाशन, कानपुर, 1992, पृ. 58 पर उद्धृत

[61] वही

[62] डॉ.(कु.) ऋतु वार्ष्णेय, यशपाल के उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ, पृ. 27 पर उद्धृत

[63] डॉ. भूलिका त्रिवेदी, यशपाल: व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ. 59 पर उद्धृत

[64] वही, पृ. 58 पर उद्धृत

[65] वही

[66] डॉ.(कु.) ऋतु वार्ष्णेय, यशपाल के उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ, पृ. 27 पर उद्धृत

[67] यशपाल, सिंहावलोकन (खंड एक), पृ. 34

[68] वही, पृ. 60

[69] यशपाल, यशपाल रचनावली (खंड-7), अनुक्रम

[70] वही

[71] वही

[72] यशपाल, ज्ञानदान, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, अनुक्रम

[73] यशपाल, अभिशप्त, अनुक्रम, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, अनुक्रम

[74] यशपाल, भस्मावृत चिंगारी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, अनुक्रम

[75] यशपाल, फूलो का कुर्ता, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, अनुक्रम

[76] यशपाल, धर्मयुद्ध, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, अनुक्रम

[77] यशपाल, उत्तराधिकारी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014, अनुक्रम

[78] यशपाल, चित्र का शीर्षक, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, अनुक्रम

[79] यशपाल, तुमने क्यों कहाँ में सुंदर हूँ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014, अनुक्रम

[80] यशपाल, उत्तमी की माँ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, अनुक्रम

[81] यशपाल, ओ भैरवी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, अनुक्रम

[82] यशपाल, सच बोलने की भूल, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2013, अनुक्रम

[83] यशपाल, खच्चर और आदमी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, अनुक्रम

[84] यशपाल, भूख के तीन दिन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, अनुक्रम

[85] यशपाल, लैंप शेड, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, अनुक्रम

[86] चमनलाल, यशपाल के उपन्यास, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, 2002, पृ. 53 पर उद्धृत

[87] यशपाल, दिव्या, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2017, प्राक्कथन

[88] चमनलाल, यशपाल के उपन्यास, पृ. 61 पर उद्धृत

[89] वही, पृ. 99 पर उद्धृत

[90] यशपाल, यशपाल रचनावली (खंड- 5), पृ.386

[91] यशपाल, यशपाल रचनावली (खंड- 11 और 12) का अनुक्रम

[92] यशपाल, यशपाल रचनावली (खंड-13) का अनुक्रम

[93] यशपाल, यशपाल रचनावली (खंड-13), 'नशे-नशे की बात' कथा-नाटक संग्रह की भूमिका, पृ. 445

[94] यशपाल, यशपाल रचनावली (खंड-7), परिचय

[95] चमनलाल, यशपाल के उपन्यास, पृ. 40-41

[96] वही, पृ. 43

अध्याय- 2.

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य: जीवन, साहित्यिक परिवेश एवं रचनाशीलता

2.1 बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के जीवन प्रसंग

2.2 बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का साहित्यिक परिवेश

2.3 बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य की रचनाशीलता

2. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य: जीवन, साहित्यिक परिवेश एवं रचनाशीलता

2.1 बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के जीवन प्रसंग

आधुनिक असमिया साहित्य के अग्रणी लेखक बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का जन्म 14 अक्टूबर, 1924 को शिवसागर जिले के साफ्राइ के चाय बगान में हुआ था। इनके पिता शशिधर भट्टाचार्य उसी चाय बगान में नौकरी करते थे, इसलिए अपने पूर्वजों के निवास स्थान ढेकियाखोवा गाँव को छोड़कर वे यहाँ आये। उनकी माता का नाम आइदेउ भट्टाचार्य है। उनकी प्रारंभिक शिक्षा साफ्राइ में ही हुई और इसी समय उनके साहित्यिक जीवन का अंकुरण भी हुआ। यहाँ उन्होंने अपने दोस्तों के नाम के पहले अक्षरों को जोड़कर **'पूरबी अरूण'** नामक एक हस्तलिखित पत्रिका का संपादन किया। इस पत्रिका में उन्होंने अपनी पहली कविता '**शंकरदेव**' रचकर साहित्यिक जीवन का आरम्भ किया। अत:वे बचपन से ही साहित्य प्रेमी रहे हैं। साफ्राइ से प्रारंभिक शिक्षा पूरी कर वे अपने पूर्वजों के आवास स्थल ढेकियाखोवा गाँव में आकर बसे और यहाँ के काकजान एम.इ. विद्यालय में दाखिल हुए।[1] ढेकियाखोवा गाँव के प्राकृतिक सौंदर्य एवं शांत वातावरण ने इन्हें साहित्य रचने के लिये प्रेरित किया। इसके अलावा इस गाँव में रहने वाले असम के प्रसिद्ध 'वकुल वन' के कवि तथा असम साहित्य सभा के भूतपूर्व सभापति श्री आनंदचंद्र बरुवा के सान्निध्य ने भी उन्हें साहित्य सृजन के लिए प्रेरित किया।[2] काकजान विद्यालय से एम. इ. परीक्षा उत्तीर्ण होकर छात्रवृत्ति प्राप्तकर[3] सन् 1937 ई. में वे जोरहाट के सरकारी विद्यालय में दाखिल हुए।[4] उस दौरान असमिया के शिक्षक प्रसिद्ध साहित्यकार स्वर्गीय डिम्बेश्वर नेउग और संस्कृत के शिक्षक स्वर्गीय तोषेश्वर ठाकुर विद्यालय की प्रमुख पत्रिका '**जेउति**' के संपादक थे।[5] असमिया के शिक्षक डिम्बेश्वर नेउग ने बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य एवं उनके साथियों जतिनारायण शर्मा, अमूल्य बरुवा, राजेन हजारिका और मुनींद्र नारायण दत्तबरुवा को

साहित्य रचने के लिए प्रेरित किया।[6] अपने गुरु से अनुप्रेरित होकर बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने '**माही आइर सादर**' नामक पहली कहानी लिखी (जिसकी विषयवस्तु सोतैली माँ के अत्याचार पर आधारित थी), जो स्कूल की '**जेउति**' पत्रिका में प्रकाशित हुई। इसके उपरांत, जब वे सातवीं कक्षा में थे, उस दौरान अपने साथियों के साथ मिलकर उन्होंने '**सेनेही**' नामक हस्तलिखित पत्रिका का संपादन किया।[7] जब वे आठवीं कक्षा में थे, तब अपने सहपाठी अजीत शर्मा द्वारा संपादित हस्तलिखित दैनिक पत्रिका '**भोगदई**' में हास्यरसमूलक प्रबंध लिखा एवं इस पत्रिका के नियमित लेखक भी रहे।[8] जोरहाट के सरकारी विद्यालय में पढ़ाई के दौरान कलकत्ते से प्रकाशित डॉ. दीननाथ शर्मा द्वारा संपादित '**आवाहन**' पत्रिका, बंगला भाषा में प्रकाशित '**वसुमती**' एवं '**भारतवर्ष**' पत्रिका तथा विहगी कवि रघुनाथ चौधुरी की 1938 में प्रकाशित '**जयंती**' पत्रिका के नियमित अध्ययन ने भी उनके मन में साहित्य सृजन की नींव डाली।[9] उसी दौरान '**आवाहन**' पत्रिका में भट्टाचार्य द्वारा रचित दो लघुकथाएँ '**आविचेनीया**' और '**जीयाइ थका छवि**' प्रकाशित हुई।[10] जोरहाट में रहते हुए वे वहाँ के तत्कालीन जाने-माने प्रसिद्ध साहित्यकारों चंद्रधर बरुवा, कृष्णकांत संधिकै, नीलमणि फुकन, डिम्बेश्वर नेउग, शरतचंद्र गोस्वामी, कमलेश्वर चलिहा, गणेशचंद्र गोगोई और आनंदचंद्र बरुवा के सम्पर्क में आये। इन साहित्यकारों ने भी उन्हें साहित्य-सृजन के लिए काफी हद तक प्रेरित किया।[11] सन् 1941 में वे जोरहाट के सरकारी स्कूल से हाईस्कूल परीक्षा उत्तीर्ण होकर गुवाहाटी के कॉटन कॉलेज (तत्कालीन) की विज्ञान शाखा में दाखिल हुए। यहाँ से उन्होंने 1943 में आइ.एससी. और 1945 में बी.एससी. की पढ़ाई सफलतापूर्वक पूरी की। कॉटन कॉलेज(तत्कालीन) में विज्ञान का छात्र होते हुए भी वे आजीवन साहित्य का दामन पकड़े रहे। उस दौरान कॉटन कॉलेज में हुए '**सुकुमार कला प्रतियोगिता**' में '**मरहि परा जीवन**' नामक लघुकथा के लिए उन्हें प्रथम

पुरस्कार मिला। इसके दो साल के बाद जब वे बी.एससी. तृतीय वर्ष के छात्र थे, उस दौरान कॉलेज में हुए '**सुकुमार कला रचना**' प्रतियोगिता में '**सुकुमार कला जातीय संस्कृतिर निदर्शन**' नामक निबंध के लिए उन्हें प्रथम पुरस्कार मिला और उन्हें '**आउनी आटि स्वर्ण**' पदक(पुरस्कार) से सम्मानित किया गया। इसके साथ ही यह निबंध आबदुस सात्ता द्वारा संपादित '**कॉटनियन**' पत्रिका में प्रकाशित भी हुआ।[12] कॉलेज की पढ़ाई पूरी कर उच्च शिक्षा के लिए वे कलकत्ता चले गये। वे जिस साल कलकत्ता गये उस साल कलकत्ता विश्वविद्यालय में पत्रकारिता की पढ़ाई आरम्भ होनेवाली थी,परंतु कुछ कारणवश पढ़ाई आरम्भ नहीं हुई। इसी कारण वे लॉ कॉलेज में दाखिल हुए।[13] एक ओर वे जहाँ कलकत्ता में विधि की पढ़ाई कर रहे थे, वहीं दूसरी ओर उनके संपादकीय जीवन की शुरुआत हुई। वहाँ उन्होंने असमिया पत्रिका 'बाँही' के सहायक संपादक के रूप में कार्य करना शुरू किया। उस दौरान 'बाँही' के संपादक माधवचंद्र बेजबरुवा और संपादिका उषा बेजबरुवा थीं। इसके अलावा कलकत्ता में हेमंद्र प्रसाद घोष द्वारा संपादित 'दैनिक एडवांस' पत्रिका में भी उन्होंने काम किया। हालाँकि वे कलकत्ता में ज्यादा दिनों तक नहीं रह सके। वहाँ हुए सांप्रदायिक दंगे के कारण वे अपनी विधि की पढ़ाई बीच में ही छोड़ गुवाहाटी लौट आए। यहाँ आकर उन्होंने कुछ दिनों तक '**दैनिक असमिया**' पत्रिका के सहायक संपादक के रूप में काम किया। वे जिस समय कलकत्ता से गुवाहाटी लौटे उसी दौरान असम में कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी का गठन किया गया। हालाँकि भट्टाचार्य जी 1942 में हुए आंदोलन के बाद से ही धीरे-धीरे सोशलिस्ट पार्टी की ओर आकर्षित हुए और असम में कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी गठित होने के पश्चात् वे इस पार्टी के सदस्य बने। इसके साथ ही उन्होंने इस पार्टी की मुख्य पत्रिका 'जनता' के संपादन का कार्यभार भी संभाला।[14] इसी बीच अप्रैल 1948 में डॉ. बिरिंचि कुमार बरुवा द्वारा संपादित पत्रिका 'रंगघर' के सातवें

अंक में भट्टाचार्य द्वारा रचित लघुकथा '**पखिलाई पाखि सलाय**' एवं ग्यारहवें- बारहवें अंक में '**नेताजी और इङाइ जङ**' प्रकाशित हुई।[15] इसके उपरांत 1948 के जून महीने में हेमचंद्र द्वारा संपादित मासिक पत्रिका 'पछोवा' के प्रथम अंक में भट्टाचार्य जी द्वारा रचित '**ढउर परश**' नामक लघुकथा प्रकाशित हुई। इसके अलावा '**सरु चापर किछुमान घर**' नामक लघुकथा और '**मोर मुक्ति नाइ**' कविता भी इसी पत्रिका में प्रकाशित हुई।[16]

कुछ दिनों तक गुवाहाटी में रहने के पश्चात् सन् 1950 में अपने दोस्त रिचाङ काइचिङ के बुलाने पर वे नागालैंड गये। वहाँ उनकी नियुक्ति उखरुल हाईस्कूल में विज्ञान के शिक्षक के पद पर हुई। भले ही वे उखरुल में लंबे समय तक नहीं रह सके, लेकिन उखरुल में रहना उनके साहित्यिक जीवन के लिए काफी महत्वपूर्ण रहा। वहाँ रहते हुए उन्हें नागा जनजातियों के रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज, जीवन-शैली, उनकी संस्कृति आदि के संबंध में पर्याप्त ज्ञान प्राप्त हुआ। वहाँ रहते हुए ही उन्होंने उखरुल के अनुभवों, नागा जनजातियों की जीवन-पद्धति, वहाँ की आर्थिक-सामाजिक व्यवस्था और नागाओं की चारित्रिक सरलता को आधार बनाकर '**उखरुलर चिठि**' लिखा, जो 'रामधेनु' पत्रिका के तृतीय अंक में 3 मई, 1951 को प्रकाशित हुआ। इसके साथ ही उन्होंने उखरुल के वास्तविक अनुभवों को आधार बनाकर '**आजि बिया, काइलोई गाँव पंचायत'** नामक कहानी लिखी, जो 'रामधेनु' पत्रिका के पाचवें अंक में प्रकाशित हुई। इसके अलावा भी नागा जीवन के वास्तविक अनुभवों के आधार पर उन्होंने 1960 में **'इयारुइंगम'** नामक उपन्यास लिखा। इस उपन्यास के लिए उन्हें 1961 में '**साहित्य अकादमी**' पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

1952 में वे नागालैंड से गुवाहाटी लौटे। वहाँ से लौटने के बाद उसी वर्ष उन्होंने '**रामधेनु**' पत्रिका के संपादन का कार्यभार संभाला। बारह साल तक सफलतापूर्वक चलने के बाद आर्थिक दिक्कतों के कारण 'रामधेनु' पत्रिका को बंद करना पड़ा।[17] आधुनिक साहित्य के विकास में इस पत्रिका का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। स्वातंत्र्योत्तर युग के मनुष्य की मानसिक जटिलता, विश्व साहित्य का परिचय, वामपंथी विचारधारा का महत्व, साहित्य की विभिन्न धाराओं की तुलनात्मक आलोचना, समसामयिक साहित्य का मूल्यांकन, आदि 'रामधेनु' का प्रमुख आलोचनात्मक विषय रहा। असम की युवा साहित्यिक प्रतिभाओं को ढूँढने, उन्हें प्रोत्साहित करने में साहित्यिक पत्रिका 'रामधेनु' के संपादक के रूप में भट्टाचार्य जी ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। इसके परिणामस्वरूप उस दौरान असमिया साहित्य जगत में नये-नये युवा साहित्यकार उभरे। उनके प्रोत्साहन के चलते 'रामधेनु' के पाठकों की संख्या में काफी वृद्धि हुई। आधुनिक कविता आंदोलन में भी इस पत्रिका ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस पत्रिका के जरिए मुक्तक कविता तथा आधुनिक कविता का विकास एवं विस्तार सम्भव हुआ। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के संपादन में 'रामधेनु' सही मायने में एक उच्च कोटि की साहित्यिक पत्रिका साबित हुई। 20वीं शताब्दी के मध्य में 'रामधेनु' पत्रिका के प्रकाशित होने की पूरी अवधि को आज भी असमिया साहित्य जगत में '**रामधेनु युग**' के नाम से जाना जाता है।[18] इस पत्रिका के संबंध में होमेन बरगोहात्रि जी कहते हैं- "पचास के दशक में 'रामधेनु' जैसी एक पत्रिका अगर नहीं निकलती और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य जैसे युग-मानस सचेतन एक लेखक इस पत्रिका के संपादक नहीं होते तो असमिया साहित्य में नई आलोचनात्मक दृष्टि का जन्म होता या नहीं- इस विषय में संदेह प्रकट किया जा सकता है।"[19] 'रामधेनु' पत्रिका का संपादन कार्य बंद होने के पश्चात् उसी वर्ष अर्थात् 1963 ई. में 23 अक्टूबर को भट्टाचार्य जी 'सादिनीया नवयुग' नामक पत्रिका

के संपादक बने। मार्च, 1966 तक वे इस पत्रिका के संपादक रहे। कहानी, कविता, विविध आलोचनात्मक लेख, आदि के अलावा भी समसामयिक घटनाओं का विवरण, खेल जगत और फिल्म जगत की खबरें तथा राजनैतिक आलोचना भट्टाचार्य जी द्वारा संपादित 'सादिनीया नवयुग' के केंद्रीय विषय थे।[20]

साहित्यिक कार्य में व्यस्त रहने के बाबजूद उन्होंने 1953 ई. में असमिया विषय में मुक्त(प्राइवेट) परीक्षार्थी के तौर पर स्नातकोत्तर की पढ़ाई पूरी की। इसके पश्चात् 1977 ई. में उन्होंने 'असमिया साहित्य में हास्य-व्यंग' (Humour and Satire in Assamese Literature)विषय पर गोहाटी विश्वविद्यालय से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की।[21]

'रामधेनु' पत्रिका के संपादन के दौरान भट्टाचार्य जी बिनीता भट्टाचार्य जी के साथ परिणय-सूत्र में बंधे। पत्नी बिनीता भट्टाचार्य उनके साहित्यक कार्य के प्रति सम्मान का भाव रखती थीं। भट्टाचार्य जी गृहस्थ जीवन के प्रति उदासीन व्यक्ति थे।[22] वे गृहस्थी की अपेक्षा अपने साहित्यिक कर्म को ज्यादा महत्व देते थे। पत्नी बिनीता भट्टाचार्य द्वारा खाने के संबंध में पूछे जाने पर प्रत्युत्तर में वे कहते-"मैं क्या खाऊँगा वह मेरा उद्देश्य नहीं है, मैं क्या लिखूंगा यह मेरा उद्देश्य है।"[23] वे सीधे-सादे व्यक्ति थे, जो 'सादा जीवन उच्च विचार' वाली सोच में विश्वास रखते थे। वे ईश्वर भक्ति की अपेक्षा मानव भक्ति को ज्यादा महत्व देते थे। अपनी इसी सोच एवं मानसिकता के कारण वे जीवन भर साहित्य से जुड़े रहे। यदि वे चाहते तो उच्च पद की अच्छी नौकरी कर सकते थे, परंतु नौकरी की बजाय बचपन से ही एकाग्र होकर वे आजीवन साहित्य सृजन में लगे रहे। 1967 में पत्रकारिता के कार्य को त्यागकर उन्होंने पूरी तरह लेखन कार्य को अपना लिया। वे दिन के दस घंटे अपने साहित्यिक कार्य में लगे रहते, फिर भी ऊबते नहीं थे। उस दौरान उन्होंने कविता, कहानी, आदि को छोड़कर रेडियो नाटक, उपन्यास, यात्रा-वृत्तांत, आदि लिखना और अनुवाद कार्य

करना प्रारम्भ किया।[24] उनके उपन्यास 'मृत्युंजय' के लिए उन्हें 1979 में 'ज्ञानपीठ' पुरस्कार से नवाज़ा गया। 'ज्ञानपीठ' पुरस्कार प्राप्त करने वाले असमिया भाषा के वे पहले साहित्यकार हैं।[25] 'गुवाहाटी साहित्य कानन' में आयोजित सभा में उन्होंने अपनी साहित्य साधना के संबंध में कहा था-"मूक मौन जनता के मुख में भाषा प्रदान करना ही असली बात है!...जनता के ऊपर मेरा गंभीर विश्वास है। जनता के मुख की भाषा ही शब्द का रूप लेती है।"[26] वे आजीवन अनेक साहित्यिक संस्थानों से जुड़े रहे। 1975 में डॉ. सतेंद्रनाथ शर्मा के नेतृत्व में तिताबर में आयोजित 'असम साहित्य सभा' के 42वें सम्मेलन के आलोचना सत्र में वे सभापति थे।[27] 1983 में 'असम साहित्य सभा' द्वारा बोंगाईगाँव में आयोजित 'सोनाली जयंती अधिवेशन' में उन्हें 'असम साहित्य सभा' का अध्यक्ष नियुक्त किया गया।[28] 1983 से लेकर 1985 ई. तक वे 'असम साहित्य सभा' के अध्यक्ष रहे।[29]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य आजीवन साहित्य रचना में लगे रहे। 6 अगस्त, 1997 को उनकी मृत्यु हो गई।[30]

2.2 बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का साहित्यिक परिवेश

आधुनिक असमिया साहित्यकारों में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का नाम उल्लेखनीय है। उहोंने 'रामधेनु' पत्रिका का संपादन कर आधुनिक असमिया साहित्य को एक नई दिशा प्रदान की। उनका रचना काल मूल रूप से बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध है। पहले भी उल्लेख किया चुका है कि वे बचपन से ही साहित्यिक कर्म में लीन रहे, परंतु असमिया साहित्य में एक प्रख्यात साहित्यकार के रूप में जिस दौर में वे उभरे, वह स्वातंत्र्योत्तर दौर था। यह एक ऐसा दौर था जब एक ओर होकर हमारे देश ने आजादी हासिल की, वहीं दूसरी ओर आजादी और विभाजन के पश्चात् हुए सांप्रदायिक दंगों में हजारों लोगों की मौत हुई। लाखों लोगों का पलायन हुआ। पाकिस्तान से लाखों शरणार्थी भारत आये और लाखों भारत से पाकिस्तान गए। ऐसी विषम परिस्थिति में देश के पुनर्गठन का प्रयास किया गया। सुखद भविष्य की कल्पना कर अपने प्राणों की बाज़ी लगाकर आज़ादी के आंदोलनों में भाग लेने वाली जनता यह सोच रही थी कि आज़ादी के पश्चात् देश में उन्हें राजनैतिक स्वाधीनता के साथ ही आर्थिक एवं सामाजिक स्तर पर समानता का अधिकार दिया जाएगा। परंतु वास्तव में ऐसा कुछ घटित नहीं हुआ। देश के पुनर्गठन की प्रक्रिया में बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण की प्रक्रिया शुरू हुई। स्वतंत्रता के पूर्व असम में औद्योगिक संस्थान नहीं थे, परन्तु आज़ादी के पश्चात् असम में औद्योगिक संस्थानों का निर्माण किया गया, जिसके कारण स्वातंत्र्योत्तर असम में मजदूरों से जुड़ी समस्याएँ दिखाई देने लगीं। आज़ादी के बाद की महँगाई, भूमि लगान वृद्धि, आदि ने मजदूर-किसान एवं निम्न मध्यवर्गीय जनता की कमर तोड़ दी। ऐसे में आज़ादी के प्रति आम जनता का मोहभंग होना स्वाभाविक था। इस मोहभंग ने असमिया समाज में प्रगतिवादी विचारधारा को जन्म दिया। फलस्वरूप इस दौर के साहित्यकारों एवं उनके साहित्य में प्रगतिवाद का प्रभाव परिलक्षित होता है। साठ के दशक से यह धारा प्रखर रूप में प्रवाहित होने लगी। बीरेन्द्र

कुमार भट्टाचार्य भी अपनी युवावस्था में मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित रहे। फलत: उनकी आरंभिक कुछ कहानियों एवं उपन्यासों में नैतिक मान्यताओं की प्रतिष्ठा, शोषण एवं रूढ़ि के प्रति विद्रोह, समतामूलक समाज की स्थापना, उपेक्षितों और असहायों के प्रति सहानुभूति दिखाई देती है। उनके द्वारा रचित प्रथम उपन्यास 'राजपथे रिङियाय' एवं 'कलंग आजिउ बइ', 'वार्ड नं दुइ' आदि कहानी संग्रहों में प्रखर प्रगतिवादी स्वर दिखाई देता है। नवकांत बरुवा, योगेश दास आदि इस धारा के प्रमुख असमिया साहित्यकार हैं।

सन् 1960 के आस-पास असमिया साहित्य में राजनैतिक आदर्शाभिव्यक्तिपरक उपन्यास की एक नई धारा का उभार हुआ। इस दौर के ज्यादातर साहित्यकार राजनीति से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जुड़े हुए थे। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'राजपथे रिङियाय', 'इयारुइंगम', 'प्रतिपद', 'मृत्युंजय' आदि उपन्यासों में राजनैतिक चेतना स्पष्ट रूप में दिखाई देती है। वे गंभीर रूप से मानवतावादी हैं। अत: उनकी राजनैतिक चेतना का लक्ष्य किसी राजनैतिक विचार की प्रतिष्ठा करना नहीं है, बल्कि उनका लक्ष्य मनुष्य है तथा राजनैतिक विचार उस लक्ष्य की प्राप्ति का सहायक मात्र। भट्टाचार्य के अलावा निरुपमा बरगोहाँई, अरुण शर्मा आदि के उपन्यासों में राजनैतिक एवं सामाजिक चेतना स्पष्ट रूप में दिखाई देती हैं।

इस दौर में जीवनीमूलक उपन्यासों की एक नई धारा का उभार हुआ। कई उपन्यासकार अपने जीवन में जिन व्यक्तियों से प्रभावित रहे, उन्हें उपन्यास में नायक या नायिका के रूप में प्रतिष्ठित कर उस व्यक्ति के जीवन एंव कर्म का सजीव चित्रण उन्होंने अपने नज़रिए से किया है। ज्योतिप्रसाद अग्रवाल के जीवन पर आधारित सैयद अब्दुल मलिक द्वारा रचित 'रूपतीर्थर यात्री' इस धारा का प्रथम उपन्यास है। लक्ष्मीनन्दन बरुवा द्वारा रचित शंकरदेव के जीवन पर आधारित उपन्यास 'याकेर नाहिके उपाम', माधवदेव के

जीवन पर आधारित 'सेहि गुणनिधि' और बीरेन बरकटकी द्वारा स्वतंत्रता सेनानी कनकलता के जीवन पर आधारित 'मृत्युक गचकि आना जय जिनि' आदि इस धारा के प्रमुख उपन्यास हैं।

असमिया समाज का गठन भिन्न-भिन्न सामाजिक समुदायों से मिलकर हुआ है। इस समाज में विभिन्न जनजातियों के लोग भी निवास करते हैं। इन जनजातीय लोगों के रीति-रिवाज, रहन-सहन, खान-पान, उनके दु:ख-दर्द आदि को लेकर भी इस दौर में साहित्य रचा गया है, जिसे जनजातीय साहित्य कहा जाता है। हालाँकि स्वतंत्रता के पूर्व रजनीकांत बरदलई ने 'मिरिजीयरी' नामक जनजातीय उपन्यास की रचना की थी। लेकिन स्वतंत्रता के पश्चात् एक लम्बे अंतराल के बाद जनजातीय साहित्य की रचना करने वाले साहित्यकार दिखाई पड़ते हैं। ये साहित्यकार दो तरह के हैं- गैर-जनजातीय साहित्यकार एंव जनजातीय साहित्यकार। गैर-जनजातीय साहित्यकारों में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का नाम महत्वपूर्ण है। वे नागालैंड के उखरुल में प्राप्त किये गए अनुभवों के आधार पर 'इयारुइंगम' नामक उपन्यास एवं 'आजि बिया,काइलोई गाँव पंचायत' नामक कहानी की रचना करते हैं। इसके अलावा चाय वगान से जुड़ी जनजातियों को लेकर योगेश दास द्वारा लिखा गया 'डावर आरु नाइ' (1955), डॉ. प्रफुल्ल दत्त गोस्वामी द्वारा बड़ो-कछारी जनजातीय समाज को आधार बनाकर लिखा गया 'कैँचा पातर कपँनि'(1952), कैलाश शर्मा द्वारा नागा जनगोष्ठी के जीवन को आधार बनाकर लिखा गया 'विद्रोही नगार हाथत' आदि उपन्यास जनजातीय जीवन से संबंधित इस दौर के प्रमुख उपन्यास हैं। 1960 तक आते-आते भिन्न-भिन्न जनजातीय समूहों से जनजातीय साहित्यकार उभरते हैं, जो अपने भोगे हुए यथार्थ एवं रीति-रिवाज, रहन-सहन, जीवन-प्रणाली आदि को प्रामाणिक ढंग से साहित्य में चित्रित करते हैं। अरूणाचल की आदि जनजाति पर लुम्मर दाई द्वारा लिखे गये

'पृथ्वीर हाँहि' और 'पाहारर शिले शिले', रंगबंग तेराङ द्वारा कार्बी जनजाति के जीवन पर आधारित 'रंगमिलिर हाँहि', ब्रोकपा जनजाति के जीवन पर आधारित येशे दोरजी थोंगछि का 'सोनाम' तथा मिचिंग जन-जीवन पर आधारित यतीन मिपुन द्वारा रचित 'मिकचिजिलि' आदि जनजातीय साहित्यकारों द्वारा लिखित उल्लेखनीय उपन्यास हैं।

आजादी के कुछ साल पहले तक प्रवाहित हुए ऐतिहासिक उपन्यास की धारा आजादी के बाद कुछ सालों तक मंद दिखाई देती है। इसका कारण यह था कि आजादी के पश्चात् परिवर्तित सामाजिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों ने इस दौर के साहित्यकारों को सामाजिकता के ओर उन्मुख किया। सामाजिक व्यवस्था में जटिलता आने के कारण सामाजिक जीवन की समस्याओं ने साहित्यकारों का ध्यान आकर्षित किया। फलस्वरूप इस दौर के साहित्यकारों ने सामाजिक यथार्थ को अपने साहित्य की विषयवस्तु बनाया। स्वतंत्रता के पूर्व ऐतिहासिक उपन्यास रचना के पीछे साहित्यकारों का उद्देश्य था अतीत की गौरवमय गाथा के जरिए देशवासियों के मन में स्वदेश प्रेम जागृत करना। साठ के दशक के बाद विशेषकर सत्तर और अस्सी के दशक में पुन: ऐतिहासिक उपन्यासों की एक नई धारा प्रवाहित होती हुई दिखाई देती है। यद्यपि साठ के दशक में पद्म बरकटकी द्वारा रचित 'कोनो खेद नाइ' उपन्यास से ही इतिहास के विषय एवं चरित्र को नए दृष्टिकोण से देखने का प्रयास किया गया। इस दौर के साहित्यकार ऐतिहासिक उपन्यास की रचना अतीत के परिप्रेक्ष्य में नहीं, बल्कि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में करने का प्रयास करते हैं। उदाहरणस्वरूप पद्म बरकटकी द्वारा रचित उपन्यास 'कोनो खेद नाइ' राजा शिवसिंह की बड़ी बेटी फुलेश्वरी के जीवन को आधार बनाकर लिखा गया है। जो राजकुमारी के रूप में राजा शिंवसिंह का राजपाट सम्भालती है। इतिहास में फुलेश्वरी साधारण घर की लड़की होकर राजभार मिलने के पश्चात् सेच्छाचारी बन गयी थी। परंतु उपन्यास में उपन्यासकार ने फुलेश्वरी को मंत्री की शासन व्यवस्था का विद्रोह करते हुए और दरिद्र प्रजा की राजा के

अत्याचारों से रक्षा करते हुए दर्शाया है। नवकांत बरुवा, देवेंद्रनाथ ठाकुर, धीरेन बरठाकुर आदि इस दौर के महत्वपूर्ण ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं। इस दौर के उपन्यासकारों का प्रमुख उद्देश्य था- ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना के जरिए लोगों में जातीय चेतना को जागृत करना।

सन् 1960 ई. के आस-पास असमिया साहित्य में मनोविश्लेषणवादी उपन्यास की धारा का उभार हुआ। पाश्चात्य साहित्यकारों से विशेषकर अंग्रेजी उपन्यासकारों से प्रभावित होकर असमिया उपन्यासकारों ने भी फ्रॉयड के मनोविश्लेषणवाद को अपने उपन्यासों का विषय बनाया। इस दौर के उपन्यासकारों ने पुरुष-स्त्री की काम-वासना, अवैध प्रेम, मृत्यु, आत्महत्या तथा वृद्ध मनोविज्ञान, बाल मनोविज्ञान, नारी मनोविज्ञान आदि को आधार बनाकर उपन्यासों की रचना की। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का 'नष्टचंद्र', डॉ. बिरिंचि कुमार बरुवा का 'सेउजीया पातर कहानी', पशुपति भारद्वाज का 'उड़न्त मेघर छाँ', कुमार किशोर का 'किंकिनीर कलंक' आदि इस तरह के उल्लेखनीय उपन्यास हैं।

वैज्ञानिकता के इस युग में साठ के दशक के आस-पास असमिया साहित्य में विज्ञान पर आधारित साहित्य की एक नई धारा का विकास दिखाई पड़ता है। हालाँकि यह धारा साहित्य की अन्य धाराओं के समान विस्तृत नहीं थी।यह कुछ रचनाकारों तक ही सीमित थी। विज्ञान के अतीत, वर्तमान या भविष्य को लेकर अथवा कुछ वैज्ञानिक तथ्यों को लेकर कहानी तथा उपन्यास की रचना की गयी। कहानी के क्षेत्र में सुधीर कुमार चालिहा द्वारा रचित काहानी 'आव़ाज' विज्ञान पर आधारित प्रथम कहानी है। कहानी की भाँति उपन्यास के क्षेत्र में भी इस प्रकार के उपन्यासों की रचना की गयी। डॉ. विजय कृष्ण देवशर्मा द्वारा रचित 'चंद्रलोकत प्रथम मानुह' (1963) विज्ञान पर आधारित पहला लघु-उपन्यास है। इन्होंने 'तुलसिर तलत मृगपहु चरे' नामक विज्ञान पर आधारित एक बाल उपन्यास की भी

रचना की। इसके अलावा नवकांत बरुवा द्वारा रचित 'अ-पदार्थ', डॉ. दिनेशचंद्र गोस्वामी द्वारा रचित 'एजाक जोनाकर जिलिकनि' और 'उष्म प्रवाह', अमूल्य हजारिका कृत 'आक्रमण' (1992) और 'संधान' (1992) विज्ञान पर आधारित प्रमुख उपन्यास हैं।

सत्तर के दशक के आस-पास असमिया साहित्य में असम के बाहर के स्थानों की पृष्ठभूमि पर कई उपन्यास लिखे गए। इस तरह के साहित्यकारों में इंदिरा गोस्वामी का नाम उल्लेखनीय है। उनके द्वारा रचित ज्यादातर उपन्यासों की पृष्ठभूमि असम के बाहर की है। उनके पहले उपन्यास 'चेनावर सुँत' में कश्मीर की चेनाव नदी के ऊपर पुल बनाने वाले मजदूरों के दुःख, उनकी दुर्दशा एवं अंतर्नाद को चित्रित किया गया है। उनके अन्य उपन्यास 'अरिहण' में मध्यप्रदेश की अरिहण नदी में बांध निर्माण कार्य में लिप्त मजदूरों एवं 'मामरे धरा तरोवाल' उपन्यास में रायबरेली जिले की साइ नदी के ऊपर जलसेतु बनाने के कार्य में लिप्त मजदूरों के शोषित-व्यथित जीवन की कहानी को उजागर किया गया है। उमा बरुवा (चियेम नदीर ढउ), फणीन्द्र कुमार देवचौधुरी (अनुराधार देश, जिसमें उड़ीसा के पारा द्वीप का वर्णन है।), आदि इस तरह के अन्य प्रख्यात साहित्यकार हैं।

इस दौर में ग्रामीण अंचल विशेष को केंद्र में रखकर भी उपन्यास रचे गए, जिन्हें आंचलिक उपन्यास की संज्ञा दी जाती है। इस धारा के ज्यादातर रचनाकर गाँव के जीवन से जुड़े थे। फलस्वरूप उन्होंने स्वतंत्रता के बाद ग्रामीण समाज की वास्तविक स्थिति, आर्थिक दुरवस्था के कारण बदलते मानवीय संबंध, किसानों की दयनीय स्थिति, स्वार्थ और लालच के कारण आपसी मतभेद तथा ग्रामीण युवावर्ग की पथभ्रष्टता आदि का चित्रण बहुत ही बारीकी से किया है। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने ढेकियाखोवा गाँव की पृष्ठभूमि में 'माँ' (मूल असमिया 'आइ') उपन्यास की रचना की। इसी तरह अमूल्य बरुवा ने

एक साधारण कैवर्त गाँव को केंद्र में रखकर 'एइ पदुमणि' उपन्यास लिखा तथा निरूपमा बरगोहात्रि ने नलवारी जिला की पागला दिया नदी के किनारे स्थित ढलकुछि गाँव की दरिद्रता पर 'इपारे घर सिपारे घर' उपन्यास की रचना की।

इस दौर में नगर केंद्रित उपन्यासों की एक धारा भी दिखाई देती है। आधुनिक युग में गाँव से शहर की ओर लोगों का पलायन हुआ। इसका एक कारण तो यह था कि औद्योगीकरण के कारण ग्रामीण लोग शहरों की ओर आकर्षित हुए और दूसरा यह कि गाँव की आर्थिक-सामाजिक सीमाओं के कारण युवा वर्ग आजीविका के लिए गाँव छोड़कर नगर में बसने को मजबूर हुआ। ग्रामीण जीवन की तुलना में नगरीय जीवन-प्रणाली भिन्न है। नगर केंद्रित उपन्यासों में शहरी जीवन के अनेक पक्षों को अभिव्यक्त करने का प्रयास उपन्यासकारों ने किया। इन उपन्यासों में गाँव से शहर आए युवा अजनबीपन, अकेलापन, हताशा, निराशा, घुटन का शिकार होते दिखाई देते हैं। साथ ही नगरों में जाकर युवा वर्ग के पाश्चात्य जीवन प्रणाली को अपनाने, पति-पत्नी के बीच के द्वंद्व एवं विवाह-विच्छेद आदि को इन उपन्यासों में चित्रित किया गया है, जो स्पष्ट रूप से बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य कृत 'बल्लरी' उपन्यास में दिखाई देता है।

इस तरह बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य असमिया साहित्य में बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में अपनी अत्यंत महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज करते हैं। इस दौर में असमिया साहित्य निरंतर समृद्ध हुआ है। कथा साहित्य, खासकर उपन्यास के क्षेत्र में इस दौर में कई नए प्रयोग हुए, नई संवेदनाओं के साथ असमिया उपन्यास के शिल्प में भी उत्तरोत्तर नयापन आया। इस दौर के असमिया लेखन को बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने निसंदेह बेहद प्रभावित किया है। असमिया साहित्य में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का योगदान अविस्मरणीय है।

2.3 बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य की रचनाशीलता

असमिया भाषा साहित्य की 'नव्य-काव्य परंपरा' में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का नाम अत्यंत आदर के साथ लिया जाता है। वे असमिया जातीय चेतना के प्रतिनिधि रचनाकार रहे हैं। उन्होंने अपनी लेखनी के जरिए असमिया जीवन, समाज-व्यवस्था, संस्कृति एवं भावबोध को राष्ट्रीय पहचान दिलाने का सफल प्रयास किया। उन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास, निबंध, नाटक, जीवनी, यात्रावृत्त आदि साहित्य की विविध विधाओं में साहित्य-सृजन किया। इसके साथ ही वे 'रामधेनु', 'सादिनीया नवयुग', 'बाँही', 'जनता' जैसी पत्रिकाओं का संपादन भी करते रहे। उनके द्वारा रचित साहित्य का परिचयात्मक विवरण निम्नवत् है:

कहानी:

असमिया साहित्य के 'रामधेनुयुग' के सशक्त कहानीकार बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य सामाजिक अन्याय के प्रति अत्यंत सजग थे। उनकी ज्यादातर कहानियों की विषयवस्तु सामाजिक यथार्थ पर आधारित है। उन्होंने महज कहानी कहने के लिए कहानियाँ नहीं लिखीं, बल्कि जीवन चित्रण के जरिए अपने सामाजिक अनुभवों को व्यक्त करने का प्रयास किया है। अपने जीवन के प्रारंभिक दौर में वे मार्क्स एवं गाँधी से प्रभावित थे। इसलिए उनकी कुछ कहानियों में मार्क्सवादी दृष्टिकोण एवं अन्य अधिकांश कहानियों में गाँधीवादी मानवतावादी दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। पाश्चात्य चिंतक फ्रॉयड के मनोविश्लेषणवाद का प्रभाव भी इनके साहित्य पर दिखाई देता है। 'कलंग आजिउ बइ' (1961) और 'सातसरी'(1963) और खिरिकीर काषर आसन (1998) उनके तीन कहानी-

संग्रह हैं। 'एजनी जापानी सोवाली', 'कलंग आजिउ बइ', 'शलिता मामी', 'माकनर गोसाईं', 'मियाँ मनसुर', 'वार्ड नं दुइ', 'साँथर' आदि उनकी सफल कहानियाँ है।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य द्वारा रचित '**कलंग आजिउ बइ**' कहानी स्वतंत्रता प्राप्ति की लालसा एवं मोहभंग को आधार बनाकर लिखी गयी है। उपन्यास में चित्रित ठगीराम और सोनपाही के माध्यम से उपन्यासकार ने ग्रामीण जनता के मन में अंतर्निहित स्वतंत्रता प्राप्ति की लालसा एवं उनके मोहभंग को दर्शाया है। उपन्यास में चित्रित 'कलंग' जनता के मन में अंतर्निहित ब्रिटिश विरोधी चतेना का प्रतीक है। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान जिस उमंग और आशा के साथ आम जनता अपने प्राणों की परवाह किये बिना आंदोलन में कूद पड़ी थी, स्वतंत्रता के पश्चात् उसकी वह आशा निराशा में बदल गयी। आज़ाद भारत को लेकर देखे गए उनके सपने एक-एक कर टूटते गए। फलस्वरूप उनके मन में विद्रोह की भावना पैदा हुई। वे समझ गये कि जब तक देश की आम जनता आर्थिक रूप से सम्पन्न नहीं होगी, तब तक देश की आजादी मूल्यहीन एवं अर्थहीन ही रहेगी। फलस्वरूप ठगीराम और सोनपाही निम्न-मध्यवर्गीय जनता एवं मजदूरों के साथ मिलकर सच्चे अर्थों में स्वाधीनता प्राप्ति की ओर आगे बढ़े।[31]

आजि बिया, काइलोई गाँव पंचायत नामक प्रेम-कहानी के जरिए बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने नागा जनजाति की सामाजिक व्यवस्था को दर्शाया है। यह कहानी नागा समाज के लोगों के मन में अंकुरित गणतांत्रिक चेतना की पृष्ठभूमि पर आधारित है। पुरानी एवं नयी परंपरा के बीच का अंतर्द्वंद्व तथा अंत में नई परंपरा की जीत कहानी का मुख्य विषय है। तत्कालीन नागा समाज में कुछ पुरानी विचारधारा के लोग गाँव के मुखिया की शासन-व्यवस्था के समर्थक थे, लेकिन वहीं गाँव का प्रगतिशील युवा वर्ग ग्राम पंचायत का गठन करना चाहता था। कहानी का नायक रेगु इसी वर्ग का नेता था और उसकी प्रेमिका सिराला पुरानी विचारधारा के किसी व्यक्ति की कन्या थी। रेगु और सिराला के प्रेम में

समस्या पैदा होना स्वाभाविक था। लेकिन नायक रेगु अंत में तमाम कठिनाईयों का सामना करते हुए ग्राम पंचायत का गठन कर युवा वर्ग के स्वप्न को पूरा करने में सफल होता है, साथ ही सिराला को भी अपना बना लेता है। समाज की उन्नति के लिए समाजिक परिवर्तन की आवश्यकता का संदेश देती हुई कहानी समाप्त होती है।[32]

'वार्ड नं दुइ' कहानी में भट्टाचार्य ने नायक मोहन के जरिए प्रचलित समाज व्यवस्था को परिवर्तित कर एक नई समाज व्यवस्था के निर्माण पर बल दिया है। कहानी का नायक मोहन आर्थिक शोषण पर आधारित प्रचलित समाज व्यवस्था के प्रति विरुद्ध विद्रोह करता है और एक ऐसे समाज का गठन करने का प्रयास करता है, जिसमें सभी लोगों को समान अधिकार प्राप्त हो।[33]

भट्टाचार्य द्वारा रचित **'माकनर गोसाईं'** कहानी में फ्रॉयड के मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों का प्रभाव परिलक्षित होता है। इसके साथ ही इस कहानी में उन्होंने आध्यात्मिकता के जरिए आदर्शवाद की प्रतिष्ठा करने का प्रयास भी किया है। घर-घर काम करने वाली स्त्री माकन, एक धनवान परिवार वापुकन गोसाईं के घर पर काम करती थी। गोसाईं, माकन के प्रति आकर्षित होता है। गोसाईं, माकन को मीठी-मीठी बातों से अपनी जाल में फँसाना चाहता था। गोसाईं के लाख कोशिश करने के बाद भी माकन उसकी बातों में नहीं आयी। माकन की मानसिक दृढ़ता एवं आध्यात्मिकता की पराकाष्ठा के सामने गोसाईं हार मानकर आत्मसमर्पण कर देता है। इस कहानी में भट्टाचार्य जी ने एक ओर आध्यात्मिक मूल्यबोध के महत्व एवं दूसरी ओर गोसाईं की कामप्रवृत्ति एवं नैतिकता बोध के बीच के अंतर्द्वंद्व को दर्शाया है। भट्टाचार्य इस कहानी के जरिए यह बताने का प्रयास करते हैं कि आध्यात्मिकता एवं नैतिकताबोध के जरिए ही समाज में आदर्शवाद की प्रतिष्ठा की जा सकती है।[34]

'मियाँ मनसुर' कहानी में भट्टाचार्य ने कहानी के नायक मियाँ मनसुर के जरिए समाज के सामान्य मनुष्य के नि:स्वार्थ त्याग को दर्शाया है। इस कहानी के आरंभ में अमित

शइकिया को नदी के उस पार से आती हुई अपनी पत्नी अनु के लिए नदी के किनारे इंतजार करते हुए दिखाया है। नदी के उस पार से आती हुई अनु की नाव अचानक डगमगा कर नदी में डूब जाती है। चारों ओर हलचल मच जाता है। मियाँ मनसुर वहीं मौजूद था और उसने अपनी जीवन की परवाह किए बिना अनजान अनु की प्राणों की रक्षा करता है। भट्टाचार्य जी की यह कहानी मानवतावाद का संदेश देती है।[35]

भट्टाचार्य जी ने **'एजनी जापानी सोवाली'** नामक कहानी द्वितीय विश्वयुद्ध की पृष्ठभूमि पर लिखी है। इस कहानी में द्वितीय विश्वयुद्ध के समय विश्व के, विशेषकर जापान के संत्रासपूर्ण परिवेश एवं वहाँ की जनता के मन में प्रतिफलित निराशा की भावना को दर्शाया गया है। कहानी की नायिका फुमिक एक साधारण-सी लड़की है। सुजुकी नाम के मल्लाह के साथ अपने विवाह के स्वप्न को लेकर वह खुश थी, परंतु उसका यह स्वप्न पूरा नहीं हो पाया। अमरिका द्वारा बि'द्वीप में बरसाए गए एटम बम की जहरीली गैस से अनेक मछुआरों के साथ सुजुकी की भी मृत्यु हो जाती है। इसके पहले भी फुमिक एटम बम की जहरीली गैस के कारण अपने माता-पिता को खो चुकी थी। अब फिर से अपने भावी पति की मृत्यु से वह अंदर से टूट गयी और उसने आत्महत्या करने का निर्णय लिया और सागर की ओर चली गयी। जैसे ही वह आत्महत्या के लिए सागर के किनारे पहुँची, एक मछुआरे ने उसे पीछे से चिल्लाकर आवाज़ दी। उस मछुआरे की आवाज़ सुन फुमिक आत्महत्या का विचार त्यागकर लौट जाती है और उसी समय युद्ध विरोधी आंदोलन की गूँज उसे सुनाई पड़ती है। युद्ध विरोधी उस आंदोलन की गूँज एवं उस आंदोलन में भाग लेने वाले लोगों की भीड़ को देखकर उसके मन में नए जीवन की आशा का संचार हुआ और वह भी उस आंदोलन में शामिल हो गई। इस कहानी में कहानीकार का युद्ध विरोधी एवं मानवतावादी दृष्टिकोण साफ परिलक्षित होता है।[36]

भट्टाचार्य द्वारा रचित कहानी '**शलिता मामी**' पर फ्रॉयड के मनोविश्लेषणवाद का प्रभाव दिखाई देता है। इस कहानी में कहानीकार ने शलिता और बगीराम के विवाहेतर प्रेम को दर्शाया है। सामाजिक परंपरा एवं संस्कार बोध से ग्रस्त भट्टाचार्य विवाहेतर 'अवैध' प्रेम को अस्वीकार करते हैं और इसलिए कहानी में शलीता और बगीराम का दयनीय अंत दिखाते हैं । कहानी में बगीराम और शलिता की आत्महत्या द्वारा लेखक ने सामाजिक नैतिकता एवं मर्यादा को बनाये रखने के लिए अवैध प्रेम की समाप्ति की आवश्यकता को दर्शाया है।[37]

उपर्युक्त कुछ प्रमुख कहानियों के विवेचन के पश्चात् हम यह समझ सकते हैं कि राजनैतिक चेतना, सामाजिक चेतना, मानवीय चेतना भट्टाचार्य जी की कहानियों की प्रमुख विशेषताएँ रही हैं। उनकी लगभग सभी कहानियों में आध्यात्मिक एवं संस्कार युक्त, वर्गभेद रहित समाज के निर्माण की चिंता दिखाई देती है। मानवतावाद में अटूट आस्था होने के कारण कहानीकार बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य अपनी कहानियों में मनुष्य के अन्तर्मन में निहित मानवीय अनुभूतियों जैसे दया, क्षमा, प्रेम, आदि को जागृत करने का प्रत्यन्न करते हैं। वे समाज में विद्वेषी व अहितकारी शक्तियों को बढ़ावा देना नहीं चाहते, चाहे वह युद्ध की विभीषिका हो, स्त्री-पुरुष का अनैतिक यौन-संबंध हो, राजनैतिक कुचक्र हो या फिर सांप्रदायिक संघर्ष हो। उन्होंने अपनी कहानियों में समाज की बुराईयों को छोड़ अच्छाईयों को अपनाने पर बल दिया है ताकि एक आदर्श समाज का निर्माण हो सके एवं लोगों के मन में एक आदर्श समाज का निर्माण करने की चेतना जागृत हो सके।

उपन्यास:

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने भले ही अपने साहित्यिक जीवन का आरम्भ कहानी एवं कविता लिखने से किया, परंतु उन्हें असमिया साहित्य जगत में विशेष ख्याति उनके

उपन्यासों से ही प्राप्त हुई। वे अपने समय एवं समाज के बेहद जागरूक और सचेत रचनाकार रहे हैं। उन्होंने तत्कालीन असमिया समाज-व्यवस्था, आर्थिक विषमता, ग्रामीण जीवन, असमिया लोगों की मानसिक जटिलता, नारी शोषण, समाज में नारी की स्थिति आदि तथा अपने अधिकार और देश की रक्षा के लिए असम की जनता द्वारा किये गये हर छोटे-बड़े राजनैतिक आंदोलनों व गतिविधियों को अपने उपन्यासों का विषय बनाया। उनके द्वारा रचित लगभग बीस उपन्यास हैं, जिसका संक्षिप्त परिचयात्मक विवरण इस प्रकार है:

'राजपथे रिङियाय' 1955ई. में प्रकाशित बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का पहला उपन्यास है। हालाँकि इस उपन्यास से पहले उन्होंने अपने विद्यार्थी जीवन में कलकत्ता में रहते हुए ही 'महाप्रस्थानर पथिक' नामक उपन्यास लिखा था; परंतु 1946 में कलकत्ते में हुए सांप्रदायिक संघर्ष में अमूल्य बरुवा की मृत्यु के साथ ही प्रकाशित होने से पहले ही यह उपन्यास काल के गर्भ में समाहित हो गया। अत: 'राजपथे रिङियाय' को ही बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का पहला उपन्यास माना जाता है।[38] यह एक राजनैतिक उपन्यास है। यह उपन्यास केवल एक दिन की घटना को आधार बनाकर लिखा गया है। उपन्यास में भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले दिन घटित होनेवाली घटनाओं को दर्शाया गया है। उपन्यास के नायक मार्क्सवादी युवक मोहन के स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले दिन के सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक अर्थात् सुबह पाँच बजे से लेकर शाम पाँच बजे तक के कार्यों का विवरण उपन्यास की केंद्रीय विषयवस्तु है। सन् 1947 ई. के 15 अगस्त के दिन जहाँ एक ओर सम्पूर्ण भारतवर्ष में स्वाधीनता प्राप्ति की खुशियाँ मनाई जा रही थीं, वहीं दूसरी ओर मार्क्सवादी विप्लवी युवक मोहन सुबह से ही स्वाधीनता प्राप्ति की खुशियाँ मनाने की बजाय समाज के शोषित, पद्दलित लोगों की आर्थिक स्वाधीनता को लेकर चिंतित था। मोहन यह सोच रहा था कि यह स्वतंत्रता वास्तव में समाज के सभी वर्गों के लिए है या

फिर केवल पूँजीपतियों के लिए है। आर्थिक स्वतंत्रता के बिना राजनैतिक स्वतंत्रता मूल्यहीन है। इसीलिए वह वर्षों से पीड़ित, शोषित मजदूरों-किसानों एवं साधारण जनता को राजनैतिक स्वतंत्रता के साथ ही आर्थिक स्वतंत्रता की प्राप्ति की ओर अग्रसरित करने के उद्देश्य से शाम को स्वतंत्रता प्राप्ति की खुशी मनाने के लिए आयोजित सभा में उपस्थित होता है और मंच पर स्वाधीनता के विरुद्ध एवं सरकार विरोधी भाषण देता है। परिणामस्वरूप उसे गिरफ्तार कर लिया जाता है। इस उपन्यास में नायक मोहन के जरिए असल में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य अपने मनोभावों को ही व्यक्त करते हैं।

सन् 1960 में प्रकाशित '**आइ**' उपन्यास भट्टाचार्य जी द्वारा रचित एक सामाजिक उपन्यास है। यह उपन्यास हिन्दी में 'माँ' नाम से अनूदित हुआ। इस उपन्यास में उपन्यासकार ने अपने गाँव ढेकियाखोवा को कथा के केंद्र में रखते हुए आजादी के बाद के ग्रामीण असमिया समाज की आर्थिक विषमता को दर्शाया है। इस उपन्यास में उपन्यासकार ने जहाँ एक ओर स्वतंत्रता के बाद की भूमि-समस्या एवं बढ़ते भूमि लगान और उससे उत्पन्न आर्थिक समस्या के कारण बासा एवं बूढ़े भगत के परिवार के बीच वर्षों के घनिष्ठ संबंध में पड़ी दरार को दर्शाया है, वहीं दूसरी ओर बासा की माता के सहानुभूतिपूर्ण, ममतामयी चरित्र के जरिए मानवतावादी मूल्यों को उद्घाटित किया है। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इस उपन्यास में आर्थिक विषमता के कारण समाज में पैदा हुई अशांति एवं बदलते मानवीय संबंधों का सजीव चित्रण किया है।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का उपन्यास '**इयारुइंगम**' एक राजनैतिक उपन्यास है, जिसका प्रकाशन 1961 में हुआ। यह उपन्यास हिन्दी में '**प्रजा का राज**' नाम से अनूदित हुआ। यह उपन्यास भट्टाचार्य जी ने नागालैंड में अपने अध्यापक जीवन के दौरान वहाँ के टांखुल अंचल की नागा जनजाति के जीवन एवं उनके राजनैतिक तथा सामाजिक जीवन से प्राप्त अनुभवों के आधार पर लिखा है। यह उपन्यास नागालैंड की राजनैतिक पृष्ठभूमि पर

आधारित है। द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण नागालैंड के टांखुल अंचल के नागा समाज में फैली राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक दुर्व्यवस्था के कारण नागा लोगों के मन में पैदा हुई राजनैतिक चेतना को दिखाने का प्रयास इस उपन्यास में किया गया है। इसके साथ ही उपन्यास के प्रमुख पात्र रिश्वांग और डिभेचेली के जरिए भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान नागा समाज के लोगों के आपसी मतभेद, गाँधी की अहिंसा और सुभाष की हिंसात्मक नीति के बीच के टकराव का वर्णन बहुत बारीकी से किया गया है। उपन्यास के अंत में रिश्वांग और उसकी प्रेमिका खुटिंला के भावी बच्चे में इयारुइंगम (प्रजा का राज) का बीच बोया गया है। उपन्यासकार ने उपन्यास में गाँधीवादी नीति का समर्थन किया है।

भट्टाचार्य जी का '**कालर हुमनिया**' उपन्यास 1962 में प्रकाशित हुआ। तत्कालीन असम के साफ्राइ चाय बगान की पृष्ठभूमि में रचित इस उपन्यास में ब्रिटिश सरकार के द्वारा शासित चाय बगान में भारतीय शोषित मजदूरों द्वारा किये गये आंदोलन का चित्रण किया गया है। इसके साथ ही उपन्यास में पराधीन भारत में गाँधी जी द्वारा किये गये अहिंसात्मक आंदोलन के प्रभाव के कारण चाय बगान के मजदूरों के मन में उत्पन्न वर्गीय-चेतना को दर्शाने का प्रयास किया है।[39]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य द्वारा रचित उपन्यास '**शतघ्नी**'1965 ई. में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास हिन्दी में भी '**शतघ्नी**' नाम से ही अनूदित हुआ। इस उपन्यास में भट्टाचार्य जी ने असम के तिनसुकिया जिले के मार्घेरिटा नाम के शहर के एक परिवार के जरिए भारत और चीन के बीच हुए संघर्ष के कारण मानवीय जीवन में फैले संत्रास और देश की आर्थिक एवं सामाजिक दुर्व्यवस्था को दर्शाने का प्रयास किया है।

भट्टाचार्य जी का लघु उपन्यास **'नष्टचंद्र'** 1965 में प्रकाशित हुआ। यह एक मनोवैज्ञानिक उपन्यास है। इस उपन्यास में पति-पत्नी के बीच दमित वासना के कारण उत्पन्न हुई समस्या को चित्रित किया गया है।[40]

1970 में भट्टाचार्य जी का **'प्रतिपद'** उपन्यास प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास 1938-39 के डिगबोई तेल कारखाना के मजदूर आंदोलन की पृष्ठभूमि पर रचा गया है। तत्कालीन तेल कारखाने के अंग्रेजों के अधीन होने के कारण भारतीय मजदूरों पर किए गए उनके अत्याचार और उस शोषण के खिलाफ भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्व में मजदूरों द्वारा किए गये विद्रोह का चित्रण इस उपन्यास में किया गया है। इसके साथ ही आंदोलन को समाप्त करने के लिए ब्रिटिश सरकार द्वारा मजदूर आंदोलन के नेता को आतंकवादी घोषित कर डिगबोई से बहिष्कृत करने की कथा का भी विस्तार से वर्णन किया गया है।

भट्टाचार्य जी का अत्यंत चर्चित उपन्यास **'मृत्युंजय'** 1970 में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास हिन्दी में भी 'मृत्युंजय' नाम से ही अनूदित हुआ।1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में असम की जो भूमिका थी, उसी को आधार बनाकर यह उपन्यास लिखा गया है। इस उपन्यास में तत्कालीन नगाँव के पश्चिमी अंचलों-दैपारा, मायाङ, बारपुजियाआदि में ब्रिटिश साम्राज्यवादी नीति के विरुद्ध असम की विद्रोही जनता की मानसिकता का सजीव चित्रण किया गया है तथा दारोगा शइकिया के माध्यम से तत्कालीन असम में पुलिस द्वारा समाज की भोली-भाली जनता पर किए जा रहे अत्याचार को भी दर्शाया गया है। गाँधी जी की अहिंसा नीति में विश्वास रखने वाले दैपारा सत्र के गोसाँई जी भी अंग्रेजों द्वारा असम की जनता पर किये गये अमानवीय अत्याचार को देखकर हिंसा एवंरक्तपात की नीति अपनाते हैं और अपने प्राणों की बलि भीदे देते हैं। इस उपन्यास में दिखाया गया है कि असम के नेताओं के नेतृत्व में एक मृत्युवाहिनी सेना संगठित कर युद्ध का आयोजन करने में असम की समस्त जनता सहायता करती है। असम की स्त्रियों एवं निम्नवर्ग के लोगों ने भी इस आंदोलन में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया, जिसका सजीव चित्रण इस उपन्यास में किया गया है।

1971 में प्रकाशित भट्टाचार्य जी का उपन्यास '**चिनाकी सुँति**' एक मनोवैज्ञानिक उपन्यास है। इस उपन्यास में उपन्यासकार ने वासना, प्रेम, विवाह आदि के बीच के अंतर्द्वंद्व को दर्शाया है।[41]

1972 में प्रकाशित **'कबर आरु फुल'** बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का एक लघु उपन्यास है। इस उपन्यास में उपन्यासकार ने बांग्लादेश के मुक्ति संग्राम का सजीव चित्रण किया है। उपन्यास में उपन्यासकार ने बांग्लादेश की स्वतंत्रता प्रेमी निरीह जनता पर याहिया खान के पाकिस्तानी सैनिकों द्वारा किये गये अमानवीय अत्याचारऔर नृशंस हत्याकांड, नारी शोषण आदि का चित्रण किया है। मेहेरूनिस्सा के घात-प्रतिघात की कहानी इस उपन्यास का मूल उपजीव्य है।[42]

1973 में प्रकाशित **'बल्लरी'** उपन्यास में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने उपन्यास के मुख्य पात्रों- डिगबोई के जाने माने इंजीनियर नलिन दुवारा और उनकी पत्नी अली के माध्यम से औद्योगीकरण के इस युग में डिगबोई जैसे औद्यौगिक शहरों में रहने वाले भारतीय लोगों द्वारा पाश्चात्य जीवन-शैली अपना लेने पर स्त्री-पुरुष के वैवाहिक जीवन में आने वाली समस्याओं को दर्शाया है।[43]

'टब आरु इभा' (1973) उपन्यास में उपन्यासकार ने चिड़ियाखाने में कैद गोरिल्ला दम्पत्ति के माध्यम से समाज में होने वाले शोषण एवं दमन को दर्शाया है। उपन्यास के प्रारम्भ में टब (नर) और इभा (मादा) दम्पत्ति को कुछ लोगों द्वारा अफ्रीका के जंगल से पकड़कर लाया हुआ दिखाया गया है। इभा को वे लोग अपने वश में करने में सक्षम हो जाते हैं। किन्तु टब विद्रोही मनोवृत्ति का है और वह विद्रोह करना प्रारम्भ कर देता है। इस कारण टब लोगों के वश में नहीं आता और उसे दण्ड का भागीदार बनना पड़ता है। सर्वशक्तिमान राष्ट्र किस प्रकार छोटी-छोटी जन-अस्मिताओं को या व्यक्ति को शोषित एवं प्रताड़ित करता है, उन्हें अपने अधीन करता है या करने की चेष्टा करता है, उसी को इस

उपन्यास में दिखाने का प्रयास किया गया है। टब उस वर्ग का प्रतिनिधित्व करता हुआ दर्शाया गया है जो कि समाज के ताकतवर लोगों के द्वारा शोषित किए जाने पर विद्रोह करता है। इभा समाज के उन दुर्बल व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करती है, जो चुपचाप अपने ऊपर हो रहे अत्याचार और शोषण को सहते रहते हैं।[44]

सन् 1976 ई. में प्रकाशित **'रङा मेघ'** उपन्यास भट्टाचार्य जी की एक अन्यतम कृति है। उन्होंने उपन्यास के नायक आनंद के जरिए अर्थ और सत्ता के लोभी नेताओं के शासनकाल की समाप्ति के साथ समाज में ऐसे नये नेताओं के आविर्भाव को दर्शाया है, जो समाज में परिवर्तन लाना चाहते हैं। आनन्द कैवर्त जाति का युवक है। वह समाज के ऐसे युवा नेताओं का प्रतिनिधित्व करता है, जो समाज को लोभी नेताओं एवं पूँजीपतियों के चंगुल से छुड़ाकर समाज में परिवर्तन लाना चाहता है। वह एक ऐसे समाज का निर्माण करना चाहता है, जिसमें साधारण जनता, मजदूर, किसान एवं पद्दलित लोग राजनैतिक, आर्थिक एवं सामाजिक, आदि सभी प्रकार की समस्याओं से मुक्त रह सकें और उन्हें समाज में समान अधिकार प्राप्त हो, जिससे वे खुशहाल जीवन जी सकें। इस उपन्यास में हमें भट्टाचार्य जी के गंभीर सामाजिक सरोकारों की झलक मिलती है।[45]

भट्टाचार्य जी द्वारा रचित महत्वपूर्ण उपन्यास **'मुनि चुनिर पोहर'** 1979 में प्रकाशित हुआ। हिन्दी में यह उपन्यास '**अँधेरा-उजाला**' नाम से अनूदित हुआ। इसमें स्वातंत्र्योत्तर भारत की राजनैतिक बदहाली को दर्शाने का प्रयास किया गया है। यह उपन्यास प्रमुख रूप से भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी द्वारा 1975 में घोषित आपातकाल के प्रतिवाद स्वरूप रचा गया है।

1988 में प्रकाशित '**फूलकौँवरर पाखी घौँरा'** भट्टाचार्य जी द्वारा रचित एक प्रमुख उपन्यास है। यह उपन्यास हिन्दी में 'पाखी घोड़ा' नाम से अनूदित हुआ। इस उपन्यास में

उपन्यासकार ने स्वाधीनता से पूर्व असमिया समाज पर द्वितीय विश्वयुद्ध के प्रभाव और असमिया जनता द्वारा असम में स्थायी शासन एवं असमिया भाषा के अस्तित्व की रक्षा के लिये किये गये आंदोलन का वर्णन किया है।

भट्टाचार्य द्वारा रचित '**एटि निशा**' उपन्यास में उपन्यासकार ने 1972 ई. में असम में लगाए गये निषेधाज्ञा को केंद्र में एक रात का वर्णन किया है।[46]

भट्टाचार्य द्वारा रचित '**शरत कौँवर**' एक लघु उपन्यास है। यह उपन्यास मिकिर समाज की जनश्रुतिओं एवं लोकविश्वासों को केंद्र में रखकर लिखा गया है।[47]

'**भारती**' उपन्यास में भट्टाचार्य जी ने सन् 1960में असम में हुए भाषा आंदोलन के परिप्रेक्ष्य में असमिया जनता की सामाजिक चेतना को दर्शाया है। असमिया भाषा को राभाषा का दर्जा दिलाने का आंदोलन और असमिया और बंगाली के बीच स्थापित हुआ मधुर संबंध उपन्यास का मूल विषय है।[48]

भट्टाचार्य जी द्वारा रचित '**बुढ़ी आइतार पुराण**' उपन्यास असम आंदोलन की पृष्ठभूमि पर लिखा गया है। इस उपन्यास में उपन्यासकार ने असमिया जाति के अंर्तद्वंद्व को चित्रित किया है। हालाँकि यह उपन्यास अप्रकाशित है।[49]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य द्वारा रचित उपर्युक्त प्रमुख उपन्यासों के विश्लेषण के पश्चात् हम उनके उपन्यासों के राजनैतिक-सामाजिक सरोकारों को बेहतर ढंग से समझ सकते हैं।'राजपथे रिङियाय', 'प्रतिपद', 'मृत्युंजय', 'कबर आरु फुल', आदि उपन्यासों में वे अपने समय में होनेवाले आंदोलनों का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करते हैं। 'आइ' (माँ), 'बल्लरी', 'टब आरुइभा', 'फूलकौँवरर पाखी घौँरा'(पाखी घोड़ा), 'रङा मेघ', आदि उपन्यासों में उनका प्रखर समाजवादी दृष्टिकोण परिलक्षित होता है। उनके द्वारा रचित उपन्यासों में चित्रित राजनैतिक आदर्श के संबंध में असमिया साहित्य के आलोचक गोविंद प्रसाद शर्मा 'बीरेन्द्र

कुमार भट्टाचार्यर उपन्यास' नामक अपने एक लेख लिखते हैं- "राजनैतिक आदर्श के मामले में में वे अपनी युवावस्था के मार्क्सवादी व वैज्ञानिक समाजवादी आदर्श से धीरे-धीरे साधारण समाजवादी आदर्श की ओर बढ़ते हैं और अंततः गाँधीवाद के सामाजिक आदर्श में पूर्ण आस्था स्थापित करते हैं।"[50]

कविता:

'विष्णु राभा एतिया किमान राति', 'आमि बहुवाम जनतार दरबार, बहुवाम जनतार सरकार'- बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य द्वारा रचित इन दोनों कविताओं में विप्लवी कवि की जनगण के प्रति गंभीर आस्था और एक नये समाज के निर्माण का सपना दिखाई देता है। 'क्रुसर बंधुलोई', 'जनता', 'जीवनर विपुल अमृत राशि', 'आमार कतना आशा', 'सांध्यस्वर', 'अर्घ्य' और 'अंतरम' उनकी प्रमुख कविताएँ है।[51] इसके अलावा 'मोर आरु मुक्ति नाइ', 'यात्रार शेष हले', 'प्रेम', 'नागिनीर चिठि', 'नरकर चिठि' इनकी अन्य कविताएँ हैं।[52]

अनूदित ग्रंथ:

'काजी नजरुल इस्लाम', 'परिणीता' (शरतचंद्र), 'एकुरि एटा चुटि गल्प' (रवींद्रनाथ), 'भारत बुरंजी' (डॉ. डी. डी. कोशाम्बी), 'देव दुंदुभि बाजे कार बाबे' (For whom the Bell Tolls) आदि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य द्वारा अनूदित ग्रंथ हैं।[53]

नाट्य-साहित्य:

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य द्वारा रचित नाटक 'बलिया बरागी' का प्रसारण 1946 में कलकत्ता आकाशवाणी केंद्र से हुआ था। इसके अलावा 'जोनाली', 'भारत', 'शकुंतला', 'मुक्ति', 'सोनर भोगजरा', 'अहल्या' आदि उनके प्रमुख नाटक हैं। इनका प्रसारण गुवाहाटी आकाशवाणी केंद्र से हुआ था। 'गोमधर कौँवर', पियली फुकन, मणिराम देवान आदि उनके द्वारा रचित प्रमुख एकांकी नाटक है। इसके अलावा उन्होंने फारसी नाट्यकार मलियेर द्वारा रचित Turtusse नाटक का अनुवाद असमिया में 'ब्रह्मचारी' नाम से किया था।[54]

जीवनी-साहित्य:

'श्रीअरविंद', 'बंगदेशर नवजागरण आरु ईश्वर चंद्र विद्यासागर', 'कर्मवीर चंद्रनाथ शर्मा' आदि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य द्वारा रचित प्रमुख जीवनी-साहित्य हैं।[55]

यात्रा-वृतांत:

भट्टाचार्य जी ने यात्रा साहित्य पर भी अपनी कलम चलाई। उनके द्वारा रचित प्रमुख दो यात्रा-वृत्तांत प्राप्त हैं- 1. 'सीमाइ आमनि करे', 2. 'रासिया यात्रा'। 'सीमाइ आमनि करे' सन् 1968 ई. में रूस देश के भ्रमण के अनुभव के आधार पर लिखा गया है। 'रासिया यात्रा' सन् 1983 ई. में की गयी रूस यात्रा पर आधारित है।[56]

संस्कृतिमूलक ग्रंथ:

उनके द्वारा रचित प्रमुख दो संस्कृतिमूलक ग्रंथ हैं- 1.'डेरश बछर असमिया संस्कृतित एभूमुकि' तथा 2. 'मपिन उछव'।[57]

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने कुछ कविताओं के अलावा गद्य की लगभग सभी विधाओं में साहित्य रचना की है। उन्होंने समाज की घटनाओं को बड़ी सहृदयता से अपने साहित्य में चित्रित किया है। अपने साहित्य के जरिए उन्होंने असमिया साहित्य को एक नयी दिशा प्रदान की है। असमिया साहित्य में उनका योगदान अविस्मरणीय है। वे असमिया साहित्य में ही नहीं, बल्कि भारतीय साहित्य में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

संदर्भ

---

[1] डॉ. हेमंत कुमार शर्मा, 'बीरेन्द्र भट्टाचार्यर साहित्य कृति', चंद्र प्रकाशन, टिहु, 1983, पृ. 5

[2] वही, पृ. 20

[3] वही, पृ. 6

[4] वही, पृ. 18

[5] वहीं, पृ. 17

[6] वही, पृ. 6

[7] वही, पृ. 21

[8] वही, पृ. 20

[9] वही, पृ. 17

[10] वही, पृ. 25

[11] वही, पृ. 6

[12] वही, पृ. 6 -7

[13] वही, पृ. 4

[14] वही, पृ. 8-9

[15] वही, पृ. 10

[16] वही, पृ. 11

[17] वही, पृ. 9-10

[18] वही, पृ.11

[19] डॉ. प्राप्ति ठाकुर, रामधेनुर चुटिगल्प विचार आरु विश्लेषण, भवानी वुक्स, गुवाहाटी, 2012, पृ. 134 पर उद्धृत (अनुवाद मेरा)

होमेन बरगोहात्रि लिखते हैं- "पंचाशर दशकत रामधेनुर निचिना एखन आलोचनी नोलोवा ह'ले आरु बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्यर दरे युग-मानस सचेतन एजन लेखक तार संपादक नोहोवा ह'ले, आलोचनीजीवी असमिया साहित्यत नतुन सृष्टिधर्मी परीक्षा-निरीक्षार सुचना ह'लहैँतेन ने नाई सेइ बिषये संदेह प्रकाश करा अवकाश आछे।"

[20] डॉ. हेमंत कुमार शर्मा, 'बीरेन्द्र भट्टाचार्यर साहित्य-कृति', पृ.11-12

[21] वही, पृ. 16

[22] वही, पृ. 30

[23] वही, पृ. 31 पर उद्धृत (अनुवाद मेरा)

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य कहते हैं- "मइ कि खाम, सेइटो मोर उद्देश्य नहय, मइ कि लिखिम सेइटोहे।"

[24] वही, पृ. 31-32

[25] डॉ. प्राप्ति ठाकुर, रामधेनुर चुटिगल्प विचार आरू विश्लेषण, पृ. 133

[26] डॉ. हेमंत कुमार शर्मा, 'बीरेन्द्र भट्टाचार्यर साहित्य-कृति', पृ. 27 पर उद्धृत (अनुवाद मेरा) बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य कहते हैं- "मूक मौन जनतार मुखत भाषा दिब परा टुहे आसल कथा!...जनतार उपरत मोर गभीर विश्वास आसे। जनतार मुखर भाषात हे एकोटा शब्दइ रूप लय।"

[27] वही, पृ. 16

[28] डॉ. प्राप्ति ठाकुर, रामधेनुर चुटिगल्प विचार आरू विश्लेषण, पृ. 134

[29]https://en.wikipedia.org/wiki/Birendra_Kumar_Bhattacharya,

30 मार्च 2021 को शाम 6.30 मिनट पर देखा गया।

[30] वही

[31] डॉ. प्राप्ति ठाकुर, रामधेनुर चुटिगल्प विचार आरू विश्लेषण, पृ.140

[32] वही, पृ. 141

[33] वही

[34] वही, पृ. 137

[35] वही, पृ. 139

[36] वही, पृ. 135-136

[37] वही, पृ. 139-140

[38] अमल चंद्र दास, असमिया उपन्यासर परिक्रमा, बनलता प्रकाशन, गुवाहाटी, 2012, पृ. 127

[39] वही, पृ. 134

[40] डॉ. प्रफुल्ल कटकी, स्वराजोत्तर असमिया उपन्यासर समीक्षा, वीणा लाइब्रेरी, गुवाहाटी, 2009, पृ. 53

[41] वही, पृ. 69

[42] अमल चंद्र दास, असमिया उपन्यासर परिक्रमा, पृ. 138

[43] डॉ. प्रफुल्ल कटकी,स्वराजोत्तर असमिया उपन्यासर समीक्षा, पृ. 68

[44] वही, पृ. 73

[45] डॉ. नगेन ठाकुर, एशबछरर असमिया उपन्यास, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2012, पृ. 427

[46] अमल चंद्र दास, असमिया उपन्यासर परिक्रमा, पृ. 139

[47] वही

[48] वही

[49] वही

[50] गोविंद प्रसाद शर्मा 'बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्यर उपन्यास' (लेख), डॉ. नगेन ठाकुर, एशबछरर असमिया उपन्यास, पृ. 431, पर उद्धृत(अनुवाद मेरा)

गोविंद प्रसाद शर्मा लिखते हैं- "राजनैतिक आदर्शत तेउर तरुण अवस्थार मार्क्सवादी बा वैज्ञानिक समाजवादी आदर्श क्रमे क्रमे साधारण समाजवादी आदर्शलोई नामि आहिल आरु शेषत गाँधीवादर सामाजिक आदर्शतेइ पूर्ण आस्था स्थापना करिले।"

[51] डॉ. हेमंत कुमार शर्मा, बीरेन्द्र भट्टाचार्यर साहित्य-कृति, आमार कथा, पृ. 08

[52] वही, पृ. 40, 41, 42, 43

[53] वही, पृ. 13

[54] वही, आमार कथा, पृ.10

[55] वही, पृ. 10-11

[56] वही, पृ. 11

[57] वही

अध्याय- 3

यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री और स्त्री-पुरुष संबंध

3.1 यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री

3.2 यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री-पुरुष संबंध

3. यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री और स्त्री-पुरुष संबंध

3.1 यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री

सृष्टि के प्रारम्भ में स्त्री का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। उसके योगदान के बिना संसार की कल्पना ही अधूरी है। स्त्री सर्वदा ही पुरुषों की प्रेरणादायिनी शक्ति रही है। वह माता, बहन, पत्नी व प्रेमिका, आदि रूपों में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र एवं लक्ष्यों की प्राप्ति में उसकी सहायक सिद्ध हुई है, फिर भी वह पुरुष समाज द्वारा शोषित एवं प्रताड़ित होती रही है।

भारतीय साहित्यकारों द्वारा प्राचीनकाल से लेकर अब तक स्त्री को केंद्र में रखकर तमाम साहित्य रचे जा चुके हैं। कुछ साहित्यकारों ने अपने साहित्य में स्त्री के नख-शिख का वर्णन किया तो कुछ ने स्त्री के मनोभावों को लेकर साहित्य रचे। बदलते समय के साथ-साथ साहित्यकारों के मन में अपने समाज के प्रति दायित्व एवं कर्तव्य की नयी चेतना का संचार हुआ। फलतः उन्होंने सामाजिक यथार्थ को अपने साहित्य का विषय बनाया, जिसमें उन्होंने सदियों से शोषित एवं प्रताड़ित हो रही स्त्रियों के हक के लिए आवाज उठायी एवं उन्हें समाज में अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति जागरूक करने का प्रयत्न किया। हिन्दी के साहित्यकार यशपाल एवं असमिया साहित्यकार बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ऐसे ही साहित्यकार हैं, जो अपने साहित्य में नारी स्वतंत्रता के हक में और नारी को पराधीनता के शिकंजे में जकड़ने वाली समस्त परंपराओं, रूढ़ियों और व्यवस्थाओं के विरुद्ध आवाज़ उठाते दिखाई देते हैं। प्रस्तुत उप-अध्याय में यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में मौजूद नारी और उससे जुड़े प्रश्नों के तुलनात्मक विश्लेषण के साथ-साथ दोनों लेखकों की स्त्री-दृष्टि का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य अपने-अपने उपन्यासों में स्त्री-पुरुष के समानाधिकार के स्वर को पूरी ताकत के साथ मुखरित करते हैं। यही कारण है कि उन्होंने अपने लगभग सभी उपन्यासों में ऐसी स्त्री पात्रों को रचा जो सदियों से चली आ रही सड़ी-गली परंपरा के प्रति विद्रोह करते हुए समाज में नारी जागृति का आह्वान करने का प्रयास करती हैं। यशपाल के उपन्यास 'दादा कामरेड' की शैल आधुनिक विचारों वाली युवती है। वह समाज द्वारा बनाये गये उस बंधन को स्वीकार नहीं करती जो स्त्री को पुरुष की दासता स्वीकार करने के लिए बाध्य करता हो। वह नारी को स्वतंत्रता के अधिकार से वंचित रखने वाले पुरुष समाज पर कटाक्ष करती हुई हरीश से कहती है-"यदि स्त्री को किसी न किसी की बनकर ही रहना है तो उसकी स्वतंत्रता का अर्थ ही क्या हुआ? स्वतंत्रता शायद इसी बात की है कि स्त्री एक बार अपना मालिक चुन ले, परंतु गुलाम उसे जरूर बनना है।"[1] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'अँधेरा-उजाला' उपन्यास की स्त्री पात्र सेउती और अलका भी यशपाल की शैल(दादा कामरेड) की भाँति पुरुष के अधीन गुलाम बनकर रहने का विरोध करती है। सेउती पुरुष प्रधान समाज को चुनौती देती हुई मीनधर से स्पष्ट कहती है-"मेरी भी क्या एक जिंदगी नहीं है? मैं पुरुष की दया पर ही हमेशा जिंदा रहना नहीं चाहती।"[2] इसी उपन्यास की अलका भी आधुनिक विचारों वाली महत्वाकांक्षी युवती है। उसे भी पुरुष के अधीन रहना स्वीकार नहीं। इसी कारण वह अपने पति मीनधर को छोड़ अकेले जीवन व्यतीत करती है। मीनधर द्वारा स्त्री-पुरुष के कार्य क्षेत्र की असमानता के संबंध में कही गयी बातों के प्रत्युत्तर में अलका मीनधर से कहती है-"सुनो, यह सब झूठी धारणाएँ अब तुम्हें छोड़नी हैं। मैं दिखला दूँगी कि नारी भी पुरुष के समान ही काम कर सकती है।"[3]

यशपाल पारंपरिक विवाह संस्था को स्त्री की स्वतंत्रता में बाधक समझते हैं। अत: उन्होंने अपने उपन्यासों में ऐसी स्त्री पात्रों को रचा जो सदियों से चली आ रही इस पारंपरिक विवाह संस्था को निरर्थक मानती है। 'दादा कामरेड' की शैल प्रगतिशील विचार

की युवती है। वह विवाह को स्त्री की स्वतंत्रता में बाधक समझती है। वह नहीं चाहती कि पूरा जीवन वह एक पुरुष के इशारों पर कठपुतली की तरह नाचती रहे। इसलिए विवाह का विरोध करते हुए वह हरीश से कहती है-"जब स्त्री को एक आदमी से बँध जाना है और सामाजिक व्यवस्थाओं के अनुसार उसके अधीन रहना है, उस पर निर्भर करना है; उस संबंध को चाहे जो नाम दिया जाये, वह है स्त्री की गुलामी ही।"[4] 'मनुष्य के रूप' उपन्यास की पात्र मनोरमा भी शैल की भाँति विवाह संस्था का विरोध करती है और सोमा का पक्ष लेती हुई अपनी माँ से कहती है-"क्या कर लेगी दुनिया? क्या निर्लज्जता की है उसने? आजकल लड़कियों से पूछे बिना कौन भला आदमी उनकी शादी करता है? दुनिया तो सती पार्वती को पूजती है। क्या किया था पार्वती ने? उसने भी जिद्द की थी कि शिवजी से ही विवाह करूँगी। इस जिद्द में जल कर मर गई। यह लड़की क्या अनर्थ कर रही है? बस यही न कि वह गरीब है।"[5]

दरअसल,यशपाल मनोरमा के जरिए प्राचीनता एवं नवीनता में साम्य दिखाते हुए परंपरागत विवाह संस्था का विरोध करते हैं और प्राचीनता का उदाहरण देते हुए आधुनिक नारी-जाति की मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करते हैं। 'मेरी तेरी उसकी बात' की उषा भी आधुनिक विचार वहन करने वाली युवती है। वह विवाह संस्था का तिरस्कार करती हुई कहती है-"माँ-बाप का इतना खून-पसीना इसीलिये बहाया है कि किसी भागवान के घर जाकर जद्दन और बेबे का काम सम्भालूँ? आंटी, सच बात यह कि वाइफ चाहे लाट गवर्नर की हो, रहेगी मोहताज़। आज़ादी और इज्जत अपने पाँव खड़े इंसान की..।"[6]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'पाखी घोड़ा' उपन्यास की माकन पुरुष प्रधान समाज में विवाह के नाम पर स्त्री के ऊपर किये जाने वाले शोषण और अत्याचार के प्रति विद्रोह करती हुई समाज में जागरूकता फैलाने का दृढ़ निश्चय करती है। उसके मनोभावों का

चित्रण उपन्यासकार ने इन शब्दों में किया है- "जितने दिनों तक नारी, पुरुष के समक्ष अबला बनकर रहेगी, उतने दिनों तक उसे मुक्ति नहीं मिलेगी। सतीत्व की रक्षा की जिम्मेदारी केवल नारी की ही नहीं है, पुरुष की भी होनी चाहिए। तब उसने दृढ़ निश्चय किया कि वह विवाह-संस्कार, सतीत्व मर्यादा, घूमने-फिरने आदि मामलों में पहले से चले आ रहे नियम-कानून, बाधा-निषेध को कतई ही नहीं मानेगी। उन नियमों में बँधकर नहीं चलेगी। दंगे-फसादों में सताये गए पुरुषों की अपेक्षा नारियों की यातनाएँ-परेशानियाँ सैकड़ों गुना अधिक हृदय विदारक थीं। घर-परिवार, समाज-संसार में पुरुषों की ही भाँति नारी को भी समान अधिकार पाना होगा। नैतिकता की बासी पड़ गई, वर्तमान स्थितियों में जिनका प्रयोग अनावश्यक है, सड़-गल-पच गयी जीर्ण-शीर्ण धारणाओं-मान्यताओं के खिलाफ नारी को विद्रोह करना पड़ेगा। नोआखाली में भ्रमण करने के अनन्तर उसे अनुभव हुआ कि नोआखाली की अत्याचार पीड़ित नारियों के लिए चूड़ी और सिंदूर की अपेक्षा नयी, शक्तिशाली, युगानुरूप नैतिक धारणा की अधिक आवश्यकता है। आवश्यकता है पुरुषों के दासत्व के प्रति नये विद्रोह की। यह सिंदूर और ये चूड़ियाँ तो नारी निर्बलता के प्रतीक हैं।"[7]

साथ ही बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य अपने उपन्यास 'अँधेरा-उजाला' की पात्र बीनू के माध्यम से भारतीय समाज में सदियों से चली आ रही विवाह पूर्व कुण्डली मिलान की परम्परा का विरोध करते हैं। बीनू डाक्टर शोन्ति से प्रेम करती है और उससे विवाह करना चाहती है। लेकिन बीनू की माँ शोन्ति और बीनू की कुण्डली की गणना न मिलने के कारण इन दोनों का विवाह नहीं करवाना चाहती। बीनू जब शोन्ति के साथ 'सिविल मैरेज' करने का फैसला लेती है, तो न चाहकर भी बीनू की माँ शोन्ति और बीनू की शादी करवाने के लिये राजी हो जाती है। उपन्यासकार इस उपन्यास के दूसरे पात्र मीनधर के माध्यम से

विवाह संबंधी अपने मनोभाव को इस प्रकार व्यक्त करता है-"राशि-गणना बिठाने के प्रहसन की अपेक्षा युवक-युवती एक-दूसरे को आविष्कार कर, जान-पहचान कर, समझ-बूझकर विवाह करें, यह रीति बड़ी सुन्दर है। यह पारस्परिक समझ-बूझ ही दांपत्य-जीवन को सुखी बना सकती है।"[8]

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ये दोनों उपन्यासकार अपने-अपने उपन्यासों में अंतरजातीय विवाह का समर्थन करते हुए दिखाई देते हैं। यशपाल 'मनुष्य के रूप' उपन्यास में हिन्दू लड़की मनोरमा एवं पारसी युवक सुतलीवाला तथा 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में ईसाई लड़की उषा एवं हिन्दू लड़के अमरकांत के विवाह के माध्यम से अंतरजातीय प्रेमविवाह का समर्थन करते हुए परंपरागत भारतीय विवाह संस्था को छिन्न-भिन्न करने का प्रयास करते हैं। वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य अपने उपन्यास 'माँ' में कलिता कुल के लड़के रजत का विवाह सूतकुल की लड़की नुमली के साथ और 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में मुसलमान लड़की फ़िरोजा का विवाह हिन्दू युवक रबीन दत्त के साथ करवाकर अंतरजातीय और अंतरधार्मिक प्रेम विवाह का समर्थन करते हैं। 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में माकन फिरोजा के अंतरधार्मिक विवाह के संबंध में अपनी माँ से कहती है-"माँ, इसे अगर मैं बुरा काम समझती तो मैंने बधाई का तार कभी नहीं दिया होता। सही बात तो यह है कि, उसने कोई गलती नहीं की है। हिन्दू-मुसलमान के बीच विवाह होना तो तनिक भी बुरा नहीं है।"[9]

यशपाल 'मेरी तेरी उसकी बात' की उषा और 'झूठा सच' उपन्यास की कनक के माध्यम से विवाह संबंधी इस मान्यता का भी खंडन करते हैं कि 'विवाह एक बार होता है, बार-बार नहीं'। यशपाल की स्पष्ट मान्यता है कि प्रेम विवाह में भी चुनाव अगर गलत हो

जाए तो उस रिश्ते को ढोने की बजाय उसे समाप्त कर देना ही उचित है। 'झूठा सच' में जयदेव पुरी से असंतुष्ट कनक तिल-तिल कर मरते हुए उसके साथ रहने की बजाय उससे अलग हो जाना बेहतर समझती है। इसी तरह 'मेरी तेरी उसकी बात' की उषा अमर को स्पष्ट रूप से कहती है- "अब फिर चुनना है तो।... इट इज़ नॉट यू।"[10]

यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, ये दोनों उपन्यासकार शिक्षा को स्त्री मुक्ति का अन्यतम साधन मानते हैं। इन दोनों उपन्यासकारों का मानना है कि जब तक स्त्री शिक्षित नहीं होगी, तब तक वह अपने सामाजिक अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं हो सकती। शिक्षा स्त्री को उसके सामाजिक अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति सजग बनाने में मुख्य भूमिका अदा करती है। अत: यह अकारण नहीं है कि यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों की ज्यादातर स्त्री पात्र, चाहे वे शहरी हों, ग्रामीण हों या फिर आदिवासी हो, वे सभी शिक्षित, विवेकशील एवं अपने सामाजिक कर्तव्यों और अधिकारों के प्रति अत्यंत सजग दिखाई देती हैं। यशपाल द्वारा रचित उपन्यास 'दादा कामरेड' की शैल एम. ए. है, 'गीता' की गीता, 'मेरी तेरी उसकी बात' की उषा और माया रिसर्च स्कॉलर हैं, 'झूठा सच' की तारा आई.ए.एस. अधिकारी और कनक एम.ए. है, 'दिव्या' की दिव्या को नृत्यकला में सरस्वती का खिताब मिला है। वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास 'इयारुइंगम' की खुटिंगला (नागा जनजाति की स्त्री) अंग्रेजी स्कूल से पढ़ी हुई है, 'अँधेरा-उजाला' की बीनू(ग्रामीण स्त्री) बी.ए. है तो अलका (शहरी स्त्री) एम. ए. है, 'पाखी घोड़ा' की जयंती(ग्रामीण युवती) नृत्यकला में पारंगत है तो माकन शांतिनिकेतन से पढ़ी हुई है। ये सब अपने सामाजिक अधिकारों के प्रति सजग स्त्रियाँ हैं, जो दूसरों के बहकावे में नहीं आतीं और पुरुषों के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर चलने का सामर्थ्य रखती हैं।

पुरुष वर्चस्ववादी समाज में नारी के पास आर्थिक अधिकार प्रायः नहीं है। यहाँ नारी का प्राथमिक और सबसे प्रमुख कर्तव्य है घर को सँभालना। अत: स्त्रियाँ आर्थिक रूप से किसी-न-किसी पर निर्भर रहती हैं। शादी से पहले पिता या भाई के ऊपर और शादी के बाद पति के ऊपर। आर्थिक पराधीनता के कारण वह शोषण का शिकार होती आई हैं। इस बात को यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य भलीभाँति समझते थे। यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ही उपन्यासकार स्त्री की आर्थिक पराधीनता को नारी उत्पीड़न का सबसे महत्वपूर्ण कारण मानते हैं। इन दोनों का मानना है कि जब तक नारी आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर नहीं होगी, तब तक वह शोषण का शिकार होती रहेगी। यशपाल नारी की आर्थिक दीनता के संबंध में अपने निबंध 'बात बात में बात' में लिखते हैं-"समाज परिवारों का समूह है इसीलिये समाज पर पुरुष का शासन है। यदि स्त्री आर्थिक रूप से पुरुष के अधीन और आश्रित रहेगी तो समाज में उसकी स्थिति पुरुषों के समान कभी नहीं हो सकेगी। समाज में पुरुष के समान अधिकार और स्थिति पाने के लिये स्त्री का आर्थिक रूप से आत्म-निर्भर होना आवश्यक है।"[11]

यशपाल के उपन्यासों की नारी पात्र चाहे वह 'दादा कामरेड' की शैल और यशोदा हो, 'देशद्रोही' की चंदा और राज हो, 'गीता' की कामरेड गीता या 'मनुष्य के रूप' की सोमा या फिर 'दिव्या' की नायिका दिव्या हो, ये सब किसी-न-किसी प्रकार आर्थिक परतंत्रता के कारण दु:ख झेलती हुई दिखाई देती हैं। 'दादा कामरेड' की शैल आधुनिक विचारों वाली युवती है। वह अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व निर्मित करना चाहती है, परंतु आर्थिक परिस्थितियों के कारण नहीं कर पाती। मजदूर वर्ग के प्रति उसे सहानुभूति है, परंतु मजदूरों के आंदोलन में आर्थिक रूप से उनकी सहायता नहीं कर पाती, क्योंकि शैल के पिता लाला ध्यानचंद इसके खिलाफ थे। अत: आर्थिक रूप से पिता पर निर्भर रहने के कारण शैल चाहकर भी मजदूरों की सहायता कर पाने में असमर्थ है। यशपाल ने शैल की

विवशता को उसके प्रेमी राबर्ट के शब्दों में इस प्रकार अभिव्यक्त किया है-"शैल दे ही क्या सकती है? पिता की इच्छा के बिना गाड़ी के पेट्रोल तक के लिए उसे पैसा नहीं मिल सकता।"[12]

'दादा कामरेड' उपन्यास की यशोदा तथा 'देशद्रोही' उपन्यास की चंदा और राज के माध्यम से यशपाल ने गृहस्थ जीवन व्यतीत करने वाली नारी की विवशता को दर्शाया है। यशोदा आर्थिक रूप से पति पर निर्भर होने के कारण अपने स्वतंत्र वजूद के लिए संघर्ष करती है। चंदा पुरानी एवं नई मान्यताओं के बीच फँसकर घुटन-भरा जीवन व्यतीत करती है। वह चाहकर भी इस जीवन से खुद को मुक्त नहीं कर सकती, क्योंकि वह आर्थिक रूप से स्वतंत्र नहीं है। इस जीवन से वह खुद को तभी मुक्त कर पाएगी जब वह आत्मनिर्भर बनेगी। इस संबंध में 'देशद्रोही' उपन्यास के डॉ.खन्ना चंदा से कहते हैं-"चाँद, स्त्री की स्थिति ही समाज में ऐसी है। जब तक उसे जीवन के साधन जुटाने का स्वतंत्र अवसर और अधिकार नहीं, उसकी स्वतंत्रता, प्रेम और आचार सब पुरुष का खिलौना है। तुमने अपने आपको बलिदान कर सब सहा, अब उसके प्रति विद्रोह भी करो तो क्या कर सकती हो? जब तक जीवन के संघर्ष में अपने पैरों पर खड़े होने का साधन तुम्हारे पास न हो...।"[13]

चंदा की बहन राज भी आर्थिक स्वावलंबन के अभाव के कारण अपने पूर्व पति डॉ. खन्ना को शरण नहीं दे पाती है, क्योंकि उसे डर था कि उसका बसा-बसाया घर न टूट जाए। यदि वह आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होती तो अवश्य ही अपने बीमार पूर्व पति को आश्रय देती तथा उसका इलाज भी करवाती। यशपाल ने डॉ. खन्ना के माध्यम से स्त्री की विवशता को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है-"मैं राज के लिये शत्रु हो गया? वह दीवार की ओट पड़ी हैं। मुझे देखने भी नहीं आ सकती? वह तो मेरे प्रेम में प्राण न्यौछावर कर रही थी!... आज क्या हो गया? हाय रे स्त्री! तेरा प्रेम भी मजबूरी का है, गुलामी का है।"[14]

'दिव्या' उपन्यास की दिव्या को भी आर्थिक पराधीनता के कारण वेश्या जीवन स्वीकार करना पड़ता है। 'मनुष्य के रूप' उपन्यास में सोमा को भी आर्थिक आत्मनिर्भरता के अभाव में अनेक यातनाएँ सहनी पड़ती हैं। पैसों के लालच में अपने ही पिता द्वारा वह बेच दी जाती है। पति की मृत्यु के बाद उसके सास-ससुर भी उसे बेचने की योजना बनाते हैं, परंतु वह किसी के हाथों बिकने की बजाय ड्राइवर धनसिंह के साथ भाग जाना उचित समझती है और धनसिंह के साथ भाग जाती है। लेकिन यहाँ भी वह पूरी तरह सुरक्षित नहीं रह पाती। धनसिंह कभी-कभी काम के सिलसिले में रात-भर घर नहीं लौटता था। मौका पाकर ड्राइवर शमशुल और जग्गी सोमा को छेड़ते थे और गंदी-गंदी बातें कहते थे। इस बात का जिक्र सोमा ने धनसिंह से किया। एक रात धनसिंह घर पर ही था। ड्राइवर शमशुल और जग्गी हर रोज की तरह सोमा को बाहर से गंदी-गंदी बातें बोल रहे थे, जिसे सुनकर धनसिंह का खून खौल उठा। उसने दरवाजा खोला और डंडा लेकर दोनों पर टूट पड़ा। एक के सिर पर डंडे का प्रहार जोर से लगा और वह लड़खड़ाकर गिर पड़ा। दूसरा आदमी भाग निकला। कुछ देर बाद उसे ख्याल आया कि अगर वह आदमी मर गया तो किसी भी वक्त उसे पुलिस आकर पकड़ लेगी और उसे फाँसी दे दी जाएगी। वह डर गया और अपना रुपया-पैसा लेकर भाग गया। धनसिंह के फरार हो जाने पर सोमा बैरिस्टर के परिवार में रहने लगी। वहाँ आर्थिक विवशता के कारण शरण पाने के बदले वह बैरिस्टर जगदीश के सम्मुख आत्मसमर्पण कर देती है। वह खुद को समझाते हुए सोचती है- "उनकी कृपा के बदले में उसके पास तो सिवाय इनकार न कर सकने, उन्हें नाराज न करने के और कुछ नहीं।.....जो खो गया, उसे कब तक रोये? रोते रहने से हाथ क्या लगेगा?"[15] परंतु सोमा जब आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो जाती है तब वह धनसिंह को पहचानने से इनकार कर देती है। सोमा के जरिए यशपाल दिखाते हैं कि एक ओर जहाँ आर्थिक परतंत्रता स्त्री को इस प्रकार पंगु बना देती है कि न चाहते हुए भी उसे दूसरे के सम्मुख

आत्मसमर्पण करने को मजबूर होना पड़ता है, वहीं दूसरी ओर आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने के पश्चात् स्त्री खुद के जीवन का निर्णय लेने में सक्षम भी होती है।

इसी क्रम में 'झूठा सच' की तारा और कनक को भी देखा जा सकता है। ये दोनों आर्थिक आत्मनिर्भरता के अभाव में सामाजिक अन्याय एवं शोषण की शिकार होती हैं, परंतु जब वे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो जाती हैं तो अपने-अपने पूर्व पतियों का परित्याग कर अपनी मुक्ति का रास्ता खुद तलाशती हैं। 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास की उषा अपने जीवन की सार्थकता आत्मनिर्भर बनने में मानती है। अपने जीवन की सार्थकता के संबंध में वह कहती है- "जीवन की पूर्णता या सार्थकता के लिए विवाह के अलावा दूसरे उद्देश्य या लक्ष्य भी हो सकते है।"[16]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास 'प्रजा का राज'(मूल असमिया में 'इयारुइंगम') की शारेंला भी यशपाल के उपन्यास 'मनुष्य के रूप' की स्त्री पात्र सोमा की भाँति आर्थिक अभाव के कारण पुरुष के हाथों खुद को समर्पित करने पर मजबूर होती है। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान एक जापानी युवक इश्वेवरा द्वारा शोषित होने के बावजूद शारेंला आर्थिक आत्मनिर्भरता के अभाव में न चाहते हुए भी उसके साथ रहती है। जापानी युवक द्वारा अकेला छोड़ जाने के पश्चात् वह आश्रयहीन हो जाती है। गाँववालों के परामर्श से शारेंला नागा गाँव के मुखिया गाँठिंगखू के आश्रय में रहने लगी थी। वहाँ गाँठिंगखू द्वारा दुष्कर्म करने के प्रयास के कारण शारेंला रात में ही उसका घर छोड़ कर चली जाती है। रात के अंधेरे में वह फानिटफांग के घर में आश्रय लेती है। वहाँ वह न चाहते हुए भी फानिटफांग के सम्मुख आत्मसमर्पण करती है। परंतु जब वह गाँव में सेविका का काम कर आत्मनिर्भर बन जाती है तो वह फानिटफांग के प्रेम को ठुकरा देती है।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'मृत्युंजय' उपन्यास की कॅली दीदी एक आत्मनिर्भर स्त्री है। उपन्यास में चित्रित वह एक ऐसी स्त्री पात्र है, जिसने अपना सर्वस्व स्वाधीनता

आंदोलन में निछावर कर दिया है। अपना कहलाने के लिए उनके पास कोई नहीं है। वह विधवा होने के बावजूद खुद को असहाय नहीं समझती, बल्कि समाज के शोषित एवं पीड़ित लोगों की सहायता करती है। इसी तरह 'पाखी घोड़ा' उपन्यास की माकन और 'अँधेरा-उजाला' उपन्यास की अलका आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने के कारण अपनी शर्तों पर अपना जीवन जीने में सक्षम हुई हैं।

इस तरह यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ने अपने-अपने उपन्यासों में आर्थिक रूप से परतंत्र स्त्री, चाहे वह किसी भी युग, किसी भी वर्ग या किसी भी समाज की हो, की पीड़ा और उसके संघर्ष को दर्शाया है। साथ ही ये दोनों उपन्यासकार अपने-अपने उपन्यासों की नारी पात्रों द्वारा समस्त नारी-जाति को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने का संदेश देते हैं, ताकि वह समाज में पुरुष के समान अधिकार प्राप्त कर सके और स्वतंत्र रूप से अपना जीवन अपनी शर्तों पर जी सके। यशपाल के संबंध में राजीव सक्सेना बिल्कुल ठीक लिखते हैं-"यशपाल ने प्रारम्भिक रचनाओं में पूँजीवाद और पूँजीवादी जीवन मूल्यों (खरीद-फरोख्त और मुनाफे की भावना) से समाज की मुक्ति यानी समाजवाद की स्थापना के साथ स्त्री को रोजगार की पूर्ण स्वतंत्रता यानी उसकी आर्थिक आत्मनिर्भरता को नारी स्वतंत्रता का मूलाधार माना है।"[17]

भारतीय समाज में स्त्रियों के लिए उनकी सबसे बड़ी नैतिकता उनकी यौन-पवित्रता को माना जाता है। यशपाल अपने उपन्यासों में स्त्रियों के लिए सदियों से चले आ रहे नैतिक मूल्य एवं मर्यादा की शृंखला की कड़ियों को तोड़ने का भरसक प्रयास करते हैं। यशपाल के यौन संबंधी विचारों के संबंध में श्रीमती सरोज बजाज कहती हैं-"यशपाल यौन प्रवृत्तियों और आकर्षण को सहज और स्वाभाविक मानते हैं।"[18]

यशपाल ने अपने उपन्यासों में ऐसी स्त्री पात्रों को रचा है जो यौन-संबंधी अपनी स्वतंत्रता एवं इच्छा को व्यक्त करना अपना मानवीय अधिकार मानती हैं। 'दादा कामरेड'

की शैल बचपन से लेकर किशोरावस्था तक कई पुरुषों के संपर्क में आती है और उनके साथ उसका शारीरिक संबंध भी बनता है। शैल अपनी एक सहेली के भाई के साथ अपने संबंध के बारे में बेझिझक हरीश के सामने कहती है-"वह हमारे यहाँ आता। कई-कई घण्टे हम साथ रहते। तब हम अपने दूसरे मकान में थे। जीने पर उसके कदमों की आहट पा मैं तड़प उठती। जितनी देर वह हमारे यहाँ रहता, मैं जीवित रहती, उसके चले जाने पर मर जाती।"[19] यहाँ तक कि शैल स्वेच्छापूर्वक हरीश को अपनी देह सौंपती है, जिससे वह गर्भवती हो जाती है। परंतु वह अपने इस कार्य को अनैतिक नहीं मानती क्योंकि वह इसे अपना शारीरिक एवं नैसर्गिक अधिकार मानती है। वह समाज की परवाह न कर स्पष्ट शब्दों में अपने पिता से कहती है-"स्त्री होने के नाते मेरा जो प्राकृतिक अधिकार है, उससे कुछ अधिक मैंने नहीं किया है। मैं मनुष्य हूँ; मनुष्य बनी रहना चाहती हूँ।"[20]

'झूठा सच' की डॉ. श्यामा भी अविवाहित है, परंतु मिस्टर डे के साथ उसके संबंध हैं। वह उसे गलत नहीं मानती क्योंकि शारीरिक आवश्यकता को वह प्राकृतिक आवश्यकता मानती है। 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में भी उषा और माया स्वतंत्र यौन संबंध का समर्थन करती हैं। उषा अमर की मृत्यु के पश्चात् पाठक के संपर्क में आकर उससे विवाह का निर्णय करती है। वह समाज की अनैतिक मान्यताओं का विरोध करती हुई दिखाई देती है। इसी प्रकार माया घोष की पत्नी है, लेकिन विवाहित होते हुए भी वह पाठक के प्रति अनुरक्त है। वह पाठक द्वारा समाज के बंधन और मजबूरियों की बातों का विरोध करती हुई कहती है-"पत्नी हूँ पर क्या मुझे किसी और को प्यार करने का हक नहीं! समाज और संसार की अस्वाभाविक दमन की मान्यताएँ मुझे नामंजूर हैं। समाज के दूसरे अन्यायों का विरोध करेंगे तो इसका भी विरोध करेंगे।"[21]

'मनुष्य के रूप' की मनोरमा भी पति सुतलीवाला की नपुंसकता के कारण उससे असंतुष्ट रहती है। इसी कारण वह अपने पति को छोड़ देती है और भूषण से शादी कर लेती

है। स्पष्ट है कि यशपाल की नारी सामाजिक-आर्थिक मुक्ति के साथ ही देह की मुक्ति भी चाहती है।

मगर बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य स्त्री के मुक्त यौन संबंध को अनैतिक मानते हैं। उनका मानना है कि स्त्रियों के ये अनैतिक कार्य एक आदर्श समाज के निर्माण में बाधा उत्पन्न करते हैं। यही कारण है कि उनके द्वारा रचित स्त्री पात्र चाहे वह शहरी हो या ग्रामीण शादी के बाद अपने पति के अलावा किसी भी दूसरे पुरुष के साथ शारीरिक संबंध स्थापित करती हुई दिखाई नहीं देती। 'मृत्युंजय' उपन्यास की डिमि(ग्रामीण स्त्री) स्वच्छंद विचारों वाली युवती है। वह अपने पति के रहते हुए भी बचपन के प्रेमी धनपुर से अपने प्रेम का इज़हार करती है। उसका प्रेम आत्मिक है, शारीरिक नहीं। इसी तरह 'अँधेरा-उजाला' उपन्यास की अलका(शहरी स्त्री) भी स्वच्छंद विचारोंवाली युवती है। भले ही वह अपने पति मीनधर को छोड़ देती है और अपनी बेटी को लेकर अकेले जीवन व्यतीत करती है, परन्तु किसी दूसरे पुरुष के संपर्क में नहीं आती। 'पाखी घोड़ा' उपन्यास की स्त्री पात्र जयंती(ग्रामीण स्त्री) शादी के पहले ही दुदू को अपना देह सौंप देती है और गर्भवती हो जाती है। जब उसे पता चलता है कि वह गर्भवती है तो वह घर छोड़कर भाग जाती है। उसके प्रेमी दुदू को जब यह बात मालूम पड़ती है कि जयंती गर्भवती होने के कारण घर छोड़कर चली गयी है तो वह जयंती को ढूँढ कर लाता है और उससे शादी भी कर लेता है। जयंती दुदू से शादी कर समाज में स्त्री की नैतिकता को बनाये रखने में सफल होती है। लेकिन 'पाखी घोड़ा' उपन्यास की ही चम्पा एक ऐसी स्त्री पात्र है, जिसका विवाहेतर संबंध पंचानन नाम के एक विवाहित पुरुष से होता है। चंपा के इस विवाहेतर संबंध को और उसकी स्वतंत्र प्रवृत्ति को बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य चंपा के भटकाव के रूप में चित्रित करते हैं। चंपा इसी भटकाव में नशे की हालत में सड़क दुर्घटना में मर जाती है। ज़ाहिर है बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य स्त्री की यौन स्वतंत्रता को स्वेच्छाचार के रूप में प्रस्तुत करते हैं और इसलिए उसका समर्थन भी नहीं करते।

यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इन दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में राष्ट्रीय आंदोलन में पुरुषों की ही भाँति स्त्रियों की बराबर की हिस्सेदारी को दर्शाया है। यशपाल के यहाँ स्त्रियाँ प्रत्यक्ष रूप में आंदोलन में भाग लेती हुई दिखाई देती हैं।'मेरी तेरी उसकी बात' की उषा समाजवादी विचारधारा से प्रभावित स्त्री है, जो आंदोलन के दौरान विश्वविद्यालय में ब्रिटिश विरोधी भाषण देती है। उसके बाद वह भूमिगत रहकर भी अपने भाषणों के जरिए देश की जनता में साम्राज्यवाद विरोधी भावना पैदा करने की कोशिश करती है।'गीता' उपन्यास की गीता भी प्रत्यक्ष रूप से आंदोलन में भाग लेती हुई दिखाई देती है।

वहीं दूसरी ओर बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के यहाँ स्त्रियाँ आंदोलन में प्रत्यक्ष रूप से भाग लेती हुई दिखाई नहीं देतीं। उनके यहाँ स्त्रियाँ गाँधीवादी विचारधारा से प्रभावित हैं। 'मृत्युंजय' उपन्यास की कॅली दीदी समाज के शोषित एवं पीड़ित लोगों की सहायता करती है और अत्याचारी एवं शोषकों के विरुद्ध क्रांति में योगदान देती है। स्वराज की रक्षा के लिए अपने प्राणों की परवाह न करते हुए क्रांति में भाग लेने वाले योद्धाओं तक वह गुप्त रूप से महत्वपूर्ण सूचनाएँ पहुँचाती है। रेलगाड़ी पलटने की घटना के ठीक पहले वह इस कार्य में शामिल अपने 'सपूतों' के समक्ष जाती है। संभवतःउसे उनके मन में चल रहे अंतर्द्वंद्व का पता चल जाता है। वह उन्हें उत्साहित करते हुए कहती है-"मुझे आशंका थी कि कहीं मेरे प्यारे सपूतों को क्रांति के रास्ते से कोई विचलित न करा दे। महात्माजी से भेंट होने के बाद से ही मैं रोज सूत कातती हूँ। आज सवेरे भी डिमि के साथ सूत कातकर ही आयी हूँ। कताई में एक भी सूत उलझा नहीं था। तुम लोगों को सूत कातने का अभ्यास है नहीं। तभी तुम लोगों के मन में उलझन पैदा हो गयी, समझे न! तुम लोगों से कोई भूल नहीं हुई है। बस, अपना काम किये जाओ। यदि मौत भी आ जाए तो उसे भी स्वीकारना। बचकर ही क्या कर लोगे भला? मैं बूढ़ी हो गयी। फिर भी यदि तुम लोग चाहो तो मैं तुम्हारे साथ

चलूँगी। यही सोचकर आयी हूँ। दधि जिस पत्र को लाया है वह कहीं तुम लोगों को उलझन में न डाल दे, मुझे ऐसी आशंका थी। पर अब कोई चिंता नहीं है। अपने मन में किसी प्रकार की उलझन न आने देना। मैं सभी की यहीं प्रतीक्षा करूँगी। खासकर धनपुर की। सुभद्रा के बिना उसका जीवन दूभर हो जाएगा, किंतु मुझे उसकी आँखों के आँसुओं को रोकना होगा।"[22]

'मृत्युंजय' उपन्यास में ही डिमि के माध्यम से उपन्यासकार ऐसी स्त्री को चित्रित करते हैं जो पुरुषों की भाँति अपने देश के लिए मर मिटने को तैयार रहती है तथा देश के लिए अपने कर्तव्य का पालन करती है। जब डिमि को यह पता चलता है कि धनपुर अपने साथियों के साथ रेल पलटने की योजना से गाँव आया है तब डिमि उनलोगों का साथ देती है तथा रेल दुर्घटना के पश्चात् जब दारोगा शइकीया उनलोगों को ढूँढते हुए डिमि के पास उनका पता पूछने आता है तब भी डिमि उनलोगों के बारे में कुछ नहीं बताती। यहाँ तक कि जब उसे दारोगा शइकीया रेल दुर्घटना से संबंधित व्यक्तियों की पहचान के लिए जेल ले जाता है तब वह वहाँ रूपनारायण को देखती है, परंतु उसे पहचानकर भी नहीं पहचानती क्योंकि उस दुर्घटना में देश का हित निहित था।

'पाखी घोड़ा' उपन्यास की सुमति बहन और माकन भी आन्दोलन के दौरान आंदोलनकारियों की सहायता करती हैं। वे विभाजन के दौरान असम की सांप्रदायिक हिंसा की शिकार हुई पीड़ित-शोषित महिलाओं एवं अन्य लोगों की भी सहायता करती हैं। अत: यह कहा जा सकता है कि भट्टाचार्य जी के यहाँ स्त्रियाँ परोक्ष रूप से आंदोलन में भाग लेती हुई दिखाई देती हैं।

भले ही यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों उपन्यासकारों द्वारा चित्रित स्त्रियों के वर्ग, समाज, व्यक्तित्व अलग-अलग हैं, लेकिन स्वराज-प्रेम एवं अपने दायित्व के

प्रति उनकी एकनिष्ठता उन्हें एक करती है। उन सब में गजब का जोश और समर्पण दिखाई देता है। वे अपने कर्तव्य पालन के लिए किसी भी हद तक जाने का सामर्थ्य रखती हैं।

संसार के तमाम धर्म, चाहे वह हिन्दू धर्म हो,इस्लाम हो, बौद्ध, सिख, ईसाई या अन्य कोई भी धर्म हो,ये सभी स्त्री के प्रति अनुदार रहे हैं। धर्म का संस्थागत रूप स्त्री स्वतंत्रता को नकारता है। मार्क्सवादी विचारधारा के पक्षधर होने के नाते यशपाल परलोक में नहीं, बल्कि इस भौतिक जगत में विश्वास करते हैं। उनकी दृष्टि में धर्म ही मानवता का सबसे बड़ा शत्रु है। उन्होंने अपने उपन्यासों में नारी के प्रति धर्म के विकृत अप्रोच को उजागर करने का प्रयास किया है। इसका स्पष्ट रूप हमें 'झूठा सच' तथा 'दिव्या' उपन्यास में दिखाई देता है। 'झूठा सच' उपन्यास की तारा जब अपने पति के अत्याचार से मुक्ति पाने के लिए गली में कूद जाती है, उस वक्त नब्बू नामक एक मुसलमान युवक उसे उठा ले जाता है। नब्बू की कैद से इस्लाम धर्मोपदेशक हाफिज तारा को छुड़ाता है और अपने घर में आश्रय देता है। हाफिज के घरवाले तारा को अपने घर की बहू बनाना चाहते थे, जिसके कारण हाफिज तारा को धर्म परिवर्तन करने को कहता है। परंतु जब तारा इस्लाम धर्म अपनाने से इनकार कर देती है तो हाफिज उसे एक गुण्डे के हाथों में सौंप देता है। इतर धर्म की स्त्री के प्रति इस्लाम की या किसी भी धर्म की यह कैसी सदाशयता है!

इसी तरह 'दिव्या' उपन्यास में यशपाल ने नारी के प्रति बौद्ध धर्म के विकृत अप्रोच पर व्यंग्य किया है। उपन्यास के इस प्रसंग को देखा जाना चाहिए-

"चेरी धर्म ग्रहण करने की इच्छा करने वाली तुम कौन हो?"

"धर्मपिता, मैं इस असहाय संतान की माता हूँ।"

"क्या तुम्हारे चेरी धर्म ग्रहण करने में तुम्हारे पति की अनुमति है?"

"नहीं देव, पति नहीं है।"

"यदि तुम्हारे पति नहीं हैं तो क्या तुम्हारे पिता की अनुमति तुम्हारे चेरी धर्म ग्रहण करने में है?"

"नहीं देव, पति नहीं है, पिता भी नहीं हैं।"

"यदि पति और पिता नहीं हैं तो क्या तुम्हारे पुत्र की अनुमति है चेरी धर्म ग्रहण करने में?"

"देव, दासी का पुत्र अनुमति देने योग्य नहीं है।"

"यदि तुम दासी हो तो क्या अपने स्वामी की अनुमति से चेरी धर्म ग्रहण करने की इच्छा करती हो?"

"नहीं देव, दासी शरण के लिए प्रार्थना करती है।"

"देवी धर्म के नियमानुसार स्त्री के अभिभावक की अनुमति के बिना संघ स्त्री को शरण नहीं दे सकता।"

"परन्तु देव भगवान तथागत ने तो वेश्या अम्बपाली को भी संघ में शरण दी थी।"

"वेश्या स्वतंत्र नारी है, देवी।"[23]

उपर्युक्त संवाद के माध्यम से यशपाल ने बौद्ध धर्म की स्त्री-दृष्टि की सीमा को रेखांकित किया है। एक ओर बौद्धधर्म समाज में शांति एवं करुणा का प्रसार करता है और वहीं दूसरी ओर स्त्री-स्वतंत्रता के लिए स्त्री को वेश्या बनने पर मजबूर करता है। इस संबंध में प्रदीप पंत अपने एक लेख में लिखते हैं-"यशपाल मानो दारा(दिव्या) और स्थविर के इस संवाद के जरिए बुद्ध और उनके शिष्यों से कह रहे हैं कि तुम्हारा 'संघ की शरण में आओ और समस्त यातनाओं से मुक्ति पाओ' का उद्घोष भ्रांतिपूर्ण है और तुम्हारा करुणा का उपदेश मिथ्या है। क्या तुम चाहते हो कि दारा पहले वेश्या बने ताकि वह स्वतंत्र हो सके और फिर तुम्हारी शरण में आए? क्या यह सचमुच स्वतंत्रता है?"[24]

लेकिन बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री के प्रति धर्म का यह विकृत अप्रोच दिखाई नहीं देता। इसका कारण संभवतः यही हो सकता है कि वे स्वयं धर्म के प्रति आस्थावान थे।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने उपन्यासों में परंपरावादी भारतीय नारी के त्याग, उसकी सहनशीलता एवं पतिपरायणता को दर्शाने का प्रयास किया है। मृत्युंजय उपन्यास की 'गोसाइन' त्याग और सहनशीलता की प्रतिमूर्ति है। वह समाज की उन स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करती है, जो गर्भवती है, पति के अलावा उनका कोई आसरा नहीं है। वह जानती है कि स्वराज एवं देश की रक्षा के लिए किए गए युद्ध से उसके पति का वापस लौट आना असंभव हैं, फिर भी वह हिम्मत नहीं हारती। वह अपने पति को युद्ध में जाने से नहीं रोकती, बल्कि उन्हें युद्ध में जाने के लिए तथा उन्हें अपने कर्म के प्रति प्रोत्साहित करती है। गोसाइन कहती है-"कौन जानता है कि आगे किसके भाग्य में क्या है। कितनों की कोख और कितनों की माँगें सूनी होंगी। कोई घायल होगा,कोई अपाहिज।"[25] साथ ही वह परिवार के प्रति अपने दायित्व को बखूबी निभाती है।

इसी उपन्यास की अन्य एक स्त्री पात्र अनुपमा पतिपरायणता की प्रतिमूर्ति है। उपन्यास के अंतिम कुछ हिस्सों में वह हमारे समक्ष आती है। अनुपमा को यह ज्ञात था कि उसके पति की मृत्यु का कारण उसका पति खुद है। समय की नजाकत को समझते हुए वह अपने पति को सरकारी नौकरी छोड़कर हिंसात्मक आंदोलन में भाग लेने वाले अपने आत्मीयजनों की सहायता करने के लिए कहती है। इस बात का जिक्र वह अपने सहपाठी रूपनारायण से करती है-"हाँ, अब क्या किया जा सकता है? वह भी हमेशा यही कहा करते। मैंने उन्हें कई बार पुलिस की नौकरी छोड़ने की सलाह दी थी। पर माने नहीं। अपने ही गाँव में मारे गये। काल का बुलावा आ गया था और क्या! उन्हें जिस दिन पहली बार मैंने समझाया था, काफी झड़प हुई थी। लाख समझाने पर भी वह नहीं माने। आप लोगों

का कोई दोष नहीं। यह तो मेरा ही दुर्भाग्य था।"[26] इसके अलावा जब पुलिस रूपनारायण को पकड़ने के लिए ढूँढती है तो वह रूपनारायण को भागने में मदद करती है।

यशपाल के उपन्यासों में भी परंपरावादी भारतीय नारी की झलक दिखाई देती है। यशपाल के उपन्यास 'देशद्रोही' की चंदा, 'अप्सरा का शाप' की शकुंतला को परंपरावादी भारतीय नारी के रूप में दर्शाया गया है। चंदा राजाराम की पत्नी है। वह अपने पति और बच्चे का बहुत ध्यान रखती है। पति के मन के अनुकूल व्यवहार करती है। परंतु अपनी बहन के पूर्व पति डॉ. खन्ना के वापस आने के बाद चंदा उसकी मदद करती है। डॉ. खन्ना के प्रति चंदा की आत्मीयता को देखकर राजाराम चंदा पर संदेह करता है, जिससे चंदा का स्वाभिमान जाग उठता है। वह कहती है-"मैं इस घर में नहीं रह सकती; कभी नहीं रह सकती।...सहने की सीमा हो गई। अपने आपको मैंने पालतू पशु की भाँति बना दिया फिर भी मैं किसी को प्रसन्न न कर सकी। चाहो तो मैं प्राण दे सकती हूँ परन्तु यहाँ नहीं रहूँगी। जिसे मुझ पर विश्वास नहीं, वह मुझसे प्रेम क्या करेगा? तुम्हारे बस हूँ, इसलिये जो चाहे कर सकते हो...!"[27] अपने पति द्वारा बार-बार अपमानित होने पर भी वह अपने कर्तव्य से पीछे नहीं हटती। लेकिन अंत में उसका मन विद्रोह कर उठता है और वह डॉ. खन्ना से कहती है-"अब तक मैं उचित-अनुचित से डरती थी। मर्यादा के पालन का विरोध था, एक धारणा की रक्षा की जिम्मेवारी थी...अब कुछ नहीं। उनका विचार है कि मेरा चरित्र उन्होंने अपनी मिल्कियत और चौकसी से संभाल कर रखा है। मेरी किसी अनुचित काम करने की, मर्यादा की रक्षा न करने की जिम्मेवारी उनकी ही है। मैं अपनी इच्छा से नहीं बल्कि उनके भय से सदाचारी रही, ऐसा है तो वे अपनी शक्ति भर अपनी दौलत संभाल लें। उनका जो बस चलता है, कर लें!.. जैसे मेरा बस चलेगा, मैं कर लूँगी। जब मुझ पर विश्वास था, मेरी जिम्मेवारी थी। मेरा विश्वास ही नहीं तो मेरी जिम्मेवारी क्या?"[28]

'अप्सरा का शाप' की शकुंतला के अंदर परंपरावादी भारतीय नारी के सभी गुण विद्यमान हैं। वह अपने पति दुष्यंत द्वारा ठुकराई जाने पर भी पतिव्रता धर्म का पालन करती है। इस संबंध में वह अपने पति से कहती है- "महाराज, सती का अस्तित्व पति से पृथक नहीं होता, पति में ही समाहित रहता है। सती के अपमान से पति भी अपमानित होता है। मेरे सत्य के साक्षी अगोचर देवता हैं। मेरे गर्भ में स्थित स्वामी का अंश मेरे सत्य का साक्षी है। स्वामी द्वारा अंगीकार न की जाने पर भी मेरा पातिव्रत और सतीत्व अक्षुण्य रहेगा।"[29]

जब दुष्यंत को अपनी गलती का एहसास होता है तब वह शकुंतला के समक्ष क्षमा याचना करता है। दुष्यंत द्वारा की गयी क्षमा याचना उसे असह्य है। वह दुष्यंत से कहती है- "महाराज, पतिव्रता दासी तो सभी प्रकार पति की अनुगत है। वह पति के दोष को देखती नहीं, सुनना नहीं चाहती।"[30] यहाँ तक कि दुष्यंत द्वारा अपने सम्मुख अपने ही चरित्र पर लगाए गए लांछनों को सुनने पर भी वह शांत रहती है और अपने मन को समझाती हुई कहती है- "हे हृदय, अपने पतिदेव से अपमान, लांक्षन तथा प्रवंचना पाकर भी उनके प्रति क्षुब्ध न हो।"[31]

ध्यान देने की बात है कि यशपाल अपने उपन्यासों में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य की भाँति परंपरावादी भारतीय नारी की सहनशीलता, पतिपरायणता और त्याग की महानता को नहीं दिखाते, बल्कि परंपरावादी भारतीय नारी के शोषण और उसकी असहायता को उजागर करते हैं।

'मृत्युंजय' की सुभद्रा के चरित्र के जरिए बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने समाज में उच्चवर्ग एवं निम्नवर्ग की स्त्रियों के प्रति लोगों के अलग-अलग दृष्टिकोण को दर्शाया है। साथ ही निम्नवर्ग की स्त्रियों के शोषण,अत्याचार, उत्पीड़न आदि को दिखाने का प्रयास भी किया

है। एक ओर जहाँ सरकार पुलिस, मिलिट्री और उच्च पदों पर प्रतिष्ठित अफसरों के हाथों में समाज को नियंत्रित करने का भार सौंपती है, वहीं दूसरी ओर ये पुलिस, मिलिट्री के लोग समाज के शोषितों का उद्धार करने की बजाए समाज के निम्नवर्ग के लोगों एवं स्त्रियों का मानसिक तथा शारीरिक शोषण करते हैं। सुभद्रा जैसी निम्नवर्ग की अनेक असहाय स्त्रियाँ है जो अपनी आबरू की रक्षा में असमर्थ होने के कारण तथा समाज के द्वारा विभिन्न रूपों में प्रताड़ित होने के कारण आत्महत्या जैसे बड़े कदम उठा लेती हैं। उपन्यासकार ने समाज की घृणित मनोवृत्ति को उजागर किया है। लोग शोषकों को दंड देने की बजाए निर्दोष शोषितों को ही ताने देते हैं, जिससे उस स्त्री के समक्ष मृत्यु को अपनाने के अलावा दूसरा कोई उपाय ही नहीं बचता।

यशपाल द्वारा रचित उपन्यास 'झूठा सच' की बंती समाज की उन स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करती है जो देश विभाजन के दौरान हुए सांप्रदायिक दंगे में शोषण का शिकार होती हैं और समाज तथा अपने परिवार द्वारा बहिष्कृत किये जाने पर मृत्यु को अपना लेती हैं। बंती जब मुसलमानों के पंजों से छूटकर अपने घर लौट आती है, तब उसकी सास उसे अपवित्र मानकर उसे कहती है- "दूर रह, तुझे कह दिया। तू अब हम लोगों के किस काम की!"[32] अन्य पड़ोसी स्त्री भी कहती है- "सौ-सौ मुसलमान..! धर्म क्या रह गया..।"[33] यहाँ तक कि बंती का पति गोपालदास भी उसे अपनाने से इनकार करता हुआ कहता है- "दो महीने मुसलमानों के घर रह आयी है। हम कैसे रख लें।"[34] अपने परिवार एवं समाज द्वारा न अपनाई जाने पर बंती अपने घर की दहलीज पर सर पटक-पटक कर अपनी जान दे देती है। यशपाल ऐसे लोगों की घृणित मनोवृत्ति को उजागर करते हैं जो शोषित स्त्री को आश्रय देने एवं उसकी सहायता करने की बजाए उसे ही उसके साथ किए गये दुष्कर्म का जिम्मेदार मानते हैं और उसे अपनी जान देने के लिए मजबूर कर देते हैं।

उपर्युक्त विचार-विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इन दोनों उपन्यासकारों ने अपने-अपने उपन्यासों में स्त्री के शोषण,

उत्पीड़न, उसके प्रति होने वाले अन्याय के विभिन्न रूपों का चित्रणय थार्थ की धरातल पर किया है। यशपाल के उपन्यासों में चित्रित तमाम नारी चरित्र और उनका औपन्यासिक विकास उनकी प्रगतिशील स्त्री-दृष्टि का प्रमाण हैं। वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में चित्रित नारी चरित्र और उनके औपन्यासिक विकास पर उनकी गाँधीवादी विचारधारा का प्रभाव दिखाई पड़ता है।

3.2 यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री-पुरुष संबंध

स्त्री और पुरुष सामाजिक संगठन के मेरुदंड हैं। स्त्री और पुरुष एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। वे एक-दूसरे के पूरक हैं। वे दोनों एक-दूसरे के सहारे जीवन के विविध रूपों के साथ निरंतर बढ़ते रहते हैं। स्त्री-पुरुष सामाजिक जीवन में अनेक संबंधों से जुड़े होते हैं। उनमें प्रेम और दांपत्य के संबंध को मुख्य माना जाता है। बदलते समय के साथ स्त्री-पुरुष के संबंधों में भी बदलाव परिलक्षित होता है। विभिन्न साहित्यकारों ने अपने-अपने साहित्य में स्त्री-पुरुष के संबंधों को अनेक रूपों में दर्शाया है। प्रस्तुत उप-अध्याय में हिन्दी उपन्यासकार यशपाल और असमिया उपन्यासकार बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री-पुरुष संबंधों की अभिव्यक्ति के स्वरूप और उन दोनों की दृष्टियों का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

यशपाल के उपन्यासों की विषय वस्तु चाहे राजनीतिक हो या सामाजिक, प्राय: सभी उपन्यासों में स्त्री-पुरुष संबंध को लेकर उनकी दृष्टि स्पष्ट दिखाई पड़ती है। वे मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित थे। यही कारण है कि वे मार्क्सवादी विचारधारा के अनुकूल स्त्री-पुरुष संबंधों पर विचार करते हैं। वे अपनी पुस्तक 'मार्क्सवाद' में स्त्री-पुरुष संबंध के बारे में लिखते हैं-"मार्क्सवाद स्त्री-पुरुष के संबंध को पुरुष की सम्पत्ति और धर्म के भय से जकड़ देने के पक्ष में नहीं। वह स्त्री-पुरुष के संबंध को स्त्री-पुरुषों की प्राकृतिक आवश्यकता और कर्तव्य का संबंध मानता है। इसके लिये वह दोनों में से किसी का एक-दूसरे का दास बन जाना आवश्यक नहीं समझता।"[35] वस्तुतः इन्हीं संदर्भों में यशपाल स्त्री-पुरुष संबंधों के बीच आने वाली प्रचलित मान्यताओं एवं परंपराओं का विरोध कर स्त्री-पुरुष संबंध को एक नयी दिशा प्रदान करते हैं।

यशपाल की स्त्री-पुरुष संबंधी विचारधारा आधुनिक है। उन्होंने स्त्री-पुरुष संबंध के लिए प्रेम और आकर्षण को महत्व दिया है। हालाँकि भारतीय समाज में स्त्री-पुरुष के परस्पर आकर्षण एवं प्रेम को स्थायी रूप देने के लिए विवाह जैसी संस्था की व्यवस्था की

गई है। लेकिन यशपाल विवाह को एक बंधन मानते हैं। वे अपनी इस मान्यता को 'दादा कामरेड' उपन्यास के पात्र राबर्ट के माध्यम से स्पष्ट रूप में अभिव्यक्त करते हैं-"...विवाह एक बंधन है। बंधन उस समय लागू किया जाता है जब अव्यवस्था का डर रहता है। हैरान हूँ कि समाज में इस बंधन का इतना आदर क्या है? दूसरे बंधनों की तरह इसे भी आजादी का शत्रु समझना चाहिये।"[36] यशपाल विवाह को लाइसेंस भी मानते हैं। 'दादा कामरेड' के नायक हरीश के माध्यम से वे कहते हैं-"विवाह एक लाइसेंस है या परवन्ना है। बंधन तो वास्तव में यह है कि समाज कोई पुरुष किसी स्त्री से कोई संबंध नहीं रख सकता, परन्तु जब इस ढंग से काम नहीं चलता तब एक पुरुष को एक स्त्री के लिये परवन्ना या लाइसेंस दे दिया जाता है कि वे परस्पर संबंध पैदा कर सकते हैं।"[37]

यशपाल विवाह को मूलतः स्त्री-पुरुष के परस्पर आकर्षण एवं मानसिक सुख-संतोष पाने का साधन मानते हैं। वे 'बारह घंटे' उपन्यास की भूमिका में लिखते हैं-"क्या नर-नारी के परस्पर आकर्षण अथवा दाम्पत्य सम्बन्ध को केवल सामाजिक कर्तव्य के रूप में ही देखना अनिवार्य है? क्या इस समस्या को व्यक्तिगत जीवन की आवश्यकता और तृप्ति के दृष्टिकोण से भी देख सकना सम्भव नहीं।"[38] यशपाल स्त्री-पुरुष के परस्पर आकर्षण और प्रेम को अनिवार्य रूप से विवाह जैसे बंधन में बाँधने के पक्ष में नहीं हैं। उसका मानना है कि विवाह किये बिना भी प्रेम और काम भावना की तृप्ति हो सकती है। दरअसल, यशपाल द्वारा विवाह रहित संबंध के समर्थन के पीछे प्रमुख कारण यह है कि सामंती भारतीय समाज विवाहिता स्त्री को पति की दासी से अधिक कुछ नहीं समझता। 'देशद्रोही' उपन्यास में राजाराम अपनी पत्नी चंदा और डॉ. खन्ना के पारस्परिक संबंध को सहन नहीं कर पाता है, जिसके कारण वह दिन-रात चंदा को अपमानित करता है। राजाराम चंदा के साथ ऐसा व्यवहार इसलिए करता है क्योंकि चंदा उनकी पत्नी है। इसी तरह 'देशद्रोही' उपन्यास में

ही सुजान सिंह और यमुना के आपसी मेल-मिलाप को देखकर डॉ. खन्ना सुजानसिंह को यमुना से विवाह करने को कहता है, जिसे सुन सुजानसिंह बिगड़ उठता है और डॉ. खन्ना से कहता है- "स्त्री-पुरुष के संबंध में विवाह की बूर्जुआ धारणा को मैं नहीं जानता। मेरे लिए यमुना से प्रेम और मित्रता का संबंध पर्याप्त है। जिस धारणा में मुझे आस्था नहीं है उसके अनुकूल व्यवहार कर उसका समर्थन क्यों करूँ?"[39]

यशपाल स्त्री-पुरुष में परस्पर प्रेम और आकर्षण को सहज एवं स्वाभाविक मानते हैं। वे स्त्री-पुरुष के पारस्परिक संबंध को अनिवार्य मानते हुए 'दिव्या' उपन्यास के पात्र मारिश के माध्यम से कहते हैं- "भद्रे, नारी सृष्टि का साधन है। सृष्टि की आदि शक्ति का क्षेत्र वह समाज और कुल का केंद्र है। पुरुष उसके चारों ओर घूमता है जैसे कोल्हू का बैल।"[40] आगे वह फिर कहता है- "नारी प्रकृति के विधान से नहीं, समाज के ही विधान से भोग्य है। प्रकृति में और समाज में भी स्त्री और पुरुष अन्योन्याश्रय हैं। पुरुष का प्रश्रय पाने से ही नारी परवश है, परंतु भद्रे नारी के जीवन की सार्थकता के लिये पुरुष का आश्रय आवश्यक है और नारी भी पुरुष का आश्रय है।"[41]

'दादा कारमेड' का पात्र हरीश प्रेम और परस्पर आकर्षण को जीवन की एक सहज प्रक्रिया मानता है। यह आकर्षण मानव जीवन के विकास में सहायक है। यदि यह सहायक नहीं होता तो प्रकृति इस आकर्षण को पैदा क्यों करती! हरीश अपनी इस धारणा को स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त करता हुआ शैल से कहता है-"यदि पुरुष के जीवन-विकास में स्त्री का आकर्षण विनाशकारी होता तो प्रकृति यह आकर्षण पैदा क्यों करती? जिन वस्तुओं से मनुष्य के जीवन को भय है, उनसे वह डरता है, दूर भागता है, परंतु स्त्री की ओर पुरुष आकर्षित होता है मानो उसके जीवन में कोई कमी है, जिसे वह स्त्री से पूर्ण करना चाहता है।"[42]

इसी उपन्यास में राबर्ट और फ्लोरा का प्रेम भी मात्र आकर्षण था। राबर्ट की धर्म के प्रति एकनिष्ठता को देखकर फ्लोरा उससे प्रेम करती है और दोनों शादी भी कर लेते हैं। लेकिन कुछ समय पश्चात् राबर्ट नास्तिक बन जाता है। राबर्ट की नास्तिकता फ्लोरा के लिए असह्य बन जाती है, जिसके कारण फ्लोरा राबर्ट को छोड़कर चली जाती है। स्पष्ट है कि जब तक इन दोनों में परस्पर आकर्षण का कारण था तब तक दोनों में प्रेम था। किन्तु जब उस आकर्षण का कारण समाप्त हो जाता है तो दोनों में प्रेम भी समाप्त हो जाता है। राबर्ट के शब्दों में- "उस समय यदि हम दोनों में से कोई एक मर जाता तो दूसरा भी, जीवन असंभव समझ, मर जाता या मरने की चेष्टा करता, परंतु जब प्रेम और आकर्षण का कारण न रहा, प्रेम और आकर्षण भी न रहा।"[43]

यशपाल प्रेम को स्त्री-पुरुष की परस्पर संतुष्टि की कामना तथा परस्पर आश्रय की भावना के रूप में देखते हैं। उनके अनुसार इन्हीं दो कारणों से स्त्री-पुरुष के मन में प्रेम का बीज उत्पन्न होता है।'दादा कामरेड' की शैल परस्पर आकर्षण एवं संतुष्टि की कामना के कारण ही अपने जीवन में आने वाले कई पुरुषों की ओर आकृष्ट होती है। हरीश के कहने पर अपने वस्त्र भी उतार देती है। 'देशद्रोही' उपन्यास में यशपाल डॉ. खन्ना के माध्यम से प्रेम संबंधी विचार को व्यक्त करते हैं- "राज मुझे नहीं, मुझसे मिलने वाले संतोष से प्रेम करती थी या वह उस एकमात्र पुरुष को प्रेम करती थी जिस पर वह जीवन की प्रत्येक बात के लिए निर्भर थी, जिसके बिना जीवन सम्भव न था। मैं जैसे राज से प्रेम करता था, वैसे ही किसी दूसरी स्त्री से भी कर सकता हूँ। राज भी, जो कोई भी उसका पति होता उसी से प्रेम करती।"[44]

यशपाल प्रेम को शारीरिक तृप्ति का साधन मानते हैं और यह सवाल भी करते हैं कि नारी शरीर पर किसी एक पुरुष का अधिकार क्यों हो? स्त्री को अपने व्यक्तित्व तथा

संतुष्टि को भी महत्व देना चाहिए। यशपाल 'देशद्रोही' उपन्यास के पात्र डॉ. खन्ना के माध्यम से अपनी भावना को व्यक्त करते हैं- "शरीर तो केवल साधन मात्र है। उससे तो अच्छे-बुरे सभी स्पर्श होते हैं। प्रश्न तो है, किसी बात को बुरा समझ कर करना अवश्य उचित नहीं है, परन्तु प्रत्येक स्पर्श में मनोविकार भी अवश्य हो, यह मैं विश्वास नहीं करता। न मैं यह विश्वास करता हूँ कि स्त्री को एक ही व्यक्ति के उपभोग की वस्तु बनाकर सुरक्षित रख लेना ही आचार निष्ठा का सबसे बड़ा आदर्श है। पुरुष को वंश रक्षा के लिये संतानोत्पत्ति का साधन होने के अतिरिक्त स्त्री का अपना व्यक्तित्व और संतोष भी कोई चीज है।"[45]

'झूठा सच' उपन्यास की श्यामा भी प्रेम को स्त्री-पुरुष के परस्पर संतोष की कामना के अतिरिक्त कुछ नहीं मानती। वह उसे शारीरिक क्रिया मानती है। वह तारा से कहती है- "तरसना ही क्या प्यार है? प्यार क्या संतोष नहीं चाहता? रक्त–मांस का उन्मेष ही सही पर हृदय और क्या है, मस्तिष्क और क्या है? शरीर को काट हृदय की परीक्षा करने से तो हृदय में प्यार या मस्तिष्क में विचार रखे हुए नहीं मिलते। प्यार और विचार शरीर के व्यवहार मात्र हैं।"[46]

यशपाल स्त्री-पुरुष के प्रेम रहित काम संबंध को अनुचित मानते हैं। उनका मानना है कि "प्यार के संतोष के लिये शरीरों का ही नहीं, मन का मेल भी चाहिये।"[47] अत: यशपाल अनिच्छापूर्वक बनाए गए काम संबंध को व्यभिचार मानते हैं।

यशपाल स्त्री-पुरुष के प्रेम को प्राकृतिक आवश्यकता के रूप में देखते हैं। अत: उन्होंने अपने उपन्यास 'बारह घंटे' में फैंटम और विनी के प्रेम को उचित बताया है। विनी और फैंटम का प्रेम अनुचित नहीं है। उनके प्रेम-व्यवहार को नये सिरे से देखने के लिए यशपाल पाठकों से आग्रह करते हुए 'बारह घंटे' उपन्यास की भूमिका में लिखते हैं- "विनी

को प्रेम अथवा दांपत्य निष्ठा निबाह न सकने का कलंक देने का निर्णय करते समय, विनी के व्यवहार को केवल परम्परागत धारणाओं और संस्कारों से ही न देखें। उसके व्यवहार को नर-नारी के व्यक्तिगत जीवन की आवश्यकता और पूर्ति की समस्या के रूप में तर्क तथा अनुभूति के दृष्टिकोण से, मानव में व्याप्त प्रेम की प्राकृतिक अनिवार्य आवश्यकता के रूप में भी देखें।"[48]

इसी तरह 'बारह घंटे' उपन्यास का पात्र लारेंस भी कहता है-"नर-मादा का आकर्षण प्राकृतिक बात है। मैं तो कहूँगा, पशुओं का प्रेम अधिक निश्चल, केवल प्रकृति की पुकार का परिणाम होता है। किसी अन्य प्रलोभन का विचार उनके आकर्षण को प्रभावित नहीं करता।"[49]

यशपाल प्रेम को स्त्री-पुरुष के जीवन की स्वाभाविक माँग के रूप में स्वीकार करते हैं।'बारह घंटे' उपन्यास के पात्र लारेंस के माध्यम से यशपाल अपने विचारों को व्यक्त करते हुए कहते हैं- "प्रेम जीवन की माँग होता है और प्रेम-पात्र उस माँग को पूरा करता है। प्रेम-पात्र कोई भी व्यक्ति हो सकता है। प्रेम-पात्र या व्यक्ति प्रेम का उन्मेष पूरा कर सकने के कारण ही अच्छा या प्यारा लगता है।"[50]

यशपाल स्वच्छंद प्रेम या स्वच्छंद काम भावना का भी समर्थन करते हुए दिखाई देते हैं। उनका मानना है कि प्रेम का लक्ष्य प्रेम होना चाहिए, किसी सामाजिक दायित्व की पूर्ति नहीं। 'क्यों फँसे' उपन्यास का पात्र भास्कर कहता है-"भय या मजबूरी से शरीर दिया जा सकता है, प्रेम नहीं। प्रेम आकर्षण की सचाई उसके स्वतः और स्वतंत्र होने में है।"[51] यशपाल का मानना है कि स्वच्छंद काम भावना का अर्थ अराजकता नहीं, बल्कि स्वेच्छा से अपने मन की प्रकृति के अनुसार स्थापित प्रेम अथवा काम संबंध होना चाहिए। इस बारे में

भास्कर कहता है- "कैसे कोई किसी के बिस्तर में घुस जायेगा या कोई घुसने देगा! यह तो पारस्परिक गहरे अदम्य आकर्षण से हो सकता है।"[52]

यशपाल का मानना है कि संसार की प्रत्येक वस्तु परिवर्तनशील है। प्रेम इसका अपवाद नहीं है। वे प्रेम के स्वरूप को मार्क्सवादी नजरिए से देखते हैं। 'मनुष्य के रूप' उपन्यास के पात्र भूषण के शब्दों में-"सब चीजों की तरह जीवन में प्रेम की गति भी द्वंद्वात्मक है। प्रेम जीवन की सफलता और सहायता के लिये है। यदि प्रेम बिलकुल छिछला या थिथला रहे तो वह असंयत वासना-मात्र बन जाता है और यदि जीवन में प्रेम या आकर्षण का विवेक से संयम न हो तो यह जीवन के लिये घातक भी हो सकता है। जल को देखते हो! उसमें से ऊष्णता बिलकुल निकल जाय तो वह बर्फ बन जाता है, उसमें गति नहीं रहती। ऊष्णता एक सीमा से अधिक बढ़ जाय तो वह भाप बनकर उड़ जाता है।"[53]

अत: यशपाल यह मानते हैं कि भौतिक परिस्थितियाँ मनुष्य की चेतना को प्रभावित करती हैं। परिस्थितियों के साथ मनुष्य की चेतना बदलती रहती है, जिसके कारण मनुष्य की प्रेम, नैतिकता संबंधी धारणाएँ भी बदल जाती हैं। 'मनुष्य के रूप' की सोमा का प्रेम इसी तथ्य की पुष्टि करता है। उसके जीवन में जब जैसी अवस्था आती है, उसके अनुरूप ही उसका प्रेम परिवर्तित होता रहता है। कभी वह धनसिंह से प्रेम करती है, कभी बैरिस्टर साहब से तो कभी बरकत से। सोमा के प्रेम के संबंध में भूषण मनोरमा से कहता है- "इसका धनसिंह से प्रेम कुछ घटनाओं का परिणाम है और कुछ घटनाओं का कारण भी है। यदि इसका पति जिन्दा होता, शायद यह प्रेम हो ही न सकता और होता तो तुम्हें उससे सहानुभूति न होती। प्रेम जीवन में शरीर की अनुभूति और आवश्यकता से पृथक क्या वस्तु है?"[54]

भारतीय समाज में स्त्री-पुरुष के प्रेम को कई बार महज आत्मिक प्रेम के रूप में देखा जाता है। यशपाल 'बारह घंटे' उपन्यास के पात्र लारेंस के माध्यम से स्त्री-पुरुष के प्रेम को आत्मिक मानने से इनकार करते हैं एवं 'सावित्री-सत्यवान' की प्रसिद्ध पौराणिक कथा को पार्थिव सिद्ध करते हुए कहते हैं- "सावित्री ने सत्यवान से अपने प्रेम की निष्ठा पूरी कर सकने के लिये यम से आग्रह किया-इसमें ऐसे प्राण डाल दो कि सौ पुत्र उत्पन्न कर सकने तक जवान बना रहे।...आत्मिक प्रेम से सौ पुत्र हो जायेंगे! सावित्री की निष्ठा में आत्मिक प्रेम की कल्पना थी या पार्थिव की आवश्यकता?"[55]

यशपाल प्रेम के इस आध्यात्मिक रूप के संदर्भ में अपने एक निबंध 'चक्कर क्लब' में लिखते हैं- "आध्यात्मिक प्रेम नपुंसक प्रेम है। वासना को पूरा करने की सामर्थ्य न हो तो मन को बहलाने का तरीका है। स्वयं जो कुछ कर सकने का अवसर नहीं, भगवान् के नाम से उसकी कल्पना कर मन को बहला दिया।"[56] यशपाल प्रेम को उदात्त भावना मानते हैं। वे कहते हैं-"प्रेम जीवन की सबसे बड़ी ऊँची और उदात्त भावना होती है। यही भावना सृष्टि का अवलम्ब और जीवन का प्रयोजन होती है। इस भावना का बल और महत्व व्यक्तियों से कहीं अधिक होता है। इस भावना के पूर्ण न होने पर जीवन व्यर्थ और बोझ हो जाता है।"[57]

यशपाल 'बारह घंटे' उपन्यास के पात्र विनी और फैंटम के जरिए स्त्री-पुरुष के पारस्परिक आकर्षण और प्रेम को एक नयी दिशा प्रदान करते हैं। विधवा विनी द्वारा फैंटम को अपना लेना मानव स्वभाव के अनुकूल जीवन में प्रेम की अनिवार्यता का सूचक है। अत: यशपाल इसे अनैतिक नहीं मानते। लारेंस के माध्यम से यशपाल कहते हैं-"वे स्वयं जितने अधिक अधीर होंगे, उनमें जितनी अधिक इन्सानियत होगी, जितनी अधिक करुणा और सहृदयता होगी, वे उतनी ही जल्दी और अधिक वेग से द्रवित हो एक-दूसरे को सांत्वना और सहारा दिये बिना नहीं रह सकेंगे। इसमें बदल जाना अथवा गिरावट क्या है! यह तो बदलना, अवसर छिन जाने पर भी प्रेम की आवश्यकता की अनुभूति को छोड़ न सकना,

प्रेम की आवश्यकता को दबा न सकना हुआ। यदि विनी भावशून्य और निष्ठुर हो जाती, प्रेम के स्थान पर घृणा करने लगती, तब बदलना या हृदय परिवर्तन हो जाता। कोई निर्दयता, ईर्ष्या, घृणा या असहानुभूति से विनी की सहृदयता को गले लिपट जाना भी कह सकता है परंतु प्रेम गले लिपटना ही होता है। गले न लिपटें तो प्रेम क्या हुआ!"[58]

इसी संबंध में धनराज मानधाने कहते हैं- "नर-नारी के पारस्परिक आकर्षण के संबंध में नये परिस्थिति बोध के अनुसार आध्यात्मिक नैतिक और व्यावहारिक दृष्टिकोण को यशपाल ने अपनी इस लघुतम कृति में अत्यधिक भावुकता के ढंग से प्रस्तुत किया है।"[59]

यशपाल विवाह-पूर्व एवं विवाहेतर प्रेम संबंध को अनिवार्यतः अनैतिक नहीं मानते हैं। 'दिव्या' उपन्यास की दिव्या और 'दादा कामरेड' की शैल विवाह पूर्व ही आत्मसमर्पण कर देती है। 'दिव्या' उपन्यास की सीरो विवाह के पश्चात् आत्म संतुष्टि के लिए विभिन्न पुरुषों के साथ संपर्क में आती है। अपने पति पृथुसेन द्वारा पाबंदी लगाये जाने पर वह पृथुसेन से कहती है-"तुम वेश्याओं से विलास नहीं करते? कितनी दासियाँ तुम्हारी पर्यंक-सेवा के लिए हैं? भोग के भिन्न-भिन्न सुखों और रसों के लिये तुम्हें कितनी नारियाँ चाहिए? मेरे लिए भी संसार में केवल तुम ही एक पुरुष नहीं हो? तुम जैसे अनेक और तुमसे भी श्रेष्ठ अनेक!"[60]

'झूठा सच' की शीलो रतन से प्रेम करती है, परंतु उसका विवाह मोहनलाल के साथ होता है। विवाह के पश्चात् भी शीलो रतन के साथ काम भावना में लिप्त होती है।अंत में शीलो तारा की सहायता से अपने पति मोहनलाल को छोड़ रतन के साथ रहने लगती है। इस संबंध में मधुरेश लिखते हैं- "भले ही समाज की दृष्टि में यह तारा पर व्यभिचार को प्रश्रय देने का उदाहरण हो, लेकिन तारा ने शीलो को रतन से मिलाकर सामाजिक क्रांति की दिशा में एक सही कदम उठाया है।"[61]

'मेरी तेरी उसकी बात' की माया घोष विवाहित नारी है। वह अपने पति घोष के अतिरिक्त पाठक से भी प्रेम करती है। उषा भी पति की मृत्यु के पश्चात् पाठक से प्रेम करती है। अत: यह कहा जा सकता है कि यशपाल विवाह के पूर्व या पश्चात् आत्म संतुष्टि के लिए स्त्री का भिन्न भिन्न पुरुषों के साथ शारीरिक संबंध स्थापित करना अनिवार्यतः निषिद्ध नहीं मानते। इस संबंध में चमनलाल गुप्ता लिखते हैं- "यशपाल के उपन्यास-साहित्य में विवाह-पूर्व अथवा विवाहेतर प्यार को निषिद्ध नहीं माना गया है। प्रेम एक स्वाभाविक संतोष कामना है और उसे काम सुख से अलग-थलग नहीं किया जा सकता।"[62]

यशपाल की ही भाँति असमिया उपन्यासकार बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने भी अपने उपन्यासों में स्त्री-पुरुष संबंध को लेकर अपने दृष्टिकोण को उजागर किया है। वे स्त्री-पुरुष संबंध के लिए प्रेम को महत्व देते हैं। उनके अनुसार स्त्री-पुरुष का आपसी आकर्षण स्वाभाविक नहीं, बल्कि प्रेमजन्य है। उन्होंने स्त्री-पुरुष की परस्पर आत्म संतुष्टि के लिए प्रेम को अनिवार्य माना है। प्रेम के बिना बनाये गए काम संबंध स्त्री और पुरुष दोनों को संतुष्टि प्रदान नहीं कर सकते। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य 'अँधेरा-उजाला' उपन्यास के पात्र मीनधर और अलका के आपसी संबंधों के बारे में कहते हैं- "आपसी संबंध किसी भी दिन आत्म-त्याग के सौरभ से विमंडित एकांत प्यार-मुहब्बत की कोटि तक नहीं पहुँच पाया था। एक-दूसरे के प्रति काम-वासना का आकर्षण भी इतना सामान्य था कि शारीरिक संयोग उन्हें कभी गहरी संतुष्टि प्रदान नहीं कर पाता था। वे दोनों ही यह बात स्वीकार करते थे। प्यार-मुहब्बत के बगैर उनकी काम-वासना की जिंदगी भी ऊसर-सी हो गई और एक-दूसरे की उपस्थिति से किसी को कोई आनंद नहीं मिल पाता था।"[63]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य स्त्री-पुरुष संबंध के लिए काम भावना की अनिवार्यता को स्वीकार नहीं करते। इसका स्पष्ट रूप 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में रंजीत की इस उक्ति में दिखाई पड़ता है- "केवल एक-दूसरे को पा लेने की लालसा, काम-वासना का भाव ही स्त्री-पुरुष के बीच एक मात्र संबंध नहीं है।"[64] इसके प्रत्युत्तर में माकन कहती है-"स्त्री-पुरुष के

बीच इस लालसा-कामना-वासना विहीन संपर्क की स्थापना करने का अर्थ ही है एक शोषण विहीन समानता के संपर्क की स्थापना करना। स्त्री-पुरुष के बीच इस प्रकार के संपर्क की स्थापना कर पाने पर संसार में जातियों के बीच, भिन्न-भिन्न वर्गों के बीच भाँति-भाँति के अत्याचारों और शोषण की भावनाओं को दूर करने का एक नया रास्ता प्राप्त हो सकता है।"[65]

उन्होंने प्रेम के आध्यात्मिक रूप को स्वीकार किया है। उनके पात्र जैसे 'मृत्युंजय' के डिमि और धनपुर, 'पाखी घोड़ा' के सुमति बहन और विमल भाई, 'अँधेरा-उजाला' के मीनधर और आइधन के बीच प्रेम का आध्यात्मिक रूप दर्शाया गया है। 'पाखी घोड़ा' की सुमति बहन एक ईसाई महिला है और विमल भाई हिन्दू। भिन्न धर्म एवं जाति के होने के कारण ये दोनों विवाह नहीं कर पाते। इसी कारण दोनों ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए देश सेवा के लिए एक दूसरे के सहयोगी बने रहते हैं। 'अँधेरा-उजाला' की आइधन एक विधवा स्त्री है। वह मीनधर से प्रेम करती थी, परन्तु कुंडली-गणना न मिलने के कारण उन दोनों का विवाह नहीं हो पाता। अलका से विवाह-विच्छेद होने के बाद मीनधर ग्राम सेवा के उद्देश्य से अपने गाँव लौट आता है। मीनधर से मुलाकत के दौरान उसकी दृष्टि को अपनी ओर देखकर आइधन को अनुभव हुआ कि "वह दृष्टि सिर्फ एक पुरुष की अपनी पुरानी प्रेमिका की ओर डाली दृष्टि नहीं है, वह मुहब्बत की वापसी की निशानी है। इस वापसी में यौवन की शुरुआत का दैहिक आकर्षण नहीं है, एक-दूसरे तरह का प्यार है- जो प्यार उसकी साधना और जीवन अन्वेषण के बीच से चुने हुए एक वासना के प्रति है। आइधन की प्रौढ़ता के प्यार का अधिकारी भगवान ही हैं। और उस भगवान की प्राप्ति का माध्यम है राग-रचना।"[66]

मृत्युंजय की डिमि एक विवाहित स्त्री है। वह अपने बचपन के प्रेमी धनपुर से अपने प्रेम का इज़हार करती है। उसकी मौत तक उसके साथ रहती है परन्तु अपनी मर्यादाओं को

नहीं लाँघती। इस संबंध में डॉ. अमरेन्द्र त्रिपाठी अपने एक लेख में लिखते हैं-"डिमि-धनपुर के प्रेम को भट्टाचार्य जी ने आध्यात्मिक स्तर तक पहुँचाकर स्त्री-पुरुष संबंधों को एक नई गरिमा प्रदान की है।"[67] इससे स्पष्ट होता है कि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य विवाह-पूर्व या विवाहेतर प्रेम संबंध को सहज मानवीय प्रेम के रूप में नहीं बल्कि आध्यात्मिक प्रेम के रूप में ही स्वीकार करते हैं।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य विवाह के पूर्व स्त्री-पुरुष के प्रेम में मुक्त काम संबंध को अनैतिक मानते हैं। अगर परिस्थितिवश उनमें शारीरिक संबंध हो जाए तो वे उसकी आदर्श परिणति विवाह में देखते हैं। 'पाखी घोड़ा' उपन्यास की स्त्री पात्र जयंती(ग्रामीण स्त्री) शादी के पहले ही दुदू को अपना देह सौंप देती है और गर्भवती हो जाती है। जब उसे पता चलता है कि वह गर्भवती है तो वह घर छोड़कर भाग जाती है। उसका प्रेमी दुदू उसे ढूँढ कर लाता है और उससे विवाह कर लेता है। ज़ाहिर है कि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य मुक्त काम संबंध को एक आदर्श समाज के लिए हितकारी नहीं मानते।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य प्रेम विहीन विवाह के संबंध में अपने मनोभावों को 'पाखी घोड़ा' उपन्यास के दुदू के माध्यम से व्यक्त करते हुए कहते हैं-"प्रेम-विहीन, जिसमें यथार्थतः प्रेम-बंधन का आधार न हो, ऐसा विवाह पारस्परिक समझ-बूझ, समझौता के आधार पर कभी-कभार ही सफल हो पाता है, शायद ही सफल हो सकता है।"[68] अत: उन्होंने विवाह के लिए प्रेम को आवश्यक माना है।

स्त्री-पुरुष संबंध को लेकर यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के नजरिए के तुलनात्मक विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि इन दोनों ने ही स्त्री-पुरुष संबंध में प्रेम को महत्व दिया है। एक ओर जहाँ यशपाल ने स्त्री-पुरुष संबंधों का विश्लेषण मार्क्सवादी नज़रिए से किया है, वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के साहित्य में स्त्री-पुरुष संबंधी विश्लेषण

गाँधीवाद से प्रभावित दिखाई देता है। यशपाल विवाह-पूर्व एवं विवाहेतर प्रेम को सहज एवं स्वाभाविक मानते है, जबकि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इस मामले को सहज नहीं मानते और इसलिए उनके उपन्यासों में प्रायः जहाँ कहीं भी विवाह-पूर्व अथवा विवाहेतर प्रेम दिखाई पड़ता है, वहाँ उसकी परिणति अंततः आध्यात्मिक प्रेम के रूप में होती है। यशपाल विवाह-पूर्व काम-संबंध को भी अनैतिक नहीं मानते; जबकि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के लिए विवाह-पूर्व काम हमेशा अनैतिक है, इसीलिए वे ऐसे संबंधों की आदर्श परिणति विवाह में देखते हैं।

संदर्भ

[1] यशपाल, दादा कामरेड, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018, पृ. 21

[2] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, नवारुण वर्मा(अनु.), किताबघर, नई दिल्ली, 1990, पृ. 135

[3] वही, पृ. 44

[4] यशपाल, दादा कामरेड, पृ. 22

[5] यशपाल, मनुष्य के रूप, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009, पृ. 58

[6] यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018, पृ. 226

[7] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, डॉ. महेन्द्रनाथ दुबे(अनु.), भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 1990, पृ. 297-298

[8] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, पृ. 33

[9] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, पृ. 81

[10] यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, पृ. 372

[11]यशपाल, यशपाल रचनावली(खण्ड-12), आनन्द(संपा.), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007, पृ. 209-210

[12] यशपाल, दादा कामरेड, पृ. 121

[13] यशपाल, देशद्रोही, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014, पृ. 194

[14] वही, पृ. 209-210

[15] यशपाल, मनुष्य के रूप, पृ. 116

[16] यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, पृ. 220

[17] डॉ. भगवान पाठक, यशपाल के उपन्यासों की सामाजिक चेतना, रमन बुक सेंटर, मथुरा, 2010, पृ. 216पर उद्धृत

[18] वही, पृ. 222पर उद्धृत

[19] यशपाल, दादा कामरेड, पृ. 27

[20] वही, पृ. 145

[21] यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, पृ. 514

[22] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, डॉ. कृष्ण प्रसाद सिंह मागध(अनु.), भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2013, पृ. 156

[23] यशपाल, दिव्या, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2012, पृ. 91-92

[24] प्रदीप पंत, दिव्या का सच और आज का सच(लेख), इन्द्रप्रस्थ भारती पत्रिका(यशपाल विशेषांक), वर्ष-15, अंक- 4, अक्टूबर-दिसंबर, 2003, पृ. 213

[25] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, पृ. 74

[26] वही, पृ. 243

[27] यशपाल, देशद्रोही, पृ. 164

[28] वही, पृ.193

[29] यशपाल, अप्सरा का शाप, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2015, पृ. 73

[30] वही, पृ. 88

[31] वही, पृ. 74

[32] यशपाल, झूठा सच(भाग-2), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018, पृ. 101

[33] वही

[34] वही, पृ. 102

[35] यशपाल, मार्क्सवाद, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018, पृ. 60

[36] यशपाल, दादा कामरेड, पृ. 78

[37] वही

[38] यशपाल, बारह घंटे, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2015, भूमिका

[39] यशपाल, देशद्रोही, पृ. 169

[40] यशपाल, दिव्या, पृ. 114

[41] वही, पृ. 115

[42] यशपाल, दादा कामरेड, पृ. 87

[43] वही, पृ. 76

[44] यशपाल, देशद्रोही, पृ. 39

[45] वही, पृ. 146

[46] यशपाल, झूठा सच(भाग-2), पृ. 370

[47] यशपाल, यशपाल रचनावली(खण्ड-5), पृ. 355

[48] यशपाल, बारह घंटे, भूमिका

[49] वही, पृ. 100

[50] वही, पृ.104

[51] यशपाल, यशपाल रचनावली(खण्ड-5), पृ. 326

[52] वही

[53] यशपाल, मनुष्य के रूप, पृ. 62

[54] वही

[55] यशपाल, बारह घंटे, पृ. 109-110

[56] यशपाल, यशपाल रचनावली(खण्ड-12), पृ. 96

[57] यशपाल, बारह घंटे, पृ. 110

[58] वही, पृ. 106

[59] डॉ. भगवान पाठक, यशपाल के उपन्यासों की सामाजिक चेतना, पृ. 194पर उद्धृत

[60] यशपाल, दिव्या, पृ. 128

[61] यशपाल, यशपाल रचनावली(खण्ड-1), मधुरेश, यशपाल के उपन्यास(प्रस्तावना), पृ. xx

[62] डॉ. भगवान पाठक, यशपाल के उपन्यासों की सामाजिक चेतना, पृ. 192-193पर उद्धृत

[63] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, पृ. 45

[64] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, पृ. 305

[65] वही

[66] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, पृ. 82

[67] डॉ. अमरेन्द्र त्रिपाठी, बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का रचना-कर्म (मृत्युंजय के विशेष संदर्भ में) (लेख), साहित्यमाला: पूर्वोत्तर भारतीय साहित्य, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, नई दिल्ली, 2017, पृ. 74

[68] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, पृ. 288

अध्याय- 4

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों के विविध पक्ष

4.1 जाति-वर्ण संबंधी दृष्टि

4.2 वर्ग चेतना और आर्थिक विषमता

4.3 भारत छोड़ो आंदोलन की औपन्यासिक अभिव्यक्ति

4.4 भारत की आजादी और विभाजन

4. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों के विविध पक्ष

4.1 जाति-वर्ण संबंधी दृष्टि

जाति और वर्णव्यवस्था की जड़ें भारतीय समाज में बहुत गहरी हैं। इस जाति-वर्ण आधारित सामाजिक व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति की पहचान और उसकी सामाजिक हैसियत जन्म के आधार पर ही तय हो जाती है। ज़ाहिर है जाति-वर्ण आधारित इस व्यवस्था में कुछ वर्ण और जातियाँ सबसे ऊपर हैं, कुछ की स्थिति मध्यवर्ती है और कुछ की सबसे नीचे। इस व्यवस्था की बुनियाद ही शोषण पर टिकी है। हर जाति अपने से नीची जाति का शोषण करती है और अपने से ऊँची जातियों से शोषित होती है। स्वाभाविक तौर पर इस व्यवस्था में सर्वाधिक शोषित सबसे नीची दलित जातियाँ होती हैं। उन्नीसवीं-बीसवीं शताब्दी के नवजागरण के दौर में अनेक समाज सुधारकों का उभार हुआ, जिन्होंने भारतीय समाज के उत्थान के लिए वर्ण-व्यवस्था, जात-पात, छुआछूत, आदि का घोर विरोध किया। इससे कुछ हद तक जनमानस में एक नई चेतना का संचार हुआ। जात-पात, ऊँच-नीच आदि की भावना कुछ कम हुई, परंतु समाज में इसकी जड़ें इतनी गहरी हैं कि इसे समूल उखाड़ फेंकना कई बार असंभव-सा मालूम पड़ता है। इस उप-अध्याय में यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में अभिव्यक्त जाति-वर्ण संबंधी मुद्दों को रेखांकित करने और इन दोनों रचनाकारों की दृष्टियों की तुलना करने का प्रयास किया गया है।

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इन दोनों उपन्यासकारों ने अपने-अपने उपन्यासों में जाति-वर्ण संबंधी मुद्दों को उजागर किया है। यशपाल अपने उपन्यासों में निम्न जातियों के चित्रण के जरिए जाति के प्रश्न को उठाते हुए दिखाई देते हैं। यशपाल जाति-वर्ण संबंधी प्रचलित मान्यताओं का घोर विरोध करते हैं। उन्होंने अपने उपन्यासों में वर्ण-व्यवस्था एवं जात-पात की कटुता को उजागर किया है। वे वर्ण व्यवस्था एवं जाति

व्यवस्था को समतामूलक समाज के लिए घातक मानते हैं। यशपाल गाँधी के वर्णाश्रम समर्थन की कड़ी आलोचना करते हैं। अपने निबंध 'गाँधीवाद की शव परीक्षा' में वे लिखते हैं- "वर्णाश्रम धर्म गाँधीवाद का आविष्कार नहीं है। वह सामंतकाल की आर्थिक व्यवस्था थी। उसका अधिक विश्वास योग्य और व्यापक परिचय हमें मनुस्मृति और तत्कालीन दूसरे ग्रंथों से मिल सकता है। हिन्दू सामंतवादी काल में वर्णाश्रम धर्म का क्या रूप था और किस रूप में वह अभी तक पुरानी आर्थिक व्यवस्था के प्रभाव में घिसटता चलता आ रहा है, इस देश के लोगों से छिपा नहीं है। वर्णाश्रम धर्म का मुख्य प्रयोजन मौलिक शासक श्रेणियों के आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक नियंत्रण को, उनके वंशों की परम्परा में सुरक्षित रखना और साधनहीन श्रेणी को कभी भी साधनवान होने का अवसर न देना था।"[1]

यशपाल द्वारा गाँधी जी के वर्णाश्रम व्यवस्था संबंधी विचारों की आलोचना के संबंध में आलोचक मैनेजर पाण्डेय लिखते हैं-"यशपाल की यह आलोचना वर्णाश्रम धर्म की अंबेडकर द्वारा की गयी आलोचना से मिलती-जुलती है और आज के दलितों की आलोचना से भी। राहुल के अलावा यशपाल दूसरे महत्वपूर्ण विचारक हैं जिन्होंने ब्राह्मणवाद और वर्णाश्रम धर्म के समर्थन के लिए गाँधीजी की तीखी आलोचना की है।"[2]

भारतीय समाज में जन्म से व्यक्ति की पहचान उसकी जाति के आधार पर होती है। इसी कारण हमारे समाज में व्यक्ति के कर्म की अपेक्षा उसकी जाति को अधिक महत्व दिया जाता है।'झूठा सच' उपन्यास की मिसेज अग्रवाल की सास अपने घर में किसी भी काम करने वाले को रखने से पहले उसकी जाति के बारे में पूछ लेना उचित समझती हैं। इसी प्रकार 'मनुष्य के रूप' उपन्यास की मनोरमा के पिता ज्वाला सहाय सोरला भी जात-पात में विश्वास रखते हैं। अपनी बेटी की शादी दूसरी जाति या धर्म के व्यक्ति के साथ होने के कारण वे खुश नहीं थे। इसलिए उन्होंने अपनी बेटी की शादी में अपने रिश्तेदारों और परिचितों को निमंत्रण देने से मना कर दिया। इस उपन्यास की एक अन्य

पात्र सोमा भी ड्राइवर धनसिंह से उसकी जाति के बारे में पूछती है ताकि वह धनसिंह के लिए पानी का बर्तन ला सके।

इसी तरह 'दिव्या' उपन्यास के पात्र पृथुसेन के मनोभावों के जरिए यशपाल जाति-वर्ण व्यवस्था की सच्चाई को उजागर करते हुए कहते हैं- "जन्म का अपराध? यदि वह अपराध है तो उसका मार्जन किस प्रकार सम्भव है? शस्त्र की शक्ति, धन की शक्ति, विद्या की शक्ति कोई भी शक्ति जन्म को परिवर्तित नहीं कर सकती! कोई भी उपाय जन्म के अपराध का मार्जन नहीं कर सकता! जन्म के अन्याय का प्रतिकार क्या मनुष्य दैव से ले?...या उन लोगों से ले जिन्होंने अपने स्वार्थ के लिए जन्म के असत्य अधिकार की व्यवस्था निर्धारित की है?...हीन कहे जाने वाले कुल में मेरा जन्म अपराध है अथवा यह द्विज-कुल में जन्मे अपदार्थ लोगों का अहंकार मात्र है।"[3]

यशपाल व्यक्ति के जन्म से प्राप्त जातिगत या वर्णगत पहचान को अस्वीकार करते हैं। वे व्यक्ति की जातिगत पहचान की अपेक्षा कर्म पर आधारित व्यक्तिगत पहचान को अधिक महत्व देते हैं।'दिव्या' उपन्यास में नायिका दिव्या को पृथुसेन का अर्घ्य से स्वागत करते देख वर्णाश्रमवादियों का प्रतिनिधित्व करने वाले महापितृव्य पण्डित विष्णु शर्मा व्यंग्य करते हुए दिव्या सेकहते हैं- "दास सारथी-पुत्र का तुमने अर्घ्य से सत्कार किया! तुम अपने पितृव्य प्रबुद्ध शर्मा की भाँति समदर्शी तथागत की शिष्या होने योग्य हो।"[4] इसके प्रत्युत्तर में बौद्धमत से प्रभावित प्रबुद्ध शर्मा कहते हैं-"तात, पृथुसेन का पिता किसी समय दास था। आज वह अनेक दासों का स्वामी, सागल का प्रमुख श्रेष्ठी और गणपति का प्रमुख मंत्रणादाता है। सागल में उसकी अवज्ञा कौन करता है! तात, पृथुसेन दासों की भाँति हाथ में चँवर लेकर नहीं, खड्ग लेकर आता है...क्यों दिव्ये! वत्से, वह सम्मान का अधिकारी है।"[5]

इन पंक्तियों में यशपाल की वर्ण-व्यवस्था संबंधी दृष्टि साफ तौर पर व्यक्त होती है। ब्राह्मण धर्म की कुलीनता पर ज़बरदस्त प्रहार यशपाल तब करते हैं जब दिव्या अपनी कुलीनता की मर्यादा को त्यागकर पृथुसेन को अपना सर्वस्व सौंप देती है।

वर्ण व्यवस्था में ब्राह्मणों को सर्वोच स्थान प्राप्त है। वर्णाश्रम धर्म का समर्थन करने वाली ऊँची जातियाँ स्वयं को सर्वाधिक पवित्र और श्रेष्ठ मानती हैं और अपने से भिन्न जातियों के लोगों को तुच्छ मानकर उनका अपमान करती हैं। उनकी धारणा है कि निम्न वर्ण या जाति के व्यक्ति के स्पर्श मात्र से ही उनका धर्म नष्ट हो जाता है। यही कारण है कि 'दिव्या' उपन्यास में मद्र गणराज्य के महाश्रेष्ठी प्रेस्थ(जो किसी समय दास था) का पुत्र पृथुसेन शस्त्र परीक्षा में 'सर्वश्रेष्ठ खड्गधारी' का गौरव युक्त स्थान प्राप्त करने के बावजूद जब 'सरस्वती पुत्री' दिव्या की शिविका को कंधा लगाने के लिए आगे बढ़ता है, तब कुलीन रुद्रधीर उसका विरोध करते हुए कहता है-"दास-पुत्र को अभिजात वंश के युवकों के साथ शिविका में कंधा देने का अधिकार नहीं है।"[6] उसके प्रत्युत्तर में पृथुसेन कहता है कि "मेरे अधिकार का निश्चय मेरा खड्ग करेगा।"[7] पृथुसेन के इस कथन के जरिए यशपाल ने ब्राह्मणों के गौरव तथा उनके अधिकार को तथाकथित निम्न वर्ण द्वारा दी गयी चुनौती को दर्शाया है।

यशपाल 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में ब्राह्मणवादियों द्वारा अकारण दिखायी गई श्रेष्ठता पर व्यंग्य करते हुए कोहली से कहलवाते हैं-"...परलोक में दो चुल्लू जल के लिए तरसने का वहम। पितरों के श्राद्ध के नाम पर ब्राह्मणों को डैथ ड्यूटी दो। ब्राह्मण का पेट परलोक माल भेजने की ऐजेंसी। कभी स्वर्ग पहुँचे माल की रसीद आयी?...ब्राह्मण ऐजेंट सिर्फ हिन्दू का माल स्वर्ग पहुँचाता है। बाकी दुनिया की आत्मा परलोक में भूखी-प्यासी रहती है।"[8]

हमारे भारतीय समाज में सवर्णों द्वारा अछूतों पर किये गये अत्याचार का स्पष्ट चित्रण यशपाल 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में किया है। उपन्यास का पात्र ब्राह्मण पुत्र देवदत्त अपने अछूत मित्र चीतू के साथ मेला देखने जाता है। चीतू का बहुत दिनों से मन था कि वह पीतल की थाली में दाल-भात खाये। चीतू अपनी इच्छा को देवदत्त के सामने जाहिर करते हुए उसे अपनी मेहनत से इकट्ठा किये गये पैसे देकर साह की दुकान से एक थाली खरीदकर लाने के लिए अनुरोध करता है। चीतू को पता था कि यदि वह थाली खरीदने गया तो साह उसे दुत्कार कर भगा देगा। मेले से थाली खरीदकर दोनों ही अपने-अपने घर लौट आते हैं। जैसे ही देवदत्त के पिता को यह बात पता चलती है, वे क्रोध से तिलमिला उठते हैं और सामूहिक रूप से उसकी जाति को गाली देकर कहते हैं- "इनकी माँ...इनकी बहन...डूमणे पीतल-काँसे के बर्तन में खायेंगे। पलंग पर बैठेंगे, ईंट-पत्थर की हवेली में रहेंगे...घोड़े-पालकी पर बारात ले जायेंगे।...ब्राह्मण राजपूत की बावड़ी में हाथ डालेंगे।...अब मरे जानवर कौन कढ़ेरेगा? ये-वो कौन करेगा?"[9] इन गालियों से भी संतोष नहीं मिलता तो उनके घरों में आग लगा देते हैं।

अपने पिता एवं चाचा द्वारा अछूतों पर अत्याचार के विरोध में देवदत्त अपने पिता से कहता है-"आप लोगों ने बहुत जुल्म किया।"[10] ब्राह्मणवादी क्रूरता से तंग आकर ब्राह्मण लड़का देवदत्त पण्डित अपना धर्म परिवर्तन कर ईसाई बन जाता है, और स्पष्ट रूप से कहता है कि हिन्दुओं की क्रूरता और कुसंस्कारों को मिटाने के लिए अपना जीवन अर्पित कर रहा हूँ।

हमारे समाज में उच्च जाति के लोग निम्न जाति के लोगों को तुच्छ मानते हैं। उनका अपमान करते हैं। वे लोग अपने को निम्न जाति के लोगों से अधिक पवित्र मानते हैं। इसी कारण वे किसी दूसरे की दी हुई वस्तु को ग्रहण करने से इनकार कर देते हैं। उनके मन में यह आशंका बनी रहती है कि न जाने ये लोग किस जाति के हैं? 'देशद्रोही'

उपन्यास की पात्र चंदा भी बाहर की बनी हुई वस्तु खाने में झिझकती है। संभवतः उसके मन में भी यही आशंका है कि बनाने या बेचने वाले की जाति पता नहीं क्या होगी।

'झूठा सच' उपन्यास की पात्र सरोज अपनी पड़ोसन को एक कटोरी बनी हुई साबुत उड़द की दाल देती है, लेकिन पड़ोसन कायस्थ थी, वह सरोज द्वारा दी गयी चीजें लौटा देती है और कहती है-"बहिन जी, हम लोग तो दूसरे लोगों के घर का नहीं खाते।"[11]

यशपाल की दृष्टि में जात-पात, छुआछूत, आदि सामाजिक विषमता के प्रमुख कारण हैं। अत: उन्होंने अपने उपन्यासों में ऐसे पात्रों को रचा है जो जात-पात में विश्वास नहीं रखते। 'झूठा सच' उपन्यास की तारा और कनक जातिगत भेदभाव में विश्वास नहीं करतीं। वे दोनों ही अपनी मुसलमान सहेलियों के घर आती-जाती हैं। उनके साथ खाना भी खाती हैं। यहाँ तक कि तारा मुसलमान युवक असद से प्रेम भी करती है और उसके साथ शादी भी करना चाहती है। भले ही परिस्थिति वश उन दोनों की शादी नहीं हो पाती। 'मनुष्य के रूप' उपन्यास का पात्र जगदीश सहाय सोरला अपने माता-पिता के मन में भरे जातिगत भेदभाव को उचित नहीं मानता। वह अपनी बहन मनोरमा और पारसी युवक सुतलीवाला की शादी के संबंध में बहन मनोरमा को स्पष्ट रूप से कहता है- "सुतलीवाला के बारे में तुम्हारी क्या राय है? उसने मुझसे स्पष्ट तो नहीं कहा लेकिन कुछ संकेत अवश्य किया है। मेरे विचार में तो यह बात बहुत उचित होगी। मैं जानता हूँ, पिता जी और माँ जी जाति-पाँति के संस्कार के कारण विरोध करेंगे लेकिन तुम्हारे भविष्य से खिलवाड़ नहीं किया जा सकता। तुम गंभीरता से सोचना।"[12]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य असमिया समाज में फैले जाति-भेद से भली-भाँति परिचित थे। उनकी दृष्टि में प्रचलित जाति-भेद तुच्छ है। वे मानव को मानव धर्म की दृष्टि से देखने के पक्षधर हैं। उन्होंने अपनी इसी विचारधारा को उपन्यासों में विभिन्न पात्रों के

माध्यम से अभिव्यक्त किया है। 'मृत्युंजय' में वैष्णव धर्म मानने वाले दैपारा सत्र के गोसाईं जी एक आदिवासी स्त्री डिमि के हाथों चाय पीने के लिए तैयार हो जाते हैं। इस पर उनके शिष्य आहिना कोंवर कहते हैं-"हे कृष्ण, आपकी मति मारी गयी है क्या गोसाईं जी? डिमि के हाथ की चाय पीएँगे, हे कृष्ण! मैं तो नहीं लूँगा, हे कृष्ण!"[13] इसके प्रत्युत्तर में गोसाईं जी आहिना कोंवर के मन में व्याप्त संकीर्णता को दूर करने की कोशिश करते हुए रामायण का उदाहरण देकर कहते हैं-"राम ने भी तो गुह चाण्डाल के हाथ का भोजन किया था। उससे क्या हुआ? जो होगा देखा जाएगा। इसका विचार आप लोग बाद में करेंगे। काम हो जाने के बाद यदि जीवित रहे तो फिर सोचा करेंगे। अब बभनई और भगतई छोड़ देनी होगी कोंवर।"[14] आगे फिर वे कहते हैं-"कृष्ण की चिन्ता करने से ही सब ठीक हो जाएगा। और सब छोड़ दें आहिना कोंवर! जात-पाँत, छुआछूत-इन सबका समाप्त हो जाना ही अच्छा है।"[15] परन्तु आहिना कोंवर की दृष्टि में अपनी जाति और धर्म का त्याग करने से बैकुण्ठ(मुक्ति) प्राप्ति का रास्ता बंद हो जाता है। वह कहता है-"जाति देने से तो अफीम खाना ही बेहतर है, हे कृष्ण।"[16] इसके प्रत्युत्तर में गोसाईं का एक अन्य एक शिष्य भिभिराम रामायण-महाभारत से उदाहरण देते हुए कहता है-"यदि भगवान कृष्ण कुब्जा मालिन के घर भोजन कर सकते हैं, यदि सीता अशोक वन में राक्षसी के हाथ का भोजन खाकर जी सकती हैं, तोक्या हम डिमि के हाथ का खाकर अपनी जाति नहीं बचा सकते? सच तो यह है कि जात-पाँत ही चूहे का बिल है: एकदम घुप्प अँधेरा। इससे हम न निकल सकते हैं, न इसमें घुस ही सकते हैं और ऐसे बाहर साँस भी नहीं ले सकते हैं। फिर आदमी की पहचान तो उसके काम से ही होती है।"[17]

असमिया समाज में वैष्णव धर्म को मानने वाले जात-पात, नीति-नियम, आदि के प्रति आस्थावान होते हैं। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य समाज को ऐसे कु-संस्कारों से मुक्त

करना चाहते हैं। उनका मानना है कि मनुष्य का वास्तविक धर्म मानव धर्म है। उनकी दृष्टि में जाति भेद, आदि संकीर्ण भावधारा के कारण ही हमारा समाज पिछड़ा हुआ है।'मृत्युंजय' उपन्यास के पात्र गोसाईं के माध्यम से भट्टाचार्य जी अपने मनोभावों को व्यक्त करते हुए कहते हैं- "हमारे लोगों में दो ही बुरी आदतें हैं। बातें बहुत करते हैं; और जाति-पाँति को लेकर भी उलझ पड़ते हैं।"[18] आगे फिर वे कहते हैं- "देश में सचमुच धर्म तो रहा ही नहीं। केवल नाम के नीति-नियम हैं। इन्हीं का आधार लेकर लोग ब्राह्मण बन जाते हैं,भगत बन जाते हैं, मौलवी-मुल्ला बन जाते हैं। वास्तविक धर्म तो होता है मानव धर्म। मानव का दुःख निवारण करने के लिए ही बुद्ध का अवतार हुआ। महापुरुष शंकरदेव और महाप्रभु चैतन्य ने भी मानव-प्रेम पर ही बल दिया। मानव के अन्तर में ही ईश्वर है। ईश्वर के विषय में उन्होंने कुछ कहा ही नहीं; 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' को ही अपना एकमात्र धर्म बताया।"[19]

असमिया समाज में उच्च स्थान पर बैठे ब्राह्मण एवं सत्राधिकार जहाँ एक ओर शंकरदेव, माधवदेव के प्रति धार्मिक आस्था रखते हैं, वहीं दूसरी ओर निम्नजाति के लोगों की अवहेलना करते हैं। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ब्राह्मणों एवं सत्राधिकारों के प्रति अपना आक्रोश 'माँ' उपन्यास के पात्र केन्दुकलाई के माध्यम से व्यक्त करते हैं-"क्यों, तुझे मालूम नहीं है कि कलिता वंश हमसे कितनी घृणा करता है। उनके 'नाम-घर' में हमें प्रवेश तक करने नहीं दिया जाता। हम उनसे किस बात में कम हैं?वे हमको आदमी भी मान नहीं सकते।"[20]

हमारे समाज में बचपन से जातिभेद का अहसास करवा दिया जाता है, जिसका स्पष्ट चित्रण बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने उपन्यासों में किया है। 'माँ' उपन्यास का पात्र बूढ़ा भगत निम्न जाति का है। बूढ़ा भगत के पुत्रों को बाछा की माँ ने बिहु में अपने

घर बुलाया था। हर बार की तरह इस बार भी वे लोग उनके घर नहीं गए क्योंकि "असल में पहले के नियम अनुसार ब्राह्मण के घर में खाना-पीना करना वे पसंद नहीं करते हैं।"[21] दरअसल ब्राह्मणों के घर निम्न जाति के लोगों को चूल्हे से दूर बिठाकर खिलाया जाता था और उनके खाने के बर्तन भी अलग होते थे तथा खुद के खाये हुए बर्तन खुद ही धोने पड़ते थे। इस तरह के अपमानजनक व्यवहार के कारण बूढ़े भगत के पुत्रों को ब्राह्मणों के घर खाना-पीना पसंद नही था।

'शतघ्नी' उपन्यास में ब्राह्मण संस्कारों में पली प्रमिला का पति बंधुराम मजूमदार व्रात्य (निम्न जाति) है। बंधुराम के पिता के पहली बार उनके (बंधुराम के) घर आने पर प्रमिला अपने ब्राह्मणत्व के श्रेष्ठता बोध के कारण अपने पति के पिता अर्थात अपने ससुर को वह सम्मान नहीं देती जो ससुर को देना चाहिए। प्रमिला उनका अभिवादन या आदर सत्कार नहीं करती, बल्कि दूर खड़ी रहती है।

'मृत्युंजय' उपन्यास का पात्र धनपुर निन्म जाति का है। वह बचपन में आदिवासी लड़की डिमि से प्रेम करता था। जात-पाँत के भेदभाव के कारण उसकी शादी डिमि से नहीं हो पाती। वह समाज से जात-पाँत के भेदभाव को खत्म कर देना चाहता है। जात-पात संबंधी भेदभाव के प्रति आक्रोश व्यक्त करते हुए वह डिमि से कहता है-"...सच पूछा जाए तो इस देश में आदमी बनना भी बहुत ही मुश्किल है! यहाँ आदमी की पहचान उसके काम से नहीं, नाम-धाम, कुल-मर्यादा और जात-पाँत के आधार पर होती है।...धर्म पर ब्राह्मणों का अधिकार है और इसी तरह कुछ गिने-चुने लोग ही वंशानुक्रम से सब कुछ भोग रहे हैं। हमारे लिए केवल जूठन ही बची रहती है। यह सब देख-सुनकर देह में आग लग जाती है। जी में आता है, एक बार भीम की तरह गदा घुमाकर सब कुछ मिट्टी में मिला दूँ, लेकिन...।"[22] आगे फिर वह कहता है-"तुम्हें गारो और अपने को असमिया

समझने की धारणाओं का समाप्त हो जाना ही अच्छा है।...मैं शुरू से ही पुरानी और सड़ी-गली रूढ़ियों का विरोध कर रहा हूँ।"[23]

इसी तरह की बात 'शतघ्नी' उपन्यास का पात्र बंधुराम भी कहता है-"यदि मुझमें सामर्थ्य होती तो अवश्य जाति-पाँति के बाधा-बंधनों को विध्वंस और चूर्ण करके मैं हिन्दू समाज की उनके लज्जाजनक और हानिकारक प्रभाव से रक्षा करता।"[24]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य समाज में मौजूद धार्मिक आडंबर, जातिगत भेद-भाव को मूल्यहीन मानकर भेदभाव रहित एक ऐसे आदर्श समाज की प्रतिष्ठा की कल्पना करते हैं, जिसमें जात-पाँत, ऊँच-नीच, आदि जैसे संकीर्ण मनोभाव न हों। सम्पूर्ण मानव समुदाय को मानव धर्म की दृष्टि से देखा जाए। 'मृत्युंजय' उपन्यास के पात्र धनपुर के माध्यम से मानो भट्टाचार्य जी स्वयं कहते हैं- "रसोईघर सबके लिए एक ही रहेगा। वहाँ जात-पाँत का भेदभाव नहीं चलेगा। सबके लिए एक ही हाँड़ी चढ़ेगी। हाँ, कोई नहीं खाना चाहे तो उन पर दबाव नहीं डाला जाएगा।"[25]

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ने जातिगत भेदभाव को दूर करने के लिए अपने-अपने उपन्यासों में अंतरजातीय विवाह को एक विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया है। यशपाल ने 'मनुष्य के रूप' उपन्यास में हिन्दू लड़की मनोरमा एवं पारसी युवक सुतलीवाला तथा 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में ईसाई लड़की उषा एवं हिन्दू लड़के अमरकांत के विवाह को दर्शाया है। वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने 'माँ' उपन्यास में कलिता कुल के लड़के रजत एवं सूतकुल की लड़की नुमली के विवाह के माध्यम से अंतरजातीय विवाह को दर्शाया है। उनके दूसरे उपन्यासों में भी अंतरजातीय विवाह के कई उदाहरण दिखाई पड़ते हैं, जैसे 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में मुसलमान लड़की फ़िरोजा का विवाह हिन्दू युवक रबीन दत्त के साथ होता है, 'मृत्युंजय' उपन्यास की मिकिर

जनजाति की युवती डिमि का विवाह गारो युवक डिली के साथ होता है। इसी तरह 'शतघ्नी' उपन्यास के बंधुराम मजूमदार का विवाह विधवा ब्राह्मणी प्रमिला के साथ और 'प्रजा का राज' उपन्यास के नागा युवक खाटिंग का विवाह खासी लड़की फिलिस के साथ सम्पन्न होते हुए दर्शाया गया है।

उपर्युक्त विचार विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ही जाति व वर्ण व्यवस्था को समतामूलक समाज के निर्माण में बाधक मानते हैं। यशपाल समाज में व्याप्त जाति-वर्ण संबंधी विषमता को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहते हैं।वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य गाँधीवादी-सुधारवादी तरीके से जाति-वर्ण संबंधी विषमता को दूर करने का प्रयास करते हुए दिखाई देते हैं।

4.2 वर्ग चेतना और आर्थिक विषमता

आर्थिक संरचना के कारण हमारा समाज सामान्यतः दो वर्गों में बँटा हुआ है- एक शोषक वर्ग और दूसरा शोषित वर्ग। शोषक वह वर्ग है जो उत्पादन के साधनों पर अपना स्वामित्व बनाये रखता है तथा जिसके पास आर्थिक-शक्ति का सामर्थ्य होता है।शोषित वह वर्ग है जिसका शोषण शोषक वर्ग के द्वारा प्रत्येक समाज में होता रहा है। यह एक ऐसा वर्ग है जो उत्पादन के साधनों का प्रमुख आधार होते हुए भी उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व से पूरी तरह वंचित होता है। यह वर्ग केवल शोषकों के हाथ की कठपुतली बनकर रह गया है। आर्थिक अभाव तथाशिक्षा के अभाव के कारण न चाहते हुए भी अभिशप्तों का जीवन व्यतीत करने के लिए यह वर्ग बाध्य है।

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के प्राय: सभी उपन्यासों में उनकी वर्गीय चेतना साफ दिखाई देती है। यशपाल वर्ग के सवाल को मार्क्सवादी नज़रिए से देखते हैं और इसलिए समाज में मौजूद वर्ग भेद को खत्म कर एक वर्गविहीन समतामूलक समाज की स्थापना के लिए वर्ग-संघर्ष के माध्यम से समाज की आर्थिक व्यवस्था में बदलाव को आवश्यक मानते हैं। ज़ाहिर है कि यशपाल केवल विचारों के माध्यम से किसी किस्म के सामाजिक परिवर्तन के कोरे भाववाद में नहीं उलझते हैं। इस संबंध में वे अपने निबंध 'देखा, सोचा, समझा' में लिखते हैं- "यह उदाहरण है समाज की आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन किये बिना, समाज में शोषित और शोषक वर्गों के मौजूद रहते, केवल विचारों के बल से समाज से अशांति और विषमता को दूर करने की कल्पना। इसे आप हृदय परिवर्तन का नाम देते हैं।"[26]

सामाजिक समरसता और समानता के लिए गाँधी की श्रेणी-मैत्री और हृदय परिवर्तन की नीति को यशपाल महज एक प्रपंच मानते हैं। इस संदर्भ में वे अपने निबंध 'गाँधीवाद की शव परीक्षा' में लिखते हैं-"व्यावहारिक दृष्टि से यह बात स्पष्ट है कि आज की अवस्था में परिवर्तन (पैदावार के साधनों के समाजीकरण) की माँग साधनहीन वर्ग

की जीवन रक्षा की माँग है। परिवर्तन का विरोधी गाँधीवादी अध्यात्म समाज की व्यवस्था को, पैदावर के साधनों को यथावत अर्थात् व्यक्तिगत स्वामित्व और उत्तराधिकार की प्रणाली पर कायम रखने का प्रयत्न है, जिसका अर्थ सामंतवादी और पूँजीवादी प्रणाली की रक्षा करना है।"[27] 'दादा कामरेड' उपन्यास का पात्र रफीक गाँधीवादी अर्थव्यवस्था का विश्लेषण करते हुए कहता है-"काँग्रेस जिस श्रेणी के लोगों से बनी है, वे लोग साधारणतः न तो मजदूर श्रेणी की कठिनाइयों को समझते हैं और न उनके साथ सहानुभूति ही रखते हैं। काँग्रेस पर जिस श्रेणी का कब्जा है, उनके और मजदूरों के हितों में विरोध है। काँग्रेस चलती है महात्मा गाँधी की नैतिकता पर। उस नैतिकता का आधार है कि भावना की इच्छा से ही मालिक, मालिक बने हैं और मजदूर, मजदूर हैं। मालिक, मालिक रहेंगे और मजदूर, मजदूर रहेंगे। मालिकों की दया से ही मजदूरों की अवस्था सुधर सकती है। हम तो मालिक-मजदूर का अंतर ही मिटा देना चाहते हैं। हम मालिक को मालिक ही नहीं रखना चाहते तो फिर काँग्रेस की मालिक श्रेणी हमें कैसे सहन कर सकती है, कैसे हमें सबल बनने दे सकती है!"[28]

इस संदर्भ में आलोचक मैनेजर पाण्डेय लिखते हैं- "यशपाल का संकेत यह है कि काँग्रेसी शासन में रामराज्य का छद्म गाँधीवाद की स्वाभाविक परिणति है। यह सब जानते हैं कि गाँधीजी वर्ग-संघर्ष की जगह वर्ग-मैत्री पर जोर देते थे, लेकिन मैत्री तो बराबर वालों में होती है, शोषकों या शोषितों में या शासकों या शासितों में मैत्री की बात छल के अलावा और क्या हो सकती है।"[29]

यशपाल सामाजिक अर्थव्यवस्था पर किसी एक वर्ग के अधिकार को अनुचित मानते हैं। उनका मानना है कि सामाजिक अर्थव्यवस्था पर किसी एक वर्ग का अधिकार समाज में वर्गभेद उत्पन्न करता है। इसलिए उन्होंने समाज में फैली आर्थिक विषमता को

जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए वर्ग संघर्ष को अनिवार्य माना है। 'दादा कामरेड' उपन्यास में मजदूर नेता हरीश अदालत में फाँसी की सजा सुनाई दिये जाने के बाद भी साम्राज्यवादी नीतियों के विरुद्ध विनाश का नारा लगाता है और दुनिया भर के मजदूरों के प्रति सहानूभुति प्रदर्शित करता है। इसी उपन्यास में शैल अपने पिता लाला ध्यानचंद से कहती है-"परंतु यदि आप उनकी मेहनत का फल उनसे छीनकर सब अधिकार अपने हाथ में ले लें तो मजदूर क्या करें? उन्हें भी तो अपने प्राण बचाने हैं।"[30]

यहाँ यशपाल शैल के जरिए वर्ग संघर्ष विषयक अपनी दृष्टि को उजागर करते हैं। इसी तरह 'देशद्रोही' उपन्यास का पात्र नासिर भी सम्पूर्ण संसार से पूँजीवाद को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए तत्पर दिखाई देता है।

पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में मजदूर वर्ग को उत्पादन की प्रमुख शक्ति होते हुए भी श्रम का उचित मूल्य नहीं दिया जाता। इसी से मजदूर वर्ग की स्थिति दयनीय होती चली जाती है और पूँजीपति वर्ग अधिक-से-अधिक सम्पन्न होता जाता है। 'मनुष्य के रूप' उपन्यास के पात्र ड्राइवर कुन्दनसिंह की इन बातों से पूँजीपतियों की सम्पन्नता की असलियत सामने आती है-"कम्पनी साली तो हमारी कमाई खाती है। माँ के खसम मालिक तो लुगाइयों को लेकर बिस्तर में पड़े रहते हैं। जान हथेली पर रखे, बरसात में गिरते पहाड़ों पर से आदमियों को तो हमीं ढोते हैं। मैंने इस कम्पनी में नौकरी की थी तो छह मोटरें थीं। सिर्फ छह,समझे बेटा! अब एक सौ साठ हैं। कहाँ से आ गईं ये? मालिकों की.....में से? साले, यह कुन्दनसिंह का खून पसीना है।"[31]

पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में सामाजिक अर्थव्यवस्था का पूँजीभूत रूप पूँजीपतियों के अधीन रहता है, जिसका प्रयोग वह सर्वहारा वर्ग के शोषण के लिये करता है। 'दादा कामरेड' उपन्यास का पात्र अख्तर पूँजीपतियों का प्रतिनिधित्व करने वाले इंजीनियर,

कश्मीरी और जाबर को जान से मार डालने का इरादा रखता है। कारखाने में फैली अव्यवस्था से ऊब कर वह हरीश से कहता है- "अरे सुन तो, तमंचा है तेरे पास। बस मुझे तीन आदमियों को मारना है। एक इंजीनियर, दूसरा साला ये कश्मीरी और तीसरा वह जाबर! इनके मारे सारी लाइन बरबाद है। यह जाबर हरेक मजदूर से महीनों दुअन्नी रुपया लिये जाता है। साले ने अपना साहूकारा अलग खोल रखा है। आना रुपया रोज का सूद लेता है, और जब अपने मजदूर एक होने लगते हैं, साला दो-चार को निकाल बाहर करता है और नये मजदूर ले आता है। साले ने बीसियों खुफिया लगा रखे हैं। तेरी कसम, इसने रफीक को पीटने के लिए गुण्डे छोड़ रखे हैं! मैं इन तीन को ठंडा कर दूँ तो हजारों के दिल ठंडे हो जायेंगे।"[32] अख्तर की इन पंक्तियों में मजदूरों की वर्ग चेतना मुखरित हो रही है।

इसी तरह 'मनुष्य के रूप' उपन्यास का पात्र भूषण एम.ए. पास कर बैंक में पचहत्तर रुपये की नौकरी करता है। उसे स्वयं शोषण का स्वीकार होना पड़ता है। भूषण का मानना है कि पूँजीवादी समाज में उस जैसे लोगों के लिए कोई जगह नहीं है। वह इस क्रूर सामाजिक व्यवस्था को समाप्त कर देना चाहता है। इस संदर्भ में भूषण बैरिस्टर जगदीश सहाय से कहता है-"समाज में जो अच्छा है, वह सब छीनकर तुम लोगों के भद्र-समाज की रचना कर ली गयी है। जैसे कश्मीर या कुल्लू के किसी सेबों के बाग के सब वृक्षों से फलों के रूप, रस और गन्ध के तत्व किसी क्रिया से खींचकर दस-पाँच गमलों से पौधे सजा लिये गये हों। शेष भाग निस्सार होकर, सड़कर, जलकर, विरूप, निशक्त और निष्प्रभ हो जाये। भद्र श्रेणी के सम्पन्न गमलों में सजा हुआ, सहृदयता से महकता हुआ आपका समाज अपने आप में चाहे कितना संतुष्ट हो परंतु समाज के लिए वह असह्य

अन्याय है।...हमें पूरे समाज को अवसर देना है।...दस-पाँच गमलों की प्रशंसा से पूरे बाग की दूरवस्था सह्य नहीं हो सकती।"[33]

वर्ग संघर्ष की स्थिति में पूँजीपति वर्ग अपने ही वर्ग की हिमायत करता है। मजदूरों के आंदोलन को समाप्त करने का प्रयास करते हुए मालिक लोग मजदूर सभा के विरुद्ध मजदूरों को भड़काते हैं और मजदूरों द्वारा अपने श्रम के मूल्य में वृद्धि के लिए की गई हड़ताल को असंगत बताते हैं। 'दादा कामरेड' उपन्यास में पूँजीपति वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले सेठ लाला ध्यानचंद मजदूरों की हड़ताल को उनका स्वेच्छाचार बताते हुए अपनी बेटी शैल से स्पष्ट शब्दों में कहते हैं-"हम लोग इस अवस्था में आज इसीलिए हैं कि आर्थिक व्यवस्था की चाबी अपने हाथ में ले सकने के लिये हमने बहुत श्रम किया है। आज मजदूर अपनी मजदूरी स्वयं निश्चित करने की माँग उठाकर यह चाबी हमसे छीनने का यत्न कर रहे हैं। इसका अर्थ होगा कि समाज में धन का, समाज में पैदा होने वाली वस्तुओं का बँटवारा मजदूरों की इच्छा के अनुसार हो। ऐसी अवस्था में हमारी श्रेणी की क्या स्थिति होगी? यह एक आना या दो आना मजदूरी बढ़ाने का सवाल नहीं। यह समाज की व्यवस्था की चाबी एक श्रेणी के हाथ से दूसरी श्रेणी के हाथ में चले जाने का सवाल है। इसमें दया और सहानुभूति का सवाल नहीं। तुम सोचकर देखो; यह हमारे लिये जीवन-मृत्यु का सवाल है। हमारी श्रेणी जो अब तक समाज का नियंत्रण करती आ रही है उसके मरने-जीने का सवाल है। समाज के प्रति हमारी जिम्मेदारी का सवाल है।समाज की यह व्यवस्था हमने खड़ी की है। मजदूरों का स्वेच्छाचार समाज को और स्वयं उन्हें भी नष्ट कर देगा।"[34]

'देशद्रोही' उपन्यास में पूँजीपति वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले सेठ जीवनलाल-पुरुषोत्तमलाल भाटिया राज से कहते हैं-"मजदूरों की माँगें क्या हैं? यह तो मजदूर सभा की शरारत है। मजदूर सभा और नये मजदूर नेताओं से पहले मजदूरों की माँगें कहाँ थीं?

मजदूर सभा तो मिलों की मालिक बन जाना चाहती है? हम मिलें इन्हें कैसे सौंप दें? मिलें तो पत्तीदार जनता की सम्पति हैं। हम लोग तो जनता की धरोहर संभाले हैं। मजदूर तीन आना रुपया मजदूरी बढ़ाने को कहते हैं? आप जानती हैं कि बाजार भाव गिर रहा है? जापान छ: पैसे गज कपड़ा दे रहा है? इस समय देशी व्यापार की रक्षा के लिये बाजार में सस्ता कपड़ा देना जरूरी है। कपड़ा बनाने की मजदूरी बढ़ाने से कपड़े का दाम बढ़ेगा या नहीं? क्या देश के गरीब महँगा कपड़ा खरीद सकते हैं? हमें किसानों का भी तो खयाल करना है। वे बेचारे क्या करेंगे। आधा देश तो नंगा पड़ा है। महँगा कपड़ा वह कैसे खरीदेंगे? या फिर कपास के दाम घटाये जाएँ। मजदूरों को तो अपना ही स्वार्थ दिखाई देता है।"[35]

यशपाल सामाजिक अर्थव्यवस्था में समानता लाने के लिए मजदूर संगठन को आवश्यक मानते हैं। उनका मानना है कि मजदूर संगठित होकर ही समाज में फैली आर्थिक विषमता को जड़ से उखाड़ फेंक सकते हैं और नई समाज व्यवस्था लागू कर सकते हैं। इस संदर्भ में यशपाल अपने निबंध 'न्याय का संघर्ष' में लिखते हैं-"मनुष्य की संचित शक्ति का एक रूप पूँजी है तो दूसरा रूप 'संघ शक्ति' है। नब्बे प्रतिशत के पास यह दूसरी शक्ति बहुत बड़ी मात्रा में है। अभी तक उन्होंने अपनी इस शक्ति को नहीं पहचाना क्योंकि अब तक ज्यों-त्यों प्राण बच रहे थे, परंतु अब पूँजी की शक्ति का पंजा इतना कड़ा हो गया कि साँस लेना मुश्किल है। यदि नब्बे प्रतिशत अब भी अपनी इसी शक्ति के आधार पर न्याय न माँगे तभी ताज्जुब है।"[36] यशपाल का यह भाव 'दादा कामरेड' उपन्यास में देखा जा सकता है।'दादा कामरेड' उपन्यास का पात्र हरीश मजदूरों की शक्ति को भलीभाँति पहचानता है। फलस्वरूप वह मजदूरों से एकजुट होकर मिल मालिकों के खिलाफ हड़ताल में भाग लेने की अपील करता है-"मजदूर भाइयो, यह मिलें तुम्हारी और तुम्हारे

भाइयों की मेहनत से बनी हैं। तुम्हारे बिना यह मिलें एक सेकेण्ड भी नहीं चल सकतीं। इनमें धागे का एक तार भी तैयार नहीं हो सकता। तुम्हारी मेहनत की कमाई से मिलों के मालिक और हिस्सेदार बैठे-बैठे संसार के सब सुख लूटते हैं और तुम सब कुछ पैदा करके भी पेट भर अनाज नहीं पा सकते। मंदी का बहाना करके आज तुममें से कुछ को निकाला जा रहा है। कल तुम्हें निकाल दिया जायेगा और तुम्हारी जगह सस्ती मजदूरी पर दूसरे मजदूर भरती कर लिए जायेंगे। जब तुम्हारे सैकड़ों भाई बेकार हो जायेंगे तो वे रोटी कपड़ा कहाँ से खरीदेंगे? खरीदने वाले न होने से फिर और मंदी होगी और तुम्हें निकालने का बहाना बनेगा। तुम्हारी ही मेहनत काट-काटकर पूँजी तैयार की जाती है और नई मिलें खोलकर तुम्हें किराये पर लगाया जाता है और तुम्हारा खून चूसा जाता है। यद्यपि यह मिलें मजदूर भाइयों की ही मेहनत से तैयार की गई हैं, परंतु मजदूर मिलों का सब मुनाफा नहीं माँगते। मजदूर पूछते हैं, तेजी के समय उनकी मेहनत से जो लाभ उठाया गया था, वह कहाँ गया? मंदी के समय मालिकों के मुनाफे में कमी की जाये। उनके पास गुजारे के लिए कमी नहीं है। मजदूर पहले ही आधा पेट पाते हैं, उन पर जुल्म न किया जाये। मजदूर भाइयों, हम सूखी रोटी के निवाले माँग रहे हैं और मालिक लोग अपने ऐशो-इशरत के लिए जिद्द कर रहे हैं। हम मर जायेंगे, परतु पीछे नहीं हटेंगे...।"[37]

इसी तरह 'मनुष्य के रूप' उपन्यास का पात्र कुंदनसिंह कहता है-"इन माँ....को मैं समझाऊँगा। कौन माँ का खसम यूनियन का मालिक बनता है; बोले मेरे सामने! यूनियन सब ड्राइवर भाइयों की है। यूनियन को तुम क्या समझते हो? यूनियन नौकर की मालिक से लड़ाई का मोर्चा है, समझे! जब मालिक जुल्म करता है तब यूनियन बनती है। सब मालिक जुल्म करते हैं, जैसे सब घोड़े घास खाते हैं, समझे! जो अपनी बहन के खसम मालिकों की....में घुसते हैं वो मजदूरों के दुश्मन हैं। जो साले समझते हैं कि मालिक

हमारा बाप है, मालिक को अपनी माँ का खसम बनाने वालों पर भी जब मालिक जुल्म करता है तो वो भी यूनियन में आ जाते हैं और अपने भाइयों से गद्दारी छोड़कर ईमानदार भाई बन जाते हैं।"[38]

यशपाल के उपन्यासों में वर्ग चेतना का एक नया रूप दिखाई देता है। उनके उपन्यासों में उच्च वर्ग के कुछ पात्र सर्वहारा के दु:ख-कष्ट, जीवन की समस्याओं एवं जटिलताओं को देख उनकी सोच को अपनाते हुए दिखाई देते हैं। 'दादा कामरेड'के उच्चवर्गीय पात्र शैल और राबर्ट हरीश द्वारा चलाये गये मजदूर आंदोलन में उसकी सहायता करते हैं। 'मनुष्य के रूप' की उच्चवर्गीय स्त्री पात्र मनोरमा सर्वहारा वर्ग के प्रति सहानुभूति रखने के कारण साम्यवादी पार्टी की सदस्य बन जाती है तथा पार्टी की सहायता के लिये बहुत परिश्रम करती है। 'झूठा सच' की कनक और 'मेरी तेरी उसकी बात' का अमरकांत शिक्षित होने के कारण सर्वहारावर्ग की व्यावहारिक कठिनाइयों को समझते हैं और उसकी ओर आकृष्ट होते हैं।

यशपाल के विपरीत बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य समतामूलक समाज की स्थापना के लिए वर्ग-संघर्ष की अनिवार्यता को स्वीकार नहीं करते। वे गाँधीवादी श्रेणी-मैत्री और संशोधनवाद के रास्ते समाज में समरसता कायम करनाचाहते हैं। 'पाखी घोड़ा' उपन्यास के पात्र रविचंद्र के जरिए वर्ग-संघर्ष के बारे में अपने नजरिए को व्यक्त करते हुएवे कहते हैं- "असमिया जाति को धनी और गरीब इन दो भागों में बाँट देने का मतलब है, इस छोटी-सी जाति के टुकड़े-टुकड़े कर देना, इनकी एकता नष्ट कर देना और एकता नष्ट कर देने का मतलब है असमिया संस्कृति की उन्नति को सदा-सदा के लिए अवरुद्ध कर देना।"[39]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य वर्गभेद रहित एक समतामूलक समाज की स्थापना के लिए गाँधी के रचनात्मक कार्य के महत्व हो स्वीकार करते हैं। 'अँधेरा-उजाला' उपन्यास का पात्र मीनधर ग्रामीण समाज में शोषित एवं शोषक वर्ग के अंतर को गाँधी के रचनात्मक कार्य के जरिए समाप्त करने का प्रयत्न करता है। वह स्पष्ट रूप से शोन्ति से कहता है- "अब तो रचनात्मक काम करना ही एकमात्र गति है। भारत में क्रांति भी इसी राह से आएगी।"[40]

'पाखी घोड़ा' उपन्यास का पात्र नवीन उपन्यास के आरंभ में समातामूलक समाज की स्थापना के लिए क्रांतिकारी आंदोलन का रास्ता अख्तियार करता हुए दिखाई देता है, परन्तु अंत में वह समातामूलक समाज की स्थापना के लिए क्रांति की राह त्यागकर गाँधी के रचनात्मक कार्य वाले रास्ते को अपना लेता है।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ग्रामीण समाज की आर्थिक विषमता को समाप्त करने के लिए वर्ग-संघर्ष के बदले श्रेणी-मैत्री को आवश्यक मानते हैं। 'अँधेरा-उजाला' उपन्यास का पात्र गजेन शर्मा मीनधर द्वारा वर्ग-संघर्ष की अनिवार्यता संबंधी प्रश्न पूछे जाने पर कहता है- "इस गाँव में उत्पीड़न करने वाला मालिक तो कोई नहीं है। रैयत लोग ही मालिकों से ज्यादा प्रमुख हो उठे हैं। सब लोग मिलकर प्रयास करें तो समूचे गाँव को एकजुट कर उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।...कोई उँचा-नीचा नहीं रहेगा, सभी मिहनत-मजदूरी करेंगे, और सबको बराबर का हिस्सा मिलेगा।"[41]

इसी तरह 'पाखी घोड़ा' उपन्यास की स्त्री पात्र सुमति बहन के जरिए अपने मनोभावों को व्यक्त करते हुए भट्टाचार्य जी कहते हैं-"मुझे जितनी खबर मिली है उसके अनुसार उन सबने श्रेणी शत्रु (अर्थात् शोषित समाज से भिन्न लोगों को अपना शत्रु मानकर) को समाप्त कर देने का प्रस्ताव तैयार कर लिया है। परंतु इस प्रकार के कामों में उग्रता या प्रचण्डता का भाव तो है लेकिन दूर-दृष्टि नहीं है।"[42]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य गाँधी के हृदय परिवर्तन की नीति को समातामूलक समाज के निर्माण के लिये आवश्यक मानते हैं। उनका मानना है कि इस राह पर चलकर ही समाज में व्यक्तियों के बीच त्याग और सेवा की भावना को पैदा कर उँच-नीच का भेदभाव खत्म किया जा सकता है। इसका स्पष्ट रूप 'अँधेरा-उजाला' के पात्र मीनधर के मनोभाव में देखा जा सकता है-"गाँवों की प्रगति के बगैर इस देश की मुक्ति होने वाली नहीं है। पहले-पहल अस्पताल के जरिए ही ग्राम-सेवा आरंभ की जाएगी। गाँवों में जो अंदर-ही-अंदर सामाजिक विरोध फैल रहा है, उसका आसान हल किस चीज में है, उसे पता नहीं। मगर उसने तय किया है, सेवा के जरिए ही वह गरीब लोगों के मन में सुचेतना जगाएगा और सम्पन्न वर्ग के अंदर त्याग और सेवा की भावना पैदा करेगा।...रचनात्मक कार्य ही इस देश के गाँवों में नयी जिन्दगी लाने का माध्यम है।"[43]

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि यशपाल वर्ग के सवाल को मार्क्सवादी नजरिए से देखते हैं। इसलिए वे वर्ग-संघर्ष को समतामूलक समाज की स्थापना के लिए अत्यंत आवश्यक मानते हैं। लेकिन बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य वर्ग-संघर्ष की अनिवार्यता को स्वीकार नहीं करते। उनका मानना है कि गाँधीवादी रचनात्मक कार्य, वर्ग-मैत्री और संशोधनवाद की राह पर चलकर ही एक समतामूलक समाज की स्थापना की जा सकती है।

4.3 भारत छोड़ो आंदोलन की औपन्यासिक अभिव्यक्ति

'भारत छोड़ो आंदोलन' भारत की आजादी के इतिहास का एक महत्वपूर्ण आंदोलन था। यह आंदोलन देशव्यापी था, जिसमें बड़े पैमाने पर भारत की जनता ने हिस्सेदारी की और अभूतपूर्व साहस और सहनशीलता का परिचय दिया। द्वितीय विश्वयुद्ध के आरंभ ने भारतीय जनता को इस क्रांति की ओर अग्रसर होने के लिए मार्ग प्रशस्त किया। सन् 1939 ई. में आरंभ हुए विश्वयुद्ध ने सन् 1942 ई. तक आते-आते एशिया महादेश में एक नया मोड़ लिया। इटली एवं जर्मनी की सहायता से जापानी सैनिक एक के बाद एक देशों पर कब्जा करने में सफल होते गये। जापानी सेना द्वारा सिंगापुर, रंगून, अंडमानद्वीप समूह आदि पर कब्जा कर लेने से भारत के सीमांत क्षेत्र में खतरा पैदा हो गया। अंततः अंग्रेजों को इस बात का एहसास हुआ कि सद्भावनापूर्ण कदम उठाकर भारतीय जनमत को अपने पक्ष में करना आवश्यक हो गया है।[44] इसी कारण उन्होंने युद्ध में भारत का सक्रिय सहयोग पाने के लिए कैबिनेट मंत्री स्टैफोर्ड क्रिप्स को समझौते के एक मसविदे के साथ भारत भेजा। 23 मार्च,1942 ई. को क्रिप्स भारत आये। दिल्ली पँहुचकर उन्होंने नेताओं के समक्ष ब्रिटिश सरकार की योजना प्रस्तुत की, जिसमें यह उल्लेख था कि युद्ध समाप्ति के पश्चात् ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत को डोमिनियन राज्य का दर्जा प्रदान किया जाएगा। साथ ही उसमें ऐसे संविधान निर्माण करनेवाले परिषद का गठन करने का वादा किया गया जिसमें कुछ सदस्य प्रांतीय विधायकों द्वारा निर्वाचित होंगे और कुछ(रियासतों का प्रतिनिधित्व करने के लिए) शासकों द्वारा नामंकित किये जाएँगे। पाकिस्तान की माँग के लिये यह गुंजाइश बनाई गयी कि यदि किसी प्रांत को नया संविधान स्वीकार्य नहीं होगा तो वह अपने भविष्य के लिए ब्रिटेन से अलग समझौता कर सकते हैं।क्रिप्स मिशन हालाँकि राजनैतिक दलों को संतुष्ट करने के लिए भेजा गया था, परंतु इसके प्रस्ताव को राजनैतिक दलों द्वारा खारिज कर दिया

गया। इसका कारण यह था कि नेहरू,गाँधी आदि अखंड और सम्प्रभु भारत चाहते थे, महज डोमिनियन अधिकार नहीं। इसके अलावा वे भारत के संभावित विभाजन की व्यवस्थाओं से भी असहमत थे।[45] इस मिशन के व्यर्थ होने का एक बड़ा कारण यह भी था कि इसमें सत्ता के हस्तांतरण की कोई भी शर्त स्पष्ट नहीं थी। इसीलिए भारत के तमाम राजनैतिक संगठनों ने इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया।

क्रिप्स मिशन की व्यर्थता ने भारतवासियों के मन में निहित निराशा एवं क्षोभ की भावना को और प्रबल किया। क्रिप्स मिशन की विफलता के बाद गाँधी जी ने अपना तीसरा बड़ा आंदोलन छेड़ने का फैसला लिया। उनका मानना था कि जापान के शत्रु भारतवासी नहीं, बल्कि ब्रिटिश हैं। अत: यदि ब्रिटिश भारत त्याग देंगे, तो भारतवर्ष जापानियों के आक्रमण से बच जाएगा। जापानी सेना के आक्रमण से भारत की रक्षा करने हेतु एवं भारतीय जनता को अंग्रेजों के चंगुल से बचाने के लिए अंग्रेजों को भारत से खदेड़ना अत्यंत आवश्यक है। द्वितीय विश्वयुद्ध के आरंभ होते ही सुभाष चंद्र बोस, काँग्रेस सोशलिस्ट पार्टी, कम्युनिस्ट पार्टी ब्रिटिश सरकार के खिलाफ आन्दोलन छेड़ने के लिए गाँधी जी पर दबाब डाल रहे थे। लेकिन ऐसी विषम परिस्थिति में आंदोलन छेड़ कर अंग्रेजों को भारत छोड़ने पर मजबूर करना गाँधी जी की नीति के खिलाफ था। अत: उस समय उन्होंने आंदोलन छेड़ने से इनकार कर दिया था। गाँधी जी को विश्वास था कि इस परिस्थिति में ब्रिटिश सरकार से बातचीत करके इस समस्या का समाधान किया जा सकता है। परंतु क्रिप्स मिशन की विफलता ने उनकी सारी उम्मीदों पर पानी फेर दिया, जिससे गाँधी जी का मन बदल गया। मौलाना अबुल कलाम आजाद गाँधी जी के इस विचार-परिवर्तन को रेखांकित करते हुए लिखते हैं- “After Cripps departed, I also found a marked change in Gandhiji’s attitude,…Gandhiji’s mind was

now moving from one extreme of complete inactivity to the other extreme of organized mass effort".[46]

गाँधी यह भी महसूस कर रहे थे कि अंग्रेजों के चंगुल से निकलने की चाह रखने वाली कसमसाती भारतीय जनता को ज्यादा समय तक रोके रहना संभव नहीं होगा। इसीलिए 8 अगस्त, 1942ई. को अखिल भारतीय काँग्रेस कमिटी के मुम्बई अधिवेशन में एक लम्बे विचार विमर्श के पश्चात् 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का प्रस्ताव पारित किया गया और कहा गया कि भारत में ब्रिटिश शासन की तत्काल समाप्ति भारत में स्वतंत्रता तथा लोकतंत्र की स्थापना के लिये अत्यंत आवश्यक हो गई है। गाँधी जी को इस आंदोलन का नेतृत्व सौंपा गया। आंदोलन का भार स्वीकार करते ही गाँधी ने संघर्ष के लिये जनता का आह्वान करते हुए उन्हें 'करो या मरो' का मंत्र सौंपा। 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का प्रस्ताव पारित होने के बाद 9 अगस्त, 1942 को काँग्रेस के बड़े-बड़े नेताओं- महात्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू, डॉ राजेंद्र प्रसाद, सरदार बल्लभ भाई पटेल आदि को हिरासत में ले लिया गया। यहाँ तक कि काँग्रेस अधिवेशन से लौटते हुए असम के काँग्रेसी नेता गोपीनाथ बरदलोई और सिद्धनाथ को भी धुबुरी में गिरफ्तार कर लिया गया।[47] दरअसल, आंदोलन आरंभ होने से पहले ब्रिटिश सरकार द्वारा देश के बड़े-बड़े नेताओं को हिरासत में लेने के पीछे प्रमुख उद्देश्य यह था कि यह आंदोलन स्थगित हो जाए। परंतु उनकी यह धारणा गलत साबित हुई। ब्रिटिश सरकार के इस कदम ने आग में घी डालने का काम किया, जिसके परिणामस्वरूप यह आंदोलन स्थगित होने के बजाए और ज्यादा भड़क उठा। सम्पूर्ण भारतवर्ष में फैल कर इसने एक विराट जनआंदोलन का रूप धारण कर लिया। इसी तरह आरंभ हुआ इतिहास प्रसिद्ध 'भारत छोड़ो आंदोलन'।

सन् 1942 ई. में हुए इसी जनांदोलन के आधार पर बंगला में समरेश बसु कृत 'जुग जुग जियो', सतीनाथ भादुड़ी कृत 'जागरी', असमिया में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य कृत 'मृत्युंजय', हिन्दी में यशपाल कृत 'मेरी तेरी उसकी बात', अमरकांत कृत 'इन्हीं हथियारों से' आदि महत्वपूर्ण उपन्यासों के अलावा कई भारतीय एवं अंग्रेजी भाषा के उपन्यास लिखे गये। इन उपन्यासों में भारत छोड़ो आंदोलन की गतिविधियों और भारतीय जनता पर पड़े प्रभाव एवं विस्तार को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत उप-अध्याय में उत्तर भारत और असम में भारत छोड़ो आंदोलन के प्रभाव एवं विस्तार की औपन्यासिक अभिव्यक्ति के स्वरूप को हिन्दी के 'मेरी तेरी उसकी बात' एवं असमिया के 'मृत्युंजय' उपन्यास के माध्यम से तुलनात्मक रूप से समझने और विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

'मेरी तेरी उसकी बात' यशपाल द्वारा रचित 568 पृष्ठों का एक वृहद् उपन्यास है, जिसका प्रकाशन 1974 में हुआ। इस उपन्यास में प्रथम विश्वयुद्ध से लेकर 1945 ई. में पृथक पाकिस्तान के लिये लगाये गये नारे तक की घटनाओं का सूक्ष्म ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य द्वारा रचित 'मृत्युंजय' उपन्यास मूल असमिया में 1970 में प्रकाशित हुई, इसके हिन्दी अनुवाद का प्रकाशन 1980 में हुआ। इस उपन्यास में 'भारत छोड़ो आंदोलन' में असमिया जनता की भूमिका एवं उनके अविस्मरणीय योगदान को दर्शाया गया है। 'मेरी तेरी उसकी बात' में उत्तर भारत के शहरों, मुख्य रूप से इलाहाबाद, लखनऊ, बनारस, बलिया आदि में आंदोलन के प्रभाव को दर्शाने का प्रयास किया गया है। 'मृत्युंजय' उपन्यास में तत्कालीन असम, खासकर नगाँव के पश्चिमी ग्रामीण अंचलों-दैपारा, मायाङ, बारपुजिया, रोहा आदि में आंदोलन के विराट रूप को उजागर करने का प्रयास किया गया है।

भारत के इतिहास में भारत की स्वतंत्रता के लिए किये गये आंदोलनों में 'भारत छोड़ो आंदोलन', जिसे अगस्त क्रांति के नाम से भी जानते हैं, अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस आंदोलन की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें गाँधी के अहिंसात्मक आंदोलन और समाजवादियों के भूमिगत क्रांतिकारी आंदोलन का संगम दिखाई देता है। भारत छोड़ो का प्रस्ताव पारित होने के तुरंत बाद ही एक ओर जहाँ गाँधी जी सहित देश के बड़े-बड़े नेताओं को हिरासत में ले लिया गया, वहीं दूसरी ओर सामाजवादी पार्टी के युवा नेता जयप्रकाश नारायण, आसफ अली, अच्युत पटवर्धन आदि आंदोलन को गुप्त रूप से सक्रिय बनाने में लगे थे। इनका उद्देश्य था हिंसात्मक रुख अपनाकर अंग्रेजों को भारत छोड़ने पर मजबूर करना।'मेरी तेरी उसकी बात' और 'मृत्युंजय'- इन दोनों ही उपन्यासों में समाजवादियों द्वारा गुप्त रूप से अंजाम दी गयी क्रांतिकारी गतिविधियों को दर्शाया गया है। 'मेरी तेरी उसकी बात' में उषा, रूद्रदत्त पाठक, बिरजू तथा उनके अन्य साथी सोशलिस्ट पार्टी के प्रभाव में हैं। यशपाल ने इस उपन्यास में उत्तर भारत के इलाकों- इलाहबाद, बनारस, बिहार, यू.पी, लखनऊ आदि में जनता द्वारा, खासकर छात्रों द्वारा भूमिगत रहकर की गई क्रांतिकारी गतिविधियों जैसे- रेल दुर्घटना, बम विस्फोट, पुलिस थाने पर हमला कर कब्जा करना, सरकारी कर्मचारियों के बंगले को ध्वस्त करना आदि का वर्णन किया है। सोशलिस्ट उषा आंदोलन के दौरान भूमिगत रहकर भी अपने भाषणों के जरिए देश की जनता में ब्रिटिश विरोधी भावना पैदा करने की कोशिश करती है। उपन्यास में आंदोलन के दौरान बलिया जिले में बिरजू और अन्य गुप्त आंदोलनकारियों द्वारा समानंतर सरकार गठित किये जाने का भी विस्तृत वर्णन किया गया है।

'मृत्युंजय' उपन्यास में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य गोसाईं, अहिना कोंवर, सेवक मधु केवट, जयराम, भिभिराम आदि पात्रों के जरिए आंदोलन में हिंसा-अहिंसा को लेकर

तत्कालीन असम की जनता के अंतर्द्वंद्व को अभिव्यक्त करने का प्रयास करते हैं। नगाँव के पश्चिमी अंचलों- मायाङ, बारपुजिया, बढ़मपुर, कामपुर आदि में एक ओर जनता गाँधी के अहिंसात्मक आंदोलन से प्रभावित थी तो दूसरी ओर अत्याचार से पीड़ित जनता सुभाष चंद्र बोस की हिंसात्मक नीति को अपनाते हुए मृत्युवाहिनी सेना गठित कर रेल दुर्घटना आदि को अंजाम दे रही थी। 'मृत्युंजय' उपन्यास में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के दौरान अंग्रेजों के विरुद्ध असमिया जनता की ऐसी ही हिंसात्मक-अहिंसात्मक प्रतिक्रिया और आंदोलन को सफल बनाने में उनके महत्वपूर्ण योगदान को रेखांकित करने की कोशिश की गई है।

'मृत्युंजय' और 'मेरी तेरी उसकी बात' इन दोनों उपन्यासों में 'भारत छोड़ो आंदोलन' में जनता की भागीदारी का विस्तृत चित्रण किया गया है। 'मृत्युंजय' उपन्यास में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने आंदोलन में भाग लेने वाली असम की भोली-भाली ग्रामीण जनता का चित्रण किया है। उपन्यास की बिल्कुल पहली पंक्ति में ही उपन्यास के एक पात्र भिभिराम का कथन द्रष्टव्य है-"बर्रों के छत्ते को छेड़ दें तो उनसे अपने को बचा पाना कठिन हो जाता है।"[48] इस कथन के जरिए उपन्यासकार ने तत्कालीन असम की पराधीन जनता के मन में अंतर्निहित स्वाधीनता प्राप्ति की लालसा एवं उनकी विद्रोही मानसिकता को दर्शाया है। उपन्यास में चित्रित आंदोलन में भाग लेने वाले पात्रों में रूप नारायण और धनपुर को छोड़कर गोसाईं, सेवक मधु केवट, शिष्य जयराम, अहिना कोंवर, भिभिराम, मणिक बरॉ आदि अधेड़ उम्र के सहज, सरल और गृहस्थ जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्ति हैं। रूपनारायण को छोड़ उपन्यास में चित्रित सभी पात्र राजनीति के दाव-पेंच से अपरिचित थे। वे अहिंसा में विश्वास रखते थे, परन्तु अंग्रेज सरकार के अत्याचार और शोषण से ऊब कर उन्हें अपने देश से खदेड़ने के लिए उन्होंने हिंसात्मक रुख अपनाकर इस आंदोलन में भाग लिया। उपन्यास का पात्र धनपुर कहता है-"हम अंग्रेजों को यहाँ से

खदेड़ना चाहते हैं। अभी तक अहिंसा के मार्ग पर चलते रहे, किंतु वहाँ हमें सफलता नहीं मिली। अब हिंसा का मार्ग स्वीकार कर कोशिश कर रहे हैं। अभी तो हमने चरखे में पौनी ही लगायी है।"[49]

यशपाल ने'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में उषा, बिरजू, माया आदि पात्रों के जरिए उत्तर भारत के इलाकों में वामपंथ और समाजवाद से प्रभावित युवा छात्रों द्वारा विश्वविद्यालय, कॉलेज-स्कूल आदि त्यागने और आंदोलन में उनकी सक्रीय भागीदारी को दर्शाया है। उपन्यास में स्वतंत्रता सेनानी उषा विश्वविद्यालय में दिये गये अपने भाषण में कहती है-"साथियो, यह संग्राम है, आंदोलन नहीं। हमें अपनी गुलामी की पूरी मशीन, अपने दमन की व्यवस्था कचहरियों, तहसीलों, थानों, यातायत और संपर्क के सभी साधनों को समाप्त कर देना है। फासिज्म से लड़ने के लिए ब्रिटेन जो कुछ कर रहा है, ब्रिटिश फासिज्म से लड़ने के लिए हमें उससे अधिक करना होगा। हमारा लक्ष्य और नारा है, अंग्रेजों को भारत से निकालो! करो या मरो!"[50] इस वक्तव्य के जरिए उपन्यासकार ने समाजवादियों से प्रभावित छात्रों की विद्रोही मानसिकता को चित्रित किया है।

'मृत्युंजय' उपन्यास में दिखाई पड़ने वाले ग्रामीण अधेड़ आंदोलनकारियों की तुलना में 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास के ज्यादातर आंदोलनकारी शहरी युवा हैं। मतलब इन दोनों उपन्यासों में आंदोलन में भाग लेने वाली दो अलग-अलग पीढ़ियों का चित्रिण किया गया है, परंतु उनका उद्देश्य एक ही है- अंग्रेजों को अपने देश से खदेड़ना। साथ ही इन दोनों उपन्यासों में तत्कालीन समाज में घर के सारे बंधनों को तोड़कर आंदोलन में भाग लेने वाली स्त्रियों के क्रांतिकारी रूप को भी दर्शाया गया है। 'मेरी तेरी उसकी बात' की उषा और 'मृत्युंजय' की कली दीदी तथा डिमि ऐसी ही स्त्री पात्र हैं।

'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में उपन्यासकार ने 'भारत छोड़ो आंदोलन' के दौरान सोशलिस्टों एवं कम्युनिस्टों के बीच की बहस एवं टकराव का भी चित्रण किया है। उपन्यास में दोनों पक्षों के बीच आजादी, क्रांति और राष्ट्रवाद के मुद्दे पर हुई बहस एवं टकराव को बहुत ही बारीकी से दिखाया गया है। ऊपर उल्लेख किया गया है कि भारत की आजादी में 'भारत छोड़ो आंदोलन' की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। लेकिन 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में यशपाल द्वारा प्रतिपादित दृष्टिकोण अलग है। वामपंथी विचारधारा से प्रभावित होने के कारण उन्होंने उपन्यास में कम्युनिस्ट मान्यता को प्रतिपादित किया है। वे देश की आज़ादी को अंतराष्ट्रीय घटनाओं और परिस्थितियों की देन मानते हैं। उपन्यास में सोशलिस्टों एवं कम्युनिस्टों के बीच की बहस एवं टकराव को सोशलिस्ट उषा सेठ और कम्युनिस्ट नरेंद्र कोहली की आपसी बहस से समझा जा सकता है। सोशलिस्ट उषा सेठ कहती है- "...हम लोगों का छोटा-मोटा प्रयत्न भी सर्वथा बेकार नहीं गया।ब्रिटेन भारत को स्वशासन दे रहा है।"[51] इसकी प्रतिक्रिया में कम्युनिस्ट नरेंद्र कोहली व्यंग्य करता है- "आप लोगों का प्रयत्न! गाँधी और काँग्रेस ने तो उस प्रयत्न के उत्तरदायित्व से पूर्णत: इंकार कर दिया था। देख लीजिए, उस आंदोलन में जेल जाने वाले लौट कर सौ में से साठ कम्युनिस्ट बन गए।"[52]

यशपाल भारत की आजादी में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के महत्व को स्वीकार नहीं करते। अपने वामपंथी विचारधारात्मक रुझान के कारण यशपाल 'भारत छोड़ो आंदोलन' और उसमें गाँधी की भूमिका के प्रति नकारात्मक रूप से काफी 'क्रिटिकल' हैं। 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में एक जगह वे कहते हैं कि "क्विट इंडिया की हुंकार गाँधी और काँग्रेस जाने किस नशे में दे बैठे, फिर उससे मुकर भी गये।"[53] यशपाल यह स्पष्ट रूप से

दिखाने का प्रयास करते हैं कि गाँधी जी के नेतृत्व में चलाया गया भारत छोड़ो आंदोलन विफल रहा। यशपाल का मानना है कि गाँधी जी का इस आंदोलन के दायित्व से मुकरना इसका प्रमाण है। अगर मुकरना ही था तो इस आंदोलन का ऐलान गाँधी जी एवं काँग्रेस ने क्या सोच कर किया था? यशपाल उपन्यास में दिखाते हैं कि बलिया में आंदोलनकारियों द्वारा सामांतर सरकार गठित होने के बाद लोग भांग और जलेबियों के नशे में डुब जाते हैं और तब आरंभ होता है सरकार का दमन चक्र। इस घटना का उल्लेख उन्होंने यह दर्शाने के लिए किया है कि भारत की स्वतंत्रता का यह आंदोलन नशे से आरंभ होकर नशे में ही विलीन हो जाता है। अतः यशपाल के अनुसार 'भारत छोड़ो आंदोलन' भारत की आजादी में कोई महत्व नहीं रखता। यशपाल की इस मान्यता से निश्चय ही पूरी तरह सहमत नहीं हुआ जा सकता। देश की जनता द्वारा प्राणों की आहुति देकर चलाया गया यह आंदोलन भले ही विफल रहा, परंतु इस विफलता का भी भारत की आजादी की प्रक्रिया में अपना महत्व तो है ही। साथ ही इस सत्य को भी नजरअंदाज़ नहीं किया जाना चाहिए कि भारत की आजादी में गाँधी के अलावा चंद्रशेखर, भगत सिंह, सुखदेव सरीखे तमाम क्रांतिकारियों का भी योगदान रहा है। आजादी की लड़ाई में किसी भी एक पक्ष की भूमिका को आत्यंतिक रूप से महत्वपूर्ण बनाकर दूसरे पक्ष की भूमिका को पूरी तरह नजरअंदाज़ कर देना एक पक्षपातपूर्ण 'अप्रोच' होगा। कहना पड़ेगा कि गाँधी और उनके आंदोलनों के प्रति यशपाल इसी पक्षपातपूर्ण 'अप्रोच' के शिकार दिखाई पड़ते हैं।

यशपाल के विपरीत बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने 'मृत्युंजय' उपन्यास में असम की जनता पर गाँधी और उनके आंदोलनों के प्रभाव को बहुत ही स्पष्ट रूप से दर्शाया है। 'मृत्युंजय' उपन्यास में उपन्यासकार ने 'भारत छोड़ो आंदोलन' में भाग लेने वालों के मन

में हिंसा-अहिंसा को लेकर चल रहे अंतर्द्वंद्व का चित्रण बहुत बारीकी से किया है। 'भारत छोड़ो आंदोलन' के दौरान एक ओर असम की पराधीन जनता जहाँ गाँधी की अहिंसात्मक नीतियों से प्रभावित थी, वहीं दूसरी ओर अंग्रेजों के अत्याचार से पीड़ित जनता सुभाष चंद्र बोस की हिंसात्मक नीति को भी अपना रही थी। परिस्थियाँ कुछ ऐसी बन गईं कि गाँधी की अहिंसा नीति से प्रभावित जनता भी हिंसात्मक रुख अपनाने को मजबूर हो गई। उपन्यास में चित्रित पात्र धनपुर लस्कर और रूपनारायण को छोड़कर अन्य ज्यादातर पात्र, जैसे दैपारा सत्र के गोसाईं जी, सेवक मधु केवट, शिष्य जयराम, मणिक बरॉ, भिभिराम आदि सहज-सरल गृहस्थ जीवन व्यतीत करने वाले लोग हैं, जिनके मन में हिंसा-अहिंसा, धर्म-अधर्म आदि को लेकर अदम्य अंतर्द्वंद्व निहित है। जीव हत्या को महापाप समझने वाले ये लोग अंग्रेज पुलिस अधिकारियों द्वारा असमिया जनता पर हो रहे अत्याचार को देख और स्वतंत्र राष्ट्र में सुखमय जीवन की कल्पना कर अहिंसा की नीति में विश्वास रखने के वावजूद भी हिंसा एवं रक्तपात की नीति को अपनाते हैं। उन्हें यह बात समझ में आने लगी थी कि जानवर को मारने के लिए जानवर बनना आवश्यक है। फलस्वरूप सेनापति गोसाईं जी अपने साथियों के साथ मिलकर बर्मा की सीमा की ओर रसद-पानी ले जा रही एवं गोरे फौजियों से भरी रेलगाड़ी को पलटने की योजना बनाते हैं। जैसे-जैसे वे लोग अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते गये, वैसे-वैसे ही उनके मन में हिंसा-अहिंसा का वह द्वंद्व और भी बढ़ता गया। यह द्वंद्व गोसाईं जी के इस कथन में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है-"मैं ऐसा स्वीकार नहीं करता कि अहिंसापूर्वक युद्ध नहीं किया जा सकता। किया तो जा ही सकता है, पर हम नहीं कर पा रहे हैं। हाथ में खून सानकर हमने अपने को कुलषित कर लिया है। इस विषय में अब चुप रहना ही बेहतर है।"[54] समय की माँग को देखते हुए अपने मन में चल रहे अंतर्द्वंद्व को दरकिनार कर उन्होंने रेलगाड़ी पलटने के कार्य को सफलतापूर्वक पूरा किया। गोसाईं जी गाँधीवादी होने के बावजूद

परिस्थिति के दबाव में हिंसात्मक नीति को जरूरी मानकर अपनाते हैं, परंतु कहीं-न-कहीं उनके मन में हिंसा-अहिंसा का अंतर्द्वंद्व अंत तक चलता रहता है। संभवतः इसी अंतर्द्वंद्व से मुक्ति पाने हेतु वे रेलगाड़ी पलटने के कार्य में सफल होने के बाद भी अपने साथियों को तो भागने को कहते हैं, पर खुद नहीं भागते। वे अपने मन में चल रहे अंतर्द्वंद्व से विकल होकर अपने मनोभावों को साथियों से साझा करते हुए कहते हैं- "एक बात और कहूँ, मेरे प्राण बुझ-से गये हैं। मेरा यह हाथ आदमी के खून से सना है।कितना असहनीय हो गया है यह मेरे लिए, कह नहीं सकता हूँ। मेरा विवेक साथ नहीं दे रहा है। दरअसल, मैं नैतिक द्वंद्व से ग्रस्त हो गया हूँ। झूठ बोलने से कोई लाभ तो है नहीं। मैं अहिंसा की लड़ाई को ही उत्तम मानता हूँ। सच्ची लड़ाई तो बस वही है।"[55] उपन्यास के पात्रों के मन में चल रहा यह अंतर्द्वंद्व असल में स्वयं उपन्यासकार के मन में चल रहा अंतर्द्वंद्व भी है। 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में हिंसा-अहिंसा को लेकर कोई अंतर्द्वंद्व दिखाई नहीं देता, क्योंकि स्वयं यशपाल के मन में ऐसा कोई अंतर्द्वंद्व नहीं है।

जैसा कि इस लेख में पहले भी जिक्र किया गया है कि यशपाल की धारणा गाँधी के प्रति अत्यंत नकारात्मक है। 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में भी यशपाल ने गाँधी के बारे में अपनी मान्यता को स्पष्ट किया है। उपन्यास में उन्होंने गाँधी को राजनीतिज्ञ के रूप में नहीं, बल्कि जनता से दूर आत्मशुद्धि के लिए बार-बार अनशन करते दिखाया है। आंदोलन के दौरान गाँधी जिस आध्यात्मिकता और अहिंसा की बात करते हैं, उसकी कटु आलोचना करते हुए यशपाल अपने निबंध 'गाँधीवाद की शव परीक्षा' में लिखते हैं- "गाँधीवाद ने आध्यात्मिकता और अहिंसा का नाम देकर जिन घरेलू धंधों को पुन: चालू करने का प्रयत्न किया है उनकी विफलता इस कार्यक्रम की निस्सारता का अच्छा खासा प्रमाण है। गाँधी जी ने खद्दर को स्वराज्य मिलने की शर्त, और दरिद्र नारायण का उपकार

करने वाला कार्यक्रम बताकर, जनता से करोड़ों रुपये लेकर इस काम में लगा दिये। तीस-चालीस वर्ष के प्रयत्न के बाद भी 'खद्दर' को आज भी जनहित का सफल कार्यक्रम नहीं कहा जा सकता। वह अमीरों के लिए देशभक्ति का जुर्माना बनकर ही रह गया है।"[56]

'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में आंदोलन में भाग लेने वाले कई वामपंथी और समाजवादी युवक-युवतियाँ दिखाई देते हैं,परन्तु एक भी गाँधीवादी युवक या युवती उपन्यास में मौजूद नहीं है। यशपाल ने संभवतः यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि देश के युवावर्ग की गाँधी की अहिंसात्मक नीति में कोई आस्था नहीं है। उपन्यास में कम्युनिस्ट पात्रों ने गाँधी को 'साबरमती का कन्हैया'[57], 'अहिंसक मेमने की खाल में एक फासिस्ट बाघ'[58], 'हिन्दुओं का पोप'[59] आदि नामों से संबोधित किया है। गाँधी के प्रति यशपाल की इस दृष्टि की आलोचना करते हुए प्रेम सिंह ने अपने एक लेख में लिखा है- "यशपाल ने गाँधी को गाँधी युग का सबसे बड़ा खलनायक सिद्ध करके 'इतिहास के पुनर्निर्माण' का अपना उद्यम पूरा किया है।"[60]

उपर्युक्त दोनों उपन्यासों के अध्ययन-विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कियशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने क्रमशः उत्तर भारत और असम के कुछ खास हिस्सों में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के प्रभाव और प्रसार का चित्रण बहुत ही बारीकी से किया है। निश्चय ही चित्रण की इस प्रक्रिया में दोनों रचनाकारों की अपनी-अपनी विचारधाराओं ने भी अपना काम किया है। विचारधारा की भिन्नता के कारण 'भारत छोड़ो आंदोलन' के प्रति और उसके प्रभाव के प्रति दोनों उपन्यासकारों के नजरिए में पर्याप्त अंतर दिखाई पड़ता है। निश्चित तौर पर इन दोनों उपन्यासों को एक साथ पढ़ने से 'भारत छोड़ो आंदोलन' के महत्व, उसमें गाँधी की भूमिका, अलग-अलग प्रान्तों में भारतीय जनता का उस आंदोलन से जुड़ाव आदि सवालों को और बेहतर ढंग से समझने में मदद मिलती है।

4.4 भारत की आजादी और विभाजन

आज हमारे देश को आज़ाद हुए पचहत्तर वर्ष हो चुके हैं। इस देश की आज़ादी के लिए देश की लाखों जनता और क्रांतिकारी वीरों ने अपने प्राणों की आहुति दी हैं। अंग्रेजों के खिलाफ देश के नेताओं के नेतृत्व में जनता द्वारा एक लम्बे अरसे तक चलाए गये संघर्ष के पश्चात् यह देश आज़ाद हुआ।हालाँकि इस देश की स्वतंत्रता एक ओर जहाँ बहुप्रतीक्षित थी; वहीं दूसरी ओर देश के विभाजन ने इस उल्लास को उदासी में परिवर्तित कर दिया। विभाजन के दौरान लाखों लोग बेघर हुए, धर्म के नाम पर कत्लेआम हुआ, स्त्रियाँ शोषण की शिकार हुई। विभाजन की इस त्रासदी ने समाज में जनता के मन में आज़ादी के प्रति मोहभंग की स्थिति पैदा कर दी। देश की इतनी बड़ी त्रासदी से भारतीय साहित्यकार भला कैसे अप्रभावित रह सकते थे। साहित्यकारों ने भारत की आज़ादी और विभाजन की त्रासदी को लेकर तमाम साहित्य की रचना की। भारत की आजादी और विभाजन के पूर्व, दौरान एवं पश्चात् की घटनाओं के आधार पर बंगला में प्रबोध कुमार सान्याल कृत 'हुस्नबानू', अंग्रेजी में खुशवंत सिंह कृत 'ट्रेन टू पाकिस्तान', असमिया में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य कृत 'पाखी घोड़ा', हिन्दी में यशपाल कृत 'पार्टी कामरेड' और 'झूठा सच'(दो भागों में), भीष्म सहानी कृत 'तमस', कमलेश्वर कृत 'कितने पाकिस्तान' आदि के अलावा भी अंग्रेजी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में कई उपन्यास लिखे गये। इस उप-अध्याय में हिन्दी उपन्यासकार यशपाल और असमिया उपन्यासकार बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों के माध्यम से उत्तर भारत और असम में भारत की आजादी और विभाजन के पूर्व, दौरान एवं पश्चात् की घटनाओं के प्रभाव एवं विस्तार को समझने और विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

जैसा कि हम जानते हैं कि 1939 ई. में आरंभ हुआ द्वितीय विश्वयुद्ध 14 अगस्त, 1945 को जापान के आत्मसमर्पण के साथ समाप्त होता है। द्वितीय विश्वयुद्ध के समाप्त

होने से ठीक पहले 26 जुलाई, 1945 को ब्रिटेन में लेबर पार्टी की जीत हुई और क्लीमेंट एटली के नेतृत्व में एक नयी सरकार का गठन किया गया।[61] ब्रिटेन में लेबर पार्टी की जीत की खबर सुनकर भारतवासियों के मन में भी ब्रिटिश साम्राज्यवाद से मुक्ति की नयी आशा का संचार हुआ। 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में उपन्यासकार बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने असमवासियों के मन में व्याप्त नई आशा को अभिव्यक्त करते हुए लिखा है- "बदलाव आएगा। परिवर्तन अवश्य होगा। काँग्रेस पार्टी के नेता बरदलै ने खुद ही कहा है-अंग्रेजों के दिन पूरे हो गए। आगामी डेढ़ वर्ष के अंदर-अंदर ही चुनाव होगाऔर इस चुनाव में उनके दल की जीत पूरी तरह निश्चित है। सात समुद्र, तेरह नदी के उस पार है विलायत (ब्रिटेन) देश। वहाँ की लेबर पार्टी इस द्वितीय महायुद्ध के समाप्त होते ही हमारे देश का शासन भारतीय नागरिकों के हाथ में ही सौंप देने का विचार कर रही है।"[62]

द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के पश्चात् अंग्रेज सरकार द्वारा 1942 के जन-अंदोलन में भाग लेने वाले आजाद हिन्द फौज के खिलाफ मुकदमा चलाया गया। इसके परिणामस्वरूप भारत के सभी वर्गों के लोगों के मन में अंग्रेज सरकार के विरुद्ध विद्रोहाग्नि धधकने लगी। 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने इस परिस्थिति के संदर्भ में लिखा है- "(दिल्ली के) लाल किले में (अंग्रेज शासक) आजाद हिन्द फौज के बंदी बनाए गये सैनिक जवानों पर (देशद्रोह का अपराध लगाकर) मुकदमा चलाकर दण्ड-विधान करने का अपराधी सिद्ध करते हैं। परंतु अपने देश की जनता इसे उनका अपराध मानती ही नहीं है।"[63]

भारतीय जनता द्वारा देश के अलग-अलग हिस्सों में अंग्रेज सरकार के खिलाफ आंदोलन शुरू हुए, जिसमें विद्यार्थियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही। कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली, पंजाब, असम आदि जगहों पर छात्रों द्वारा सभा-समितियों का आयोजन किया गया, जुलूस आदि भी निकाले गये।[64] कलकत्ता में फॉरवर्ड ब्लॉक के छात्र संगठन द्वारा

निकाले गये जुलूस (जिसमें स्टुडेंट फेडरेशन के छात्र एवं इस्लामिया कॉलेज के छात्र भी सम्मिलित थे) के डलहौजी स्क्वायर की तरफ बढ़ते ही पुलिस द्वारा उन पर लाठीचार्ज की गई, लेकिन छात्रों की भीड़ हटी नहीं। उन्होंने पुलिस पर ईंट-पत्थर से प्रहार किया। जवाबी कार्रवाई में पुलिस ने छात्रों पर गोली चलाई, जिससे दो छात्रों की मौत हो गई और बावन छात्र घायल हुए।[65] इसके बाद पूरे कलकत्ता शहर में विद्रोहाग्नि फूट पड़ी। कम्युनिस्टों के नेतृत्व में अनेक कारखानों में हड़तालें हुईं, ट्राम चालकों ने भी हड़ताल कर दिया था।[66] कलकत्ता में छात्रों और पुलिस के बीच हुई हिंसक झड़प के संदर्भ में सुमित सरकार लिखते हैं- "भीड़ डटी रहती थी या अधिक से अधिक थोड़ा पीछे हट जाती थी और फिर से हमला करती थी।"[67] असम में भी छात्रों की 'सदौ असम छात्र संस्था' द्वारा असम के कुछ स्थानों पर सभाओं का आयोजन किया गया और जुलूस निकाले गये। 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इस आंदोलन के दौरान असम की परिस्थिति का वर्णन करते हुए लिखते हैं- "संघ के नौजवान लड़कों को ऐसा आभास हो रहा है कि देश में एक और विशाल आंदोलन होगा। परंतु देश के जितने भी बड़े-बूढ़े नेता हैं वे आंदोलन करने की बात नहीं सोचते। देश में सांप्रदायिक ताकतों का मंसूबा बढ़ता जा रहा, देखकर सभी राष्ट्रीयवादी नेता बहुत क्षुब्ध और दु:खी हो, इस सबसे अलग हो गए हैं। ब्रिटेन की लेबर पार्टी की सरकार समझौते और बातचीत का दौर चलाकर भारतवर्ष को स्वतंत्रता दे देना चाहती है, ऐसा विचार उसने अभिव्यक्त किया है। इसीलिए राष्ट्रीयवादी नेताओं का मन उसी ओर दौड़ने लगा है। परंतु नौजवान लड़को के मुँह में तो इस समय वर्ग-संघर्ष चलाने की ही बात गुलजार है। बेलतला में वे (इसीलिए) किसानों को संगठित कर रहे हैं। उनके मन में आश्रम के प्रति कोई श्रद्धा-विश्वास नहीं है। एक और बात ने उन्हें चिंतित बना दिया है। मुस्लिम लीग ने मुस्लिम जनता के मन में पाकिस्तान बनाने का सपना भर दिया है। वे लोग दिग्भ्रमित हैं। (किंकर्त्तव्यविमूढ हो गए हैं) यह भटकाव आया है धर्म के साथ राजनीति को मिला देने से, दोनों को एक में मिला देने से,

इस भटकाव को हटाने का एकमात्र रास्ता है, वर्ग-संघर्ष के माध्यम से हिन्दू-मुसलमान को एक करना, दोनों को परस्पर एक दूसरे में ला मिलाना।"[68]

स्पष्ट है कि असम में अंग्रेजों के खिलाफ चलाये गये इस आंदोलन का प्रभाव बहुत ही कम था। इस आंदोलन की उग्रता की चर्चा करते हुए बिपिन चंद्र भी अपनी पुस्तक में असम में इसके अल्प प्रभाव व महज समर्थन का ज़िक्र करते हैं- "दिल्ली, पंजाब, बंगाल, संयुक्त प्रांत, बंबई और मद्रास में तो आंदोलन उग्र था ही, कुर्ग, बलूचिस्तान, अजमेर, असम, ग्वालियर और दूर-दूर के गाँवों में भी संवेदना और समर्थन का वातावरण था।"[69]

यह आन्दोलन अभी ठीक से समाप्त भी नहीं हुआ था कि इससे पहले ही नौसेना में विद्रोह की ज्वाला धधक उठी। 18 फरवरी, 1946 को बम्बई के एच. एम. आई. एस. तलवार के नाविकों ने अंग्रेजों द्वारा उनके साथ किये गये वर्ण-वैषम्य एवं उनको दिये गये अखाद्य भोजन के प्रतिवाद में भूख हड़ताल कर दी। साथ ही उन्होंने जहाज की दीवार पर 'भारत छोड़ो' लिखकर अंग्रेजों द्वारा गिरफ्तार किए गए बी.सी. दत्त को रिहा करने की माँग की।[70] अगले दिन हड़ताल कैसल, फोर्ट, बैरकों और बंबई बंदरगाह के 22 जहाजों में फैल गयी।[71] देखते-ही-देखते यह विद्रोह मद्रास, कलकत्ता, कराची तक फैल गया। विद्रोहियों ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद के प्रतीक यूनियन जैक को उतारकर काँग्रेस, मुस्लिम लीग और कम्युनिस्टों के झण्डे लहराए ।[72]

नौ-सेना द्वारा अंग्रेजों के खिलाफ किये गये इस विद्रोह का चित्रण यशपाल के 'गीता' और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास 'पाखी घोड़ा' में मिलता है। यशपाल ने 'गीता' उपन्यास में नौ-सेना द्वारा बंबई के परेल तथा उसके आस-पास की जगहों में किये गये विद्रोह का वर्णन किया है। वहीं दूसरी ओर बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने 'पाखी घोड़ा'

उपन्यास में नौ-सेना द्वारा किये गये आंदोलन के असम की जनता पर पड़ने वाले प्रभावों का वर्णन किया है।

नौ-सेना विद्रोह भारत की आजादी के ठीक पहले घटित एक महत्वपूर्ण घटना थी। भारत की आजादी के लिये किये गये आंदोलनों में से यह एक महत्वपूर्ण आन्दोलन था, जिसने ब्रिटिश साम्राज्यावाद की नींव को हिला दिया। यशपाल अपने उपन्यास 'गीता' में तत्कालीन बम्बई शहर के परेल इलाके में नौ-सैनिकों के विद्रोह का चित्रण इन शब्दों में करते हैं- "जहाजी सिपाही नीले कालर की सफेद वर्दियाँ पहने फौजी ढंग से मार्च करते हुए चल रहे थे। उनके साथ फौजी लारियों पर काँग्रेस के तिरंगे, मुस्लिम लीग के हरे और कम्युनिस्ट पार्टी के लाल झण्डे फहरा रहे थे: इंकलाब जिंदाबाद! जयहिन्द! हिंदुस्तान को आजाद करो! हिन्द फौज को रिहा करो! हिन्दू-मुस्लिम एक हों, ब्रिटिश साम्राज्य का नाश हो! अल्ला हो अकबर! महाबीरजी की जय! की गूँज। उनके संगठन में, व्यवहार में नियंत्रण और शक्ति का आभास था।"[73]

साथ ही इस उपन्यास में कम्युनिस्ट पात्र गीता के वक्तव्य के जरिए उपन्यासकार यशपाल ने आंदोलन के दौरान कम्युनिस्टों द्वारा जनता को आंदोलन में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किये जाने का भी चित्रण किया है-"....ये हिन्दुस्तानी जहाजी सिपाही आपके ही भाई और बेटे हैं। उन्हें आपकी ही सहायता का भरोसा है। भूख और अपमान से ऊबकर उन्होंने न्याय की माँग की है। उनका अपमान देश का अपमान है। उनकी भूख देश की भूख है। आज वे गुलामी की जंजीरें तोड़कर आजादी की लड़ाई लड़ने के लिये आपकी ओर विश्वास और सहायता का हाथ बढ़ा रहे हैं। इन सिपाहियों की न्यायपूर्ण माँग को दबा देने के लिए निर्दय विदेशी सरकार पूरी शक्ति से बन्दूकों की गोलियाँ और तोपों के गोले बरसा रही है। आपके भाई और बेटे उसका जवाब बहादुरी से दे रहे हैं। सरकार के जुल्म से भूखे मरते अपने बेटों और भाइयों को खाना देने के अपराध में हमारी जनता पर आज तीसरे पहर कालबादेवी रोड पर गोली चलाई गई। अपने भूखे भाई-बेटों को भोजन

देने के कारण हम पर गोली चलाई जाती है, इससे बड़ा अत्याचार संसार में और क्या होगा? बंबई का बच्चा-बच्चा, हर एक मर्द और औरत, हिन्दू और मुसलमान, ईसाई और पारसी जान देकर भी सरकार के इस जुल्म का मुकाबला करेगा। हमारी पार्टी आपसे अपील करती है कि इस अत्याचार और दमन का विरोध करने के लिए आप कल बम्बई में पूरी हड़ताल करें। हर एक दुकान, मिल, दफ्तर, ट्राम, मोटर, बस-सब कुछ बंद रहेगा। हम किसी किस्म का दंगा और लूट-मार नहीं होने देंगे। हमारी नाराजगी और विरोध अंग्रेज सरकार के जुल्म के खिलाफ है और हम विदेशी सरकार को चेतावनी देते हैं कि अपने शहीद होने वाले प्रत्येक नौजवान के खून का बदला हम खून से लेंगे!"[74]

स्पष्ट है कि नौ-सैनिक विद्रोह में कम्युनिस्टों ने अहम भूमिका निभायी। उपन्यास में यशपाल नौ-सेना विद्रोह के दौरान बम्बई के परेल शहर में आम जनता एवं दुकानदारों द्वारा किये गये विद्रोह का वर्णन इस प्रकार करते हैं-"दुकान पर लगे तिरंगे झण्डे को लोगों ने हाथों में ले लिया। तनवरिया के यहाँ से एक बड़ा तिरंगा झण्डा ऊँचे बाँस पर आ गया। भावरिया ने कहा, "सब झण्डे रहेंगे!....सब झण्डे लाओ!" समीप ही चमड़े वाले सैयद की दुकान से हरा झण्डा आ गया। लाल झण्डा नहीं मिला। हरे और तिरंगे झण्डे लेकर भीड़ चल दी। सब तरफ से लोग ऐसे आ-आकर जमा होने लगे जैसे बरसात में संध्या समय चिराग पर पतंगे आ जुटते हैं। नारे लगने लगे: जयहिन्द! इंकलाब जिंदाबाद! अंग्रेजी राज का नाश हो! सिपाहियों के साथ न्याय हो! अपने भाइयों को भूखा मरने नहीं देंगे! हिन्दू-मुस्लिम भाई-भाई! जुलूस के आगे-आगे बच्चों की भीड़ नारे लगाती चलने लगी।"[75]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में नौ-सैनिकों के आंदोलन के दौरान असम के नवयुवकों द्वारा आंदोलनकारियों के समर्थन की योजना को स्पष्ट रूप से चित्रित किया है। वे लिखते हैं कि नवीन और दूसरे आंदोलनकर्ताओं ने "आंदोलनकर्ताओं की एक सभा बुलाने,...उसी में नौ सेना के विद्रोह के उद्देश्यों को ठीक ढंग से समझने और

आज की रात के अंदर-अंदर ही एक प्रचार-पत्र प्रकाशित करके (गुवाहाटी) के निकट जालुकबारी में जो सैनिक छावनी है उसमें उस प्रचार-पत्र को वितरित कर देने का कार्यक्रम निर्धारित किया।"[76] परंतु इन लोगों के कुछ करने से पहले ही "नौ सेना वाहिनी ने वल्लभ भाई पटेल के समक्ष समर्पण कर दिया है।"[77]

स्पष्ट है कि इस विद्रोह का प्रभाव असम में न के बराबर ही था। असमवासी इस आंदोलन में भाग लेने की योजना ही बना रहे थे कि उसी समय यह आंदोलन स्थगित कर दिया गया।काँग्रेस के नेताओं ने विद्रोहियों को समर्थन देने की बजाए सम्राज्यवादी ब्रिटिश राज का सहयोग किया। फलत: स्वतंत्रता आंदोलन का नेतृत्व करने वाले काँग्रेसी नेताओं का समर्थन न मिलने के कारण नौ-सेना के सैनिकों ने आत्मसमर्पण कर दिया। आत्मसमर्पण करते हुए उन्होंने कहा– "We surrender to India and not to Britain."[78]

देश के नेताओं के इस फैसले से जनता के मन में निराशा पैदा हुई। यशपाल अपने उपन्यास में भावरिया के माध्यम से आम जनता के मनोभावों को व्यक्त करते हुए लिखते हैं-"अच्छा स्वराज यह नेता दिला रहे हैं कि अपने भूखे मरते देशवालों की मदद करने को मना कर रहे हैं!....कैसी राजनीति है यह! आँखों के सामने पिछले दिन दोपहर में देखे जहाजी सिपाहियों के चेहरे फिर गये और खयाल आया, सरकार उन्हें भूखा मार रही है, वे आकर अपने आदमियों से मिलना चाहते हैं और हम उनकी मदद न करें?...जाने राजनीति की यह क्या साँठ-गाँठ है? कल शाम वे बेचारे गला फाड़ रहे थे कि गोली चली है, हड़ताल करो। ये कह रहे हैं हड़ताल मत करो। खूब रही! हड़ताल जैसे नहीं होगी!"[79]

ज़ाहिर है कि एक ओर जहाँ यशपाल ने अपने उपन्यास में नौ-सेना द्वारा बंबई के कुछ स्थानों पर किये गये आंदोलन का विस्तृत चित्रण किया है, वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य अपने उपन्यास में असम की जनता द्वारा इस आंदोलन के दौरान आयोजित की

गई सभा-समितियों के चित्रण तक ही सीमित रहते हैं। असम में इस विद्रोह के संक्षिप्त और आंशिक प्रभाव को देखते हुए यह बिल्कुल स्वाभाविक भी है।

भले ही नौ-सेना विद्रोह असफल रहा, परंतु इस विद्रोह के पश्चात् तत्कालीन ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली समझ गये कि भारतीय समस्या की संतोषजनक मीमांसा ही भारत एवं ब्रिटेन के लिए मंगलमय है। अत: उन्होंने भारत की राजनीतिक समस्या के समाधान हेतु भारत में कैबिनेट मिशन भेजने का फैसला किया। 23 मार्च,1946 को कैबिनेट मिशन दिल्ली पहुँचा।[80] 24 मार्च से लेकर जून, 1946 तक वे भारतीय नेताओं के साथ मिलकर विचार-विमर्श करते रहे।[81] हमेशा की तरह यह बातचीत जिन्ना के पाकिस्तान की माँग पर आकर अटक गयी, जिसकी अंतिम परिणति भारत के विभाजन में हुई। अंतत: 16 मई, 1946 को कैबिनेट मिशन द्वारा भारत के राजनीतिक दलों के समक्ष यह प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया, जिसमें संविधान सभा का चुनाव करते समय प्रांतीय असेंबलियों को तीन वर्गों में बाँटा गया- हिन्दू बहुल प्रांतों के लिए मण्डल 'अ' होगा तथा उत्तर-पश्चिमी और उत्तर-पूर्वी मुस्लिम बहुल प्रांतों (असम सहित) के लिए मण्डल'ब' और 'स' होगा। इस प्रस्ताव को भारतीय नेताओं और मुस्लिम लीग के नेता जिन्ना द्वारा स्वीकृति मिली। हाँलाकि जिन्ना और वेवल की यह आशा थी कि भारतीय नेता इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करेंगे तो अंग्रेज लीग को ही अंतरिम सरकार बनाने के लिए कहेंगे। परंतु उनकी यह आशा निराशा में बदल गयी।[82] हालाँकि यह भी सत्य है कि कुछ भारतीय नेता इस विभाजन से खुश नहीं थे। एक ओर जहाँ काँग्रेसी नेता भारत की आजादी पहले और विभाजन बाद में चाहते थे, वहीं जिन्ना आजादी के पहले विभाजन की माँग कर रहे थे।[83] कैबिनेट मिशन के इस प्रस्ताव की घोषणा करते ही असम में व्यापक प्रतिक्रिया आरंभ हुई। असम प्रादेशिक काँग्रेस कमिटी कैबिनेट मिशन के इस प्रस्ताव से सहमत नहीं थी। हलाँकि असम काँग्रेस कमिटी पूरी तरह से कैबिनेट मिशन के प्रस्ताव की

विरोधी नहीं थी, बल्कि असम को बंगाल के साथ जोड़कर पाकिस्तान में सम्मिलित किए जाने की विरोधी थी। असम प्रादेशिक काँग्रेस कमिटी के परामर्श के अनुसार 19 मई को गोपिनाथ बरदलै एक पत्र के जरिए भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस समिति को कैबिनेट मिशन के इस प्रस्ताव को लेकर असम काँग्रेस और असम की जनता के मन में उत्पन्न विरोधी मनोभाव से अवगत करवाते हैं। दिल्ली से लौटकर 26 मई को गोपिनाथ बरदलै ने असम में स्थायी शासन स्थापित करने के लिए तथा असमिया भाषा एवं असमवासियों के अस्तित्व की रक्षा हेतु असम प्रादेशिक काँग्रेस कमिटी की महासभा का आयोजन किया, जिसमें उन्होंने असम की जनता का गुट विरोधी आंदोलन में भाग लेने के लिए आह्वान किया।[84] सम्पूर्ण असम में गुट विरोधी आंदोलन आरंभ हो गया। आंदोलन के बढ़ते प्रभाव को देखकर असम विधान सभा ने असम को एक अलग नया संविधान बनाने का परामर्श दिया। जिन्ना असम के अलग संविधान बनाने के खिलाफ थे, क्योंकि उन्हें लगता था कि यह उनकी पाकिस्तान की परिकल्पना के लिए हानिकारक है। परिणामस्वरूप उन्होंने 29 जुलाई, 1946 को कैबिनेट मिशन के प्रस्ताव से मंजूरी वापस ले ली।[85] 16 अगस्त को 'लेकर रहेंगे पाकिस्तान','लड़के लेंगे पाकिस्तान' का आह्वान करते हुए 'सीधी कार्रवाई' का मार्ग अपनाया, जिससे समाज में सांप्रदायिकता का ज़हर फैल गया।[86] देखते-ही-देखते कलकत्ता, बिहार, पंजाब आदि जगहों पर सांप्रदायिकता ने विकराल रूप धारण कर लिया, जिसमें लाखों लोगों की जान गयी। ऐसी विषम परिस्थितियों के बीच देश को 15 अगस्त,1947 को विभाजन के साथ आजादी मिली।

देश की आज़ादी और विभाजन एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। देश की आजादी और विभाजन दो ऐसी घटनाएँ हैं, जो एक साथ घटित हुईं, मगर जहाँ आज़ादी ने भारत के लोगों के दिलों को ऊर्जा और उत्साह से भर दिया, वहीं विभाजन ने तमाम

भारतवासियों के मन पर एक भयानक छाप छोड़ दी। यशपाल द्वारा रचित 'झूठा सच' उपन्यास विभाजन की पृष्ठभूमि पर लिखा गया है। इस उपन्यास में विभाजन के पूर्व, दौरान एवं पश्चात् सांप्रदायिकता की आग में जलते देश का चित्रण किया गया है। यह उपन्यास दो खंडों में विभाजित है। पहले खंड 'वतन और देश' का प्रकाशन 1958 में हुआ। इसमें पंजाब के लाहौर तथा उसके आस-पास के कुछ हिस्सों में विभाजन के पूर्व से लेकर विभाजन तक हुए सांप्रदायिक दंगों तथा जनमानस पर पड़े उसके प्रभाव का चित्रण किया है। दूसरे खंड 'देश का भविष्य' का प्रकाशन 1960 में हुआ। इसमें विभाजन के बाद की सांप्रदायिकता के विकराल रूप, विस्थापन के दर्द, काँग्रेसी नेताओं की स्वार्थपरता, समाज में फैले भ्रष्टाचार, आदि का चित्रण किया गया है।

जैसा कि हम जानते हैं स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए किये गये आंदोलनों में एकता ही जनशक्ति का आधार रही है। परंतु जब-जब भारतीय स्वतंत्रता आंदोलनों की गति तेज हुई तब-तब अंग्रेज सरकार 'फूट डालो राज करो' की नीति को अपनाकर जनता की एकता को खण्डित करने का प्रयास करती रही और काफी हद तक इसमें सफल भी होती रही। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद स्वतंत्रता आंदोलन की गति तीव्र हुई और अंग्रेज सरकार की शक्ति कमजोर पड़ने लगी। आंदोलन की तीव्र गति को रोकने के लिए अंग्रेज सरकार ने अपनी पुरानी 'फूट डालो राज करो' की नीति को अपनाया। उन्होंने धर्म के आधार पर भारत को विभाजित करके सत्ता हस्तांतरण का फैसला लिया, जिसके कारण काँग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच आपसी संघर्ष आरंभ हो गया। इस आपसी संघर्ष ने देश में सांप्रदायिकता का जहर घोल दिया। इस संदर्भ में यशपाल 'झूठा सच' में स्पष्ट रूप से लिखते हैं-"लीग-काँग्रेस का झगड़ा हिन्दू-मुसलमान का झगड़ा बन गया है। इस झगड़े का फैसला दुबारा चुनाव से तो हो नहीं सकता। यूनियनिस्ट या इंडिपेंडेंट सीटें भी हिन्दू-मुसलमानों में बँट जायेंगी। अंग्रेजों ने कम्यूनल बेसिस (सांप्रदायिक आधार) पर चुनाव की

नीति चलायी थी। उसका फल अब पका है। इस झगड़े का फैसला या तो आपसी समझौते से हो सकता है या तारासिंह और अल्लामा मशरिकी की तलवारों से होगा। इसका मतलब है पंजाब से या तो हिन्दू खत्म हो जायें या मुसलमान या हमेशा के लिए अंग्रेजों की हुकूमत रहे...।"[87]

साथ ही यशपाल ने 'झूठा सच' उपन्यास में काँग्रेस और मुस्लिम लीग के परस्पर विरोध का चित्रण करते हुए स्पष्ट रूप से यह दिखाने का प्रयास किया है कि तत्कालीन समाज में फैले सांप्रदायिक दंगों का कारण इन दोनों संगठनों का आपसी अविश्वास है। इसे स्पष्ट रूप से उपन्यास में 'स्टुडेंट फेडरेशन' के असद के लीगी दोस्त अब्दुल के कथनों में देखा जा सकता है-"कायदे-आजम हमेशा से कहते हैं कि काँग्रेस मुसलमानों की नुमाइन्दगी नहीं कर सकती है वह हिन्दुओं की जमायत है।"[88]

यशपाल ने तत्कालीन भारतीय समाज में फैली सांप्रदायिकता के लिए कट्टर धार्मिक संगठन के लोगों को जिम्मेदार ठहराया है। 'झूठा सच' उपन्यास के एक प्रसंग में यह साफ तौर पर दिखाई देता है-"लाहौर के मध्यम अथवा निम्न-मध्यम आर्थिक स्थिति के लोगों से बसी हुई गलियों में दिन के तीसरे-चौथे पहर स्त्रियों की महफिलें जम जाती थीं। गलियाँ तंग होने के कारण बीच का अंतर तीन या चार हाथ से अधिक न रहता था।...उस समय पुरुष दुकानों पर या दफ्तरों में या अपने व्यवसायों में उलझे रहते थे।...भोला पांधे की गली में चौथे पहर स्त्रियों की जिह्वाएँ बातों में और हाथ अपने-अपने कामों में तेजी से चल रहे थे।"[89] उसी बीच गली में हिन्दू रक्षा कमेटी की महिलाएँ आती हैं और गली में आये मुसलमान फल वाले को भगाकर गली की स्त्रियों को संबोधित करती हुई एक युवती कहती है- "बहिनो, क्या तुम्हें नहीं मालूम, कलकत्ते में मुसलमानों ने हजारों हिन्दू भाइयों को कत्ल कर डाला, हमारी सैकड़ों बहू-बेटियों को बेइज्जत कर डाला है। अफसोस है, तुम्हारी गली में यह लोग अब भी सौदा बेच रहे हैं...।"[90] आगे फिर

दूसरी स्त्री ईश्वरकौर कहती है- "मुसलमान मरे खूब तैयारी कर रहे हैं। पानी के नल कटवा-कटवा कर बन्दूकें बना रहे हैं। मुसलमानियों ने भी छूरे रख लिये हैं। हमीं लोग सोये हुए हैं। तुम्हें चाहिए अपने घर के सब मर्दों को अखाड़े भेजो। सब लोग लाठी, तलवार, बंदूक चलाना सीखें नहीं तो तुम्हारी जायदादें कहाँ बचेंगी?"[91] यशपाल अपने उपन्यास में यह स्पष्ट रूप से दिखाने का प्रयास करते हैं कि विभाजन के पूर्व सांप्रदायिक भावनाएँ भड़काने के लिए तमाम राजनैतिक हलचलें हो रही थीं, परंतु आम जनता इन विकृत भावनाओं से दूर अपने रोजमर्रा के कामों में लिप्त थी। आमजनों में वैमनस्यता का भाव भरने में सांप्रदायिक संगठनों की मुख्य भूमिका रही है। तत्कालीन दौर में भोला पांधे की गली का दृश्य लगभग पूरे भारतीय समाज का दृश्य था।

यशपाल ने 'झूठा सच' उपन्यास में भोला पांधे की गली में हिन्दुओं-मुसलमानों के आपसी संघर्ष के जरिए विभाजन के दौरान हुए हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष को दर्शाया है- ""अल्लाओ ऽ अकबर! या अली! या अली!" बहुत ज़ोर से नारे और ललकारें मोंची दरवाज़े वाली गली की ओर से सुनाई दिये। साथ ही गली में किवाड़ों पर बहुत जोर-जोर की चोटें और स्त्रियों की भयार्त चीत्कार सुनाई दिये। घसीटाराम की घिघियाई हुई आवाज़ आयी- "मुसलमान आ गये!" मास्टर जी के हाथ से ग्रास थाली में गिर पड़ा। पुरी ने एक ही छलांग में खिड़की पर पहुँचकर देखा---छोटी-मोटी भीड़ मशालें, बल्लम-लाठियाँ और छुरे लिये घुस आयी थी।...पल भर में कोहराम मच गया।...पुरी ने कहा- "छतों पर से ईंट फेंको।" प्रभुदयाल, मेवाराम, बीरसिंह और मकुंदलाल ने भी पुरी की बात दोहरायी- "संडासे गिरा लो! ईंटें फेंको।"...टीकाराम, पुरी, मनोहर लाठियाँ लेकर नीचे पहुँचे। तब तक प्रभुदयाल, मकुन्दलाल और दूसरे लोग भी गली में उतर गये थे। स्त्रियों की भर्यात चीखें सुनायी दे रही थीं। मेवाराम ने नारा लगाया-"नाराए बजरंगी!" "हर हर महादेव!" पुरी ने अन्य लोगों के साथ हुंकारा। स्त्रियाँ भय से चीख और रो रही थीं और छतों पर से

भीड़ पर ईंटें भी मारती जा रही थीं। ईंटें इतनी अधिक पड़ने लगीं कि न आक्रमण करने वाले और न सामना करने वाले आगे बढ़ सकते थे। 'या अली!' और हर-हर महादेव!' के नारे और गालियों की ललकारें दोनों ओर से दी जा रही थीं।"[92] इस गली का दृश्य ही तत्कालीन समूचे पंचाब का दृश्य था।

विभाजन के दौरान एवं उसके बाद सबसे अधिक अत्याचार स्त्रियों पर हुए। दोनों धर्मों के लोगों द्वारा अपमान, अत्याचार और शारीरिक एवं मानसिक शोषण, स्त्रियों को ही सहने पड़े। स्त्रियों का अपहरण, बलात्कार, उनका अंग भग कर देना, निर्वस्त्र करके जुलूस निकालना,स्त्रियों की निलामी जैसी घटनाएँ आम बात हो गयी थीं। 'झूठा सच' उपन्यास में यशपाल ने हिन्दुओं एवं मुसलमानों दोनों द्वारा स्त्रियों पर किये गये अत्याचार का चित्रण किया है। उपन्यास की नायिका तारा एक हिन्दू लड़की है। वह एक के बाद एक मुसीबत में फँसती जाती है। विवाह की पहली रात तारा अपने पति सोमराज द्वारा प्रताड़ित होती है। उसी दौरान मुसलमानों द्वारा उसके घर में आग लगा दिये जाने पर अपनी जान बचाने के लिए वह छत से कूद कर भागने की कोशिश करती है, परंतु वह नब्बू नामक एक मुसलमान गुण्डे की गिरफ्त में आ जाती है। नब्बू तारा को इसलिए उठाकर ले जाता है क्योंकि वह हिन्दू है। नब्बू की स्त्री तारा को घर पर लाने का विरोध करती है। इस पर नब्बू अपनी स्त्री को तो गाली देता ही है, साथ ही हिन्दुओं को सामूहिक रूप से गाली देते हुए कहता है- "मैं इसे खराब करके खलीफा के यहाँ पच्चीस रुपये में दे आऊँगा। मुझे क्या इसे यहाँ रखना है। खामुखाह झगड़ा क्यों कर रही है?"[93]

उपन्यास की अन्य स्त्री पात्र बंती, दुर्गा, सहवंत ये सभी स्त्रियाँ पुरुषों के अत्याचार का शिकार होती हैं। उपन्यास में हिन्दुओं द्वारा मुसलमान स्त्रियों पर किये गये अत्याचार का वर्णन इस प्रकार किया गया है- "उसके साथ ही एक और लड़की को भी सब कपड़े फाड़ कर बाजार में घसीटा जा रहा है क्योंकि उसने अपमान करने के लिये

आक्रमण करने वालों पर बंदूक से गोलियाँ चलायी हैं। लड़की के अंग-अंग काटे जा रहे हैं क्योंकि वह 'जय हिन्द' नहीं कह रही है। वह 'पाकिस्तान जिंदाबाद'पुकार रही है। फिर भी वह लड़की ललकार रही है- मैं नहीं हारी! मेरी मिट्टी को तुम जो चाहो कर लो। मैंने सिर नहीं झुकाया। यह शरीर तो मिट्टी हो चुका; यह मेरी पराजय नहीं, तुम्हारी पशुता है।"[94]

विभाजन के बाद की सबसे बड़ी त्रासदी थी जनता की अदला-बदली अर्थात् विस्थापन। धर्म के आधार पर देश दो हिस्सों में बाँट दिया गया। हिन्दू बहुल क्षेत्र 'हिंदुस्तान' एवं मुस्लिम बहुल क्षेत्र 'पाकिस्तान' बना। आज़ादी के समय इस बात की घोषणा कर दी गयी थी कि दोनों देशों में रहने वाले लोग(हिन्दू-मुस्लिम) वहाँ के ही नागरिक मान लिए जायेंगे। लेकिन आपसी अविश्वास तथा अल्पसंख्यक बन जाने के भय से लोग देश छोड़कर जाने लगे। 'झूठा सच' उपन्यास में यशपाल ने आम जनता के विस्थापन का अत्यंत सजीव चित्रण किया है-"मोटरों के दोनों ओर लँगड़ाती-लड़खड़ाती भीड़ बढ़ती आ रही थी। कतरी हुई और उलझी हुई दाढ़ियों, दबी हुई टोपियों, रस्सी की तरह लपेटी हुई मैली पगड़ियों में से झाँकते मुड़े हुए सिर, काले, नीले, चीथड़े कपड़े, स्त्री-पुरुषों के चेहरे आँसुओं और पसीने से जमी गर्द से ढँके हुए, कमरें झुकी हुईं, घिसटते-लँगड़ाते हुए कदम। भीड़ फटकर मोटरों के दाहिने-बायें, दस-दस, पन्द्रह-पंद्रह आदमियों की लहरों में आती जा रही थी। भीड़ के ऊपर मँडराते मक्खियों के बादल ने मोटर गाड़ियों पर आक्रमण कर दिया। इतनी मक्खियाँ कि मक्खियों को साँस के साथ नाक में घुसने से रोकने के लिए उन्हें दोनों हाथों से निरंतर हटाते रहना आवश्यक था। उबकाई पैदा करने वाली भयंकर दुर्गंध...मानो वे शरीर चलते-फिरते भी सड़ते-गलते जा रहे थे। भीड़ के खिसटते कदमों से उड़ती धूल से साँस लेना और भी दुष्कर हो रहा था। भीड़ के प्राय: सभी लोग कुछ न कुछ, छोटा-मोटा बोझ उठाये थे।...किसी की पीठ पर बोरी,

किसी के सिर पर कनस्तर काटकर बनाया हुआ बक्सा, किसी के कंधे पर गठरी, कोई सिर पर रखी उलटी खाट पर अपनी गृहस्थी उठाये लिये जा रहा था।...कई स्त्रियों के सिरों पर मिट्टी के चूल्हे थे। कोई सिर पर अपनी केवल मात्र संपत्ति परात या पतीला औंधाये चले जा रहे थे। कोई स्त्री सिर पर हलकी चक्की ही उठाये लिये जा रही थी।...भीड़ घनी होती जा रही थी।"[95]

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जिस तरह के देश की कल्पना जनता कर रही थी, वह धरी-की-धरी रह गयी। स्वतंत्रता के बाद वस्तुओं के मूल्य में बेतहाशा वृद्धि ने साधारण जनता की कमर तोड़ दी। अब जनता का शोषण साम्रज्यवादियों द्वारा नहीं, बल्कि अपने ही देश के नेताओं द्वारा होने लगा। यशपाल अपने उपन्यास 'झूठा सच' में काँग्रेसी राज में घुसखोरी, बेईमानी आदि का चित्रण बहुत बारीकी से करते हैं। इसका स्पष्ट रूप रतन द्वारा तारा को कही गयी इन बातों में देखा जा सकता है-"ट्रैफिक पुलिस को साल का पाँच सौ फी ट्रक और रुपया महीना की चौराहा रिश्वत न दी जाये तो ट्रक चल ही नहीं सकते। कभी ओवरलोड कह कर या स्पीड ज्यादा बता कर, कभी लाइसेंस चेक करने के बहाने सड़क पर रोक लेंगे। उन्हें तो हाथ से इशारा भर कर देना है। तफतीश के लिये कोतवाली जाओ, दिन भर उसी में डूब जायेगा। चालीस-पचास का नुकसान हो जायगा। ट्रक वाले तो रोज अदालत में ही खड़े रहा करें। ऐसे नुकसान की मार कौन सह सकता है। हम तो मजबूरी में अपना पेट काट कर देते हैं। हम नाजायज फायदा क्या उठा लेते हैं?"[96]

यशपाल ने 'झूठा सच' उपन्यास में स्वतंत्रता के बाद काँग्रेस के शासनकाल में समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार को उजागर किया है। उदारहण के तौर पर 'झूठा सच' उपन्यास के पात्र माथुर द्वारा भाखड़ा नंगल परियोजना के संबंध में कही गयी उक्ति को देख सकते हैं- "भाखड़ा नंगल जाकर तमाशा देख लो। जनता के खर्च पर इतना सीमेंट खरीदा गया है

कि भाखड़ा के पचास-साठ मील चारों ओर सब मकान सीमेंट के बन गये हैं। सीमेंट फैक्टरियों की चाँदी है, ठेकेदारों की चाँदी है, सरकारी अफसरों की चाँदी है। बरबादी टैक्स देने वालों की है। सीमेंट की जगह रेत भरी जा रही है। चवन्नी की जगह रुपये का एस्टीमेट बनता है। फिर उस चवन्नी में से भी तीन आने खा जाना चाहते हैं। सीमेंट की जगह रेत से बनाये गये बाँध टूटेंगे तो नुकसान किसका होगा? उस नुकसान को इंजीनियर पूरा करेंगे, न ठेकेदार।"[97]

एक ओर जहाँ विभाजन से पूर्व समस्त उत्तर भारत में सांप्रदायिकता का जहर फैला हुआ था, वहीं दूसरी ओर ब्रिटिश सरकार तथा मुस्लिम लीग द्वारा असम को बंगाल के साथ जोड़कर पाकिस्तान में शामिल किए जाने की साजिश के विरोध में असम के प्रमुख नेता लोकप्रिय गोपिनाथ बरदलै के नेतृत्व में असमवासियों द्वारा असम में स्थायी शासन स्थापित करने तथा असमिया भाषा एवं अस्तित्व की रक्षा के लिए आंदोलन किये जा रहे थे। इस आंदोलन में असम के सभी वर्ग के लोगों ने साथ दिया। असमिया उपन्यासकार बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में तत्कालीन असम में गोपिनाथ बरदलै के नेतृत्व में असम की जनता द्वारा किये गये इस आंदोलन का चित्रण बहुत बारीकी से किया है। वे लिखते हैं-"समूचे असम क्षेत्र में ब्रिटिश साम्राज्य विरोधी आंदोलन, देश को दो खंडों में बाँटने के, असम को अलग वर्ग में रखने के विरुद्ध आंदोलन में परिवर्तित हो गया। बच्चे-बूढ़े, मर्द-औरत सभी के सभी असम को अन्यायपूर्वक 'ग' सूची में रखने के खिलाफ हो गये हैं और इसका विरोध करने के लिए सभी बरदलै को अपना नेता मान उनके पीछे कटिबद्ध हो खड़े हो गये हैं।"[98]

तत्कालीन असम में एक ऐसा भी समय आया था जब असम के नेता एवं जनता को असम की भाषा एवं अस्तित्व की रक्षा के लिए अकेले लड़ाई लड़नी पड़ी थी। उस समय गाँधी जी ही एकमात्र व्यक्ति थे जिन्होंने गोपिनाथ बरदलै को सहायता प्रदान की

थी। 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने गुट विरोधी आंदोलन में गाँधी की भूमिका को पात्र रविचन्द्र के माध्यम से व्यक्त करते हुए लिखा है-"महात्मा गाँधी ने स्पष्ट रूप से कहा है कि असम ने सन् 1934 की संवैधानिक धारा के तहत जो प्रादेशिक स्वायत्त शासन पाया है, उस स्वायत्त शासन को असम को छोड़ने की जरूरत नहीं है। उसमें असम की और भारत की स्वाधीनता के बीज छिपे हुए हैं।"[99] आगे वे फिर कहते हैं- "एकमात्र महात्मा गाँधी ही उन्हें साहस प्रदान कर रहे हैं।"[100]

भट्टाचार्य जी ने उपन्यास में गुट विरोधी आंदोलन में असम के साहित्यिक वर्ग की भूमिका को रेखांकित किया है। तत्कालीन असम में 'जयंती' पत्रिका की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इस पत्रिका के जरिए समाज में ऐसे युवा कवियों का उभार हुआ, जिन्होंने दु:खी-दरिद्र लोगों का पक्षधर बनकर अपनी कविता के माध्यम से जनता के मन में शोषण के विरुद्ध चेतना जागृत करने का प्रयास किया। ये कवि समाजवादी व्यवस्था के निर्माण का स्वप्न देखते हुए साम्राज्यवाद और पूँजीवाद को देश से खदेड़ देना चाहते थे। उनके संबंध में भट्टाचार्य लिखते हैं- "वे साम्राज्यवादी युद्ध को जन-युद्ध में बदल देने के लिए विचार कर रहे थे और तदर्थ प्रयत्नशील थे।"[101]

'पाखी घोड़ा' उपन्यास में नवीन के जरिए तत्कालीन असम में गुट विरोधी आंदोलन में गुप्त आंदोलनकारियों की भूमिका को रेखांकित किया गया है। उपन्यास का पात्र नवीन आंदोलन के दौरान सभा-समिति का आयोजन कर असम को पाकिस्तान के चंगुल से बचाने के लिए तथा असम की रक्षा के लिए सभी वर्गों के लोगों से एकजुट होकर इस आंदोलन में भाग लेने की अपील करता है। साथ ही वह गोपिनाथ बरदलै को सहयोग प्रदान करता है एवं गाँधी जी के रचनात्मक कामों के माध्यम से अपने-आपको देश हित के काम में समर्पित कर देता है। उपन्यास की पात्र आश्रम की प्रधान सेविका माकन की नवीन के संबंध में कही गयी बातों के जरिए तत्कालीन दौर में गुप्त आंदोलनकारियों की गतिविधियों को स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है-"आज के दिन तक नवीन जी ही इस

आश्रम की देखभाल कर रहे थे। यद्यपि वे स्वयं भूमिगत हो छिपे रूप में निर्वासन का जीवन बिता रहे थे, फिर भी बीच-बीच में आकर हमारी सुरक्षा, आश्रम को ठीक ढंग से चलाने के साधनों की व्यवस्था वगैरह कर दिया करते थे। उन्हीं की प्रेरणा से, उन्हीं के निर्देशानुसार अब आश्रम की सारी सेविकाएँ असम-रक्षा के लिए सारी महिलाओं को संगठित कर रही हैं।"[102]

तत्कालीन दौर में देश के अन्य भागों में, खासकर उत्तर भारत में फैली सांप्रदायिकता का प्रभाव असम में दिखाई नहीं पड़ता। मुस्लिम लीग द्वारा कलकत्ता में 'सीधी कार्रवाई' वाले दिन सांप्रदायिक दंगे में बहुत सारे लोग मारे गए, जिसे सुनकर असम की जनता डर गई। असम के काँग्रेसी नेता गोपिनाथ बरदलै द्वारा बंगाल के सदस्यों के साथ गुट में शामिल न होने की घोषणा के पश्चात् असम में भी मुस्लीम लीग द्वारा 'सीधी कार्रवाई' शुरू कर दी गई थी। लेकिन असम में इसका कोई खास प्रभाव नहीं पड़ा। इसका प्रमुख कारण यह था कि लीग द्वारा असम को बंगाल के साथ जोड़कर पाकिस्तान में शामिल करने की कुटिल राजनीति से असम के अधिकांश मुसलमान भी सहमत नहीं थे। 'पाखी घोड़ा' का मुसलमान पात्र सिराजुद्दीन हजारिका कहता है-"लीग की राजनीति का हममें से अधिकांश लोग समर्थन नहीं करते।"[103] इस संबंध में डॉ. सागर बरुवा लिखते हैं-"मुस्लिम लीग की असम शाखा ने पाकिस्तान बनाने की चिंता के विपरीप असम के मुसलमानों की आर्थिक-सामाजिक उन्नति को अधिक महत्व दिया।"[104]

परिणामस्वरूप असम में हुई सीधी कार्रवाई के दिन असम में कोई गड़बड़ी नहीं हुई। हालाँकि जिस दिन असम में लीग द्वारा पाकिस्तान की माँग के लिए जुलूस निकली थी, उस दिन इस जुलुस के विरोध में गुवाहाटी शहर में एक बड़ा जुलूस निकला था, जिसमें सभी वर्गों के लोगों ने भाग लिया। 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य तत्कालीन असम में हुए इस आंदोलन के संबंध में लिखते हैं-"उस दिन गुवाहाटी

में मुस्लिम लीग का एक छोटा-सा जुलूस निकला। परंतु तभी उसके साथ-साथ ही उस जुलूस के विरोध में छात्रों का एक बहुत बड़ा जुलूस निकला। इतना बड़ा जुलूस कि जितना बड़ा गुवाहाटी शहर में इसके पहले कभी नहीं निकला था। छात्रों का यह जुलूस पूरे शहर में फेरी लगाता हुआ अंत में उच्च न्यायालय के विस्तृत मैदान में इकट्ठा हो गया जहाँ वह देश को खंड-खंड में बाँटने की योजना के विरुद्ध एक विशाल सभा के रूप में परिणत हो गया। उस विशाल सभा में केवल छात्र ही नहीं थे, बल्कि छात्रों के साथ अन्य सभी वर्गों के बहुत सारे लोग योगदान कर रहे थे।"[105]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में तत्कालीन असम में हुए गुट विरोधी आंदोलन के दौरान उत्पन्न नारी जागृति को पात्र सिराजुद्दीन हजारिका के माध्यम से व्यक्त किया है- "अब जब कि स्त्री-शक्ति जाग पड़ी है, तब तो फिर कोई चिंता नहीं। यह आंदोलन तो अब रसोई घर तक में पहुँच गया। मैं अच्छी तरह देख पा रहा हूँ कि यह निश्चित विजय का लक्षण है।"[106] साथ ही इस उपन्यास में उपन्यासकार ने तत्कालीन समाज में सांप्रदायिक संघर्ष के दौरान असम की महिलाओं द्वारा हिंसा से पीड़ित महिलाओं की सहायता का चित्रण भी किया है। भट्टाचार्य लिखते हैं-"असम की महिलाएँ अपने साथ में सांप्रदायिक हिंसा की शिकार-पीड़ित-हर्षित महिलाओं की सहायता के लिए, सहायता सामग्रियाँ लायी थीं। इन सहायता सामग्रियों में रुपये-पैसे अन्यान्य सामग्रियों के अलावा सिन्दूर और चूड़ियाँ भी थीं।"[107]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य देश विभाजन की नीति से सहमत नहीं थे। उनके अनुसार देश को विभाजित कर आजादी हासिल करना देश के लिए क्षतिकारक है। उन्होंने अपने मनोभाव को 'पाखी घोड़ा' उपन्यास के प्रमुख पात्र नवीन के माध्यम से व्यक्त किया है-"काँग्रेस और मुस्लिम लीग के सारे नेता जैसे-तैसे भी स्वतंत्रता प्राप्त कर देश में अपना शासन स्थापित करना चाहते हैं। इस प्रकार के शासन से जनता के कल्याण हो पाने की कोई आशा नहीं है। ये नेता लोग पूँजीवाद को खत्म करने का कोई उपाय ही नहीं कर रहे

हैं। मुहम्मद जिन्ना इस्लामी राष्ट्र बनाना चाहते हैं। पं. जवाहर लाल नेहरू पश्चिमी देशों की तरह का एक गणतांत्रिक राष्ट्र बनाना चाहते हैं। और अभी फिलहाल वे केवल एक राजनैतिक गणतंत्र बनाना चाहते हैं। जिन्ना साहब के पाकिस्तान में तो वह गणतंत्र नहीं रहेगा। जमींदारों, पूँजीपतियों के शोषण को समाप्त करने के लिए कोई परिकल्पना मुस्लिम लीग के पास तो है ही नहीं, काँग्रेस के पास भी नहीं है। विभिन्न अंगों के रूप में संगठित किए जाने वाले राज्यों, प्रदेशों के संगठन के संबंध में भी कोई वैज्ञानिक सिद्धांत सुनिश्चित कर पाने में भी ये दोनों ही दल असमर्थ सिंद्ध हुए हैं। देश के दो टुकड़ों में बँट जाने के बाद तो इन समस्याओं का समाधान कर पाना और भी कठिन हो जाएगा। इस प्रकार की गलत नीतियों के कारण देश की एकता हमेशा-हमेशा के लिए खत्म हो जाने की ही संभावना दिखाई पड़ रही है।"[108] स्पष्ट है कि उपन्यासकार इन पंक्तियों के माध्यम से भारत के नेताओं द्वारा देश के विभाजन के फैसले को गलत ठहराता है।

उपर्युक्त दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों के अध्ययन-विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने-अपने उपन्यासों में क्रमश: उत्तर भारत और असम में भारत की आजादी और विभाजन के पूर्व, दौरान एवं उसके बाद हुई घटनाओं एवं जनता पर पड़े उसके व्यापक प्रभाव का चित्रण बहुत बारीकी से किया है। ज़ाहिर है असम की परिस्थिति उत्तर भारत से भिन्न थी और वहाँ विभाजन का प्रभाव उत्तर भारत की तुलना में कम था, साथ ही वहाँ हिन्दू-मुस्लिम सांप्रदायिक दंगे और विस्थापन भी उस तरह से नहीं हुआ, जैसे उत्तर भारत में हुआ। इसलिए यह बिल्कुल स्वाभाविक है कि यशपाल के उपन्यास में विभाजन और विस्थापन के चित्रण में जो विस्तार और व्यापकता है, वह बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास में नहीं है।

संदर्भ

[1] यशपाल, गाँधीवाद की शव परीक्षा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018,पृ. 78-79

[2] यशपाल, यशपाल रचनावली (खंड-11), आनन्द(संपा.), मैनेजर पाण्डेय, यशपाल का चिंतन(प्रस्तावना), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007, पृ. xxi

[3] यशपाल, दिव्या, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2017, पृ.12

[4] वही, पृ. 16

[5] वही

[6] वही, पृ. 12

[7] वही

[8] यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018, पृ. 202

[9] वही, पृ. 129

[10] वही, पृ. 130

[11] यशपाल, झूठा सच(भाग-2), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018, पृ. 456

[12] यशपाल, मनुष्य के रूप, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009, पृ. 124

[13] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, डॉ. कृष्ण प्रसाद सिंह मागध(अनु.), भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2013, पृ. 99-100

[14] वही, पृ. 100

[15] वही

[16] वही, पृ. 102

[17] वही

[18] वही, पृ. 48

[19] वही, पृ. 37

[20] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, माँ, लोकनाथ भराली(अनु.), हिंदी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, 1963, पृ. 93

[21] वही, पृ. 23

[22] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, पृ. 108

[23] वही, पृ. 109

[24] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, शतघ्नी, नेशनल पाब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1962, पृ. 104

[25] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, पृ. 117

[26] यशपाल, यशपाल रचनावली(खंड-11), पृ. 398

[27] यशपाल, गाँधीवाद की शव परीक्षा, पृ. 21

[28] यशपाल, दादा कामरेड, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद, 2016, पृ. 112

[29] यशपाल, यशपाल रचनावली (खंड-11), मैनेजर पाण्डेय, यशपाल का चिंतन (प्रस्तावना), पृ. xxi

[30] यशपाल, दादा कामरेड, पृ. 118

[31] यशपाल, मनुष्य के रूप, पृ. 32

[32] यशपाल, दादा कामरेड, पृ. 54

[33] यशपाल, मनुष्य के रूप, पृ. 57

[34] यशपाल, दादा कामरेड, पृ. 118

[35] यशपाल, देशद्रोही, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद, 2014, पृ. 55

[36] यशपाल, न्याय का संघर्ष, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद, 2003, पृ. 14

[37] यशपाल, दादा कामरेड, पृ. 116

[38] यशपाल, मनुष्य के रूप, पृ. 33

[39] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, डॉ. महेन्द्रनाथ दुबे(अनु.), भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 1990, पृ. 42

[40] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, नवारुण वर्मा(अनु.), किताबघर, नई दिल्ली, 1990, पृ. 73

[41] वही, पृ. 49

[42] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, पृ. 279

[43] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, पृ. 152

[44]सुमित सरकार, आधुनिक भारत(1885-1947), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृ. 405

[45] प्रोफ़सर बिपिन चंद्र, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिंदी माध्यम कार्यन्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 2011, पृ. 437-438

[46] डॉ. सागर बरुवा, भारतर स्वाधीनता संग्रामत असमर अवदान, जागरण साहित्य प्रकाशन, नगाँव, 2013, पृ. 256 पर उद्धृत

[47] वही, पृ. 257

[48] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, पृ. 9

[49] वही, पृ. 115

[50] यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, पृ. 418

[51] वही, पृ. 548

[52] वही, पृ. 549

[53] वही

[54] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, पृ. 190

[55] वही, पृ. 192-193

[56] यशपाल, गाँधीवाद की शव परीक्षा, पृ. 74

[57] यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, पृ. 292

[58] वही, पृ. 290

[59] वही, पृ. 294

[60] प्रेम सिंह, क्रान्ति बनाम क्रान्ति (लेख), इन्द्रप्रस्थ भारती पत्रिका (यशपाल विशेषांक), वर्ष-15, अंक- 4, अक्टूबर-दिसंबर, 2003, पृ. 273

[61] डॉ. सागर बरुवा, भारतर स्वाधीनता संग्रामत असमर अवदान, पृ. 300

[62] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, पृ. 76

[63] वही, पृ. 220

[64] प्रोफ़सर बिपिन चंद्र, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, पृ. 455

[65] वही, पृ. 458

[66] सुमित सरकार, आधुनिक भारत(1885-1947), पृ. 443

[67] वही

[68] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, पृ. 220-221

[69] प्रोफ़सर बिपिन चंद्र, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, पृ. 456

[70] वही, पृ. 458

[71] सुमित सरकार, आधुनिक भारत(1885-1947), पृ. 445

[72] डॉ. सागर बरुवा, भारतर स्वाधीनता संग्रामत असमर अवदान, पृ. 301

[73] यशपाल, गीता, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, पृ. 82-83

[74] वही, पृ. 85-86

[75] वही, पृ. 89

[76] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, पृ. 232

[77] वही, पृ. 241

[78] डॉ. सागर बरुवा, भारतर स्वाधीनता संग्रामत असमर अवदान, पृ. 302

[79] यशपाल, गीता, पृ. 86

[80] डॉ. सागर बरुवा, भारतर स्वाधीनता संग्रामत असमर अवदान, पृ. 302

[81] सुमित सरकार, आधुनिक भारत(1885-1947), पृ. 449

[82] वही, पृ. 451

[83] प्रोफ़सर बिपिन चंद्र, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, पृ. 472

[84] डॉ. सागर बरुवा, भारतर स्वाधीनता संग्रामत असमर अवदान, पृ. 304-305

[85] वही, पृ. 308

[86] प्रोफ़सर बिपिन चंद्र, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, पृ. 473

[87] यशपाल, झूठा सच(भाग-1), पृ. 92

[88] वही, पृ. 91

[89] वही, पृ. 45-46

[90] वही, पृ. 48

[91] वही, पृ. 52

[92] वही, पृ. 121-122

[93] वही, पृ. 311

[94] यशपाल, झूठा सच(भाग-2), पृ. 106

[95] यशपाल, झूठा सच(भाग-1), पृ. 411

[96] यशपाल, झूठा सच(भाग-2), पृ. 490

[97] वही, पृ. 491

[98] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, पृ. 283

[99] वही, पृ. 337

[100] वही, पृ. 338

[101] वही, पृ. 42

[102] वही, पृ. 334-335

[103] वही, पृ. 315

[104] डॉ. सागर बरुवा, भारतर स्वाधीनता संग्रामत असमर अवदान, पृ. 304 (अनुवाद मेरा)
डॉ. सागर बरुवा लिखते हैं:
मुसलिम लीगर असम शाखाइ पाकिस्तानर चिंता करार परिवर्ते असमर मुसलमानसकलर आर्थ-सामाजिक उन्नतिर उपरतहे गुरुत्व दिसिल।

[105] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, पृ. 323-324

[106] वही, पृ. 336-337

[107] वही, पृ. 297

[108] वही, पृ. 355

अध्याय- 5

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का शिल्प

5.1 भाषा

5.2 कथा-शिल्प

5. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का शिल्प

5.1 भाषा

मानव सभ्यता के विकास के आरंभिक दौर में लोग जंगलों एवं गुफाओं में रहते थे। वे लोग शिकार कर अपना जीवन निर्वाह किया करते थे। वे लोग आंगिक हाव-भाव, प्रतीक चिह्नों एवं सांकेतिक ध्वनियों का प्रयोग कर अपने विचारों तथा अनुभवों को दूसरे के समक्ष प्रस्तुत करते थे। बदलते समय के साथ उनके खान-पान, रहन-सहन, आदि में भी बदलाव आया तथा लोगों ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों एवं विचारों को दूसरों के साथ साझा करने के लिये भाषा का आविष्कार किया और उसका प्रयोग करने लगे। भाषा एक सामाजिक उत्पाद है और मनुष्य एक सामाजिक प्राणी। अत: भाषा का व्यवहार मनुष्य समाज में अपने जन्म से लेकर मृत्यु तक करता है, जिसके माध्यम से लोग एक-दूसरे के साथ जुड़ाव महसूस करते हैं। सामान्यतः हम यह कह सकते हैं कि भाषा वह साधन है जिसके जरिए हम अपने विचारों एवं भावों को दूसरों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं तथा दूसरों के विचारों एवं अनुभवों को समझने में सक्षम होते हैं।

'भाषा' साहित्य की धुरी होती है। भाषा के माध्यम से ही साहित्य की अभिव्यक्ति हो पाती है। भाषा के अभाव में किसी साहित्य की कल्पना ही नहीं की जा सकती है। भाषा भावों तथा विचारों की बाह्य अभिव्यक्ति होती है। फलतः कोई भी साहित्यकार भाषा के माध्यम से अपने विचारों एवं अनुभूतियों को प्रकट करने के लिए साहित्य की रचना करता है। साहित्यकारों द्वारा रचे गए साहित्य की सफलता उसकी भाषा पर भी निर्भर करती है। अत: साहित्यकार भाषा के जरिए ही साहित्य को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर उन्हें अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास करते हैं। प्रस्तुत उप-अध्याय में हिन्दी के उपन्यासकार यशपाल के उपन्यासों और असमिया के उपन्यासकार बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के हिन्दी में

अनूदित उपन्यासों की भाषा की विशिष्टता को रेखांकित एवं विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

यशपाल अपने कई उपन्यासों में तत्सम बहुल या संस्कृतनिष्ठ भाषा का प्रयोग करते दिखाई पड़ते हैं। 'दिव्या', 'अमिता' और 'अप्सरा का शाप' इसी तरह के उपन्यास हैं, जिनमें तत्सम शब्दों की बहुलता दिखाई पड़ती है। इसका कारण यह है कि यशपाल ने ऐतिहासिक संदर्भों और प्राचीन साहित्यिक कथाओं के आधार पर इन तीनों उपन्यासों की रचना की है। 'दिव्या' का वातावरण बौद्धकालीन था। 'अमिता' उपन्यास मौर्यवंशीय अशोक के कलिंग युद्ध पर आधारित है। 'अप्सरा का शाप' उपन्यास के कथासूत्र कालिदास के 'अभिज्ञान-शाकुंतलम्' से जुड़े हैं। यही कारण है कि यशपाल इन उपन्यासों में अतीत के देशकाल, वातावरण, आदि की रक्षा के लिए संस्कृतनिष्ठ भाषा का अत्यधिक प्रयोग करते हुए दिखाई देते हैं।

'दिव्या' उपन्यास में छाया के एक कथन के जरिए भाषा की तत्सम बहुलता को देखा जा सकता है- "भद्रे, अत्यन्त शीतल हिमवात गवाक्ष से आ रहा है, शरीर कष्ट पायेगा।"[1]

'दिव्या' उपन्यास के एक अन्य पात्र रुद्रधीर के कथन को भी देखा जा सकता है- "भद्रे को स्मरण होगा, धर्मास्थान से पाये दो सहस्र-दिवस के निर्वासन-दण्ड के कारण इतने काल तक मैं सागल में नहीं था। केवल संवाद द्वारा ही सागल का वृत्तांत जान पाया। मगध प्रवास के समय देवी अंशुमाला की ख्याति सुनकर स्वदेश के मार्ग में देवी के दर्शन की इच्छा से चला आया। जो देख रहा हूँ, कल्पनातीत है।"[2]

इसी प्रकार 'अमिता' उपन्यास के वासल के कथन को भी देखा जा सकता है- "सब गया। किस कुघड़ी में यह सार्थ भेजा था। धूर्त ज्योतिषी त्र्यंबक ने कहा था, यह अपूर्व लाभ

की लग्न है। नक्षत्र भी धोखा दें तो कहाँ त्राण मिल सकता है। यह महामात्य तो सर्व वै पूर्वग्वं स्वाहा करेगा।"[3]

'अप्सरा का शाप' उपन्यास की पात्र अनुसूया का यह कथन भी यशपाल की संस्कृतनिष्ठ भाषा का उदाहरण है- "महाराज, विशालमति नीतिज्ञों की ऐसी विस्मृति से तो माया का भ्रम होता है। हम तीनों अल्पमति तो महाराज के रूप, मुद्रा, कण्ठस्वर, सब कुछ पहचान रहे हैं और महाराज को, आश्रम कन्या के प्रति अनुराग की अधीरता में कूप से स्वयं जल कलश खींचकर वाटिका सींचने की इच्छा, शकुंतला के स्नेह के लिए आश्रम के पोष्य कुरंङ्ग से स्पर्धा, शकुंतला के पाणिग्रहण की इच्छा से माता गौतमी के सम्मुख प्रार्थना, शकुंतला के गर्भ से अपने पुत्र को राज्य का उत्तराधिकार देने की प्रतिज्ञा, इसके साथ अनेक दिवा-रात्रि का सहवास, इसे सम्मान पूर्वक राजप्रासाद में बुला लेने का आश्वासन, सब कुछ विस्मृत हो गया!"[4]

उपर्युक्त उद्धरणों से यह स्पष्ट होता है कि यशपाल अपने उपन्यासों में संस्कृतनिष्ठ भाषा का प्रयोग कर तत्कालीन वातावरण का सजीव चित्रण करते हैं।

यशपाल के उपन्यासों में अंग्रेजी वाक्यों एवं शब्दों के प्रयोग भी दिखाई पड़ते हैं। इसका कारण यह है कि उनके द्वारा रचित राजनैतिक एवं सामाजिक उपन्यासों के कई पात्र उच्च शिक्षित हैं। इसी कारण उनकी भाषा में अंग्रेजी शब्दों तथा कहीं-कहीं अंग्रेजी के पूरे-पूरे वाक्यों का प्रयोग दिखाई पड़ता है। उदाहरण के तौर पर 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास के पात्र अमर के कथन को देखा जा सकता है- "जब देखो तब क्या, मौका होने पर सिर्फ इतवार शाम को जाता हूँ। उसकी समझ-बूझ अच्छी है। समाजवाद में बहुत **इंटरेस्ट** ले रही है। **शी कैन बी ग्रेट हैल्प टु द कॉज।**"[5]

इसी क्रम में 'झूठा सच' उपन्यास के पात्र असद द्वारा तारा से कहे गये इन वाक्यों को भी देखा जा सकता है- "ठीक कह रही हो तुम। हम सब जानते हैं, हमारे यहाँ औरतों की किस्मत **पेन एण्ड टीयर्स** (पीड़ा और आँसुओं) से भरी है। जान की बाजी लगाकर भी इन जंजीरों को तोड़ना होगा, लेकिन इस वक्त शादी-ब्याह की **इंडीवीजुअल प्राब्लेम** (वैयक्तिक समस्या) से पहले **पीपुल एण्ड नेशन** (समूह तथा राष्ट्र) का सवाल है। **वी आर आल इन डेंजर** (सभी का जीवन जोखिम में है)। इस मुश्किल से पार हो जायें तभी हम अपनी समस्याओं को सोच सकेंगे।"[6]

इसी तरह 'क्यों फँसे' उपन्यास में भास्कर और हेना के संवाद को देखा जा सकता है-

भास्कर- "तुम्हारी संगति का दुर्लभ रस पा रहा हूँ। **यू आर सो चार्मिंग**! तुम जरूर बोर हो रही हो।"[7] इसके प्रत्युत्तर में हेना कहती है- "**नो डियर**।"[8]

इसके अलावा भी **डेमोक्रेटिक**, **स्टडी**, **इनविजिलेशन**, **सिम्पेथाइजर**, **आल्टरनेटिव**, **रेस्तराँ**, **एक्सीडेंट,** आदि अनेक अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग यशपाल अपने उपन्यासों में करते हैं।

यशपाल अपने उपन्यासों की भाषा को सहज एवं स्वाभाविक बनाने के लिए अरबी-फारसी के **मर्दानगी**, **रोजगार**, **मुजरिम**, **हर्जाना**, **फरेब**, **तहकीकात,** आदि शब्दों का प्रयोग भी करते हैं।

यशपाल अपने उपन्यासों में पात्रानुकूल भाषा का व्यवहार करते हुए दिखाई देते हैं। वे अपने उपन्यासों में हिन्दू पात्रों से हिन्दी, मुसलमान पात्रों से उर्दू, ब्राह्मण पात्रों से संस्कृत कहलवाते हैं। इसके साथ ही उनके उपन्यासों में भारत के अहिन्दी प्रदेश के पात्रों के हिन्दी संवाद में उनकी अपनी भाषा का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। 'दिव्या' उपन्यास का ब्राह्मण

पात्र रुद्रधीर संस्कृत के शब्दों का प्रयोग अधिक करता है। उदाहरण के तौर पर रुद्रधीर द्वारा अंशुमाला से कहे गये इस कथन को देखा जा सकता है- "भद्रे, मेरे समीप तुम आज भी श्रेष्ठ विप्रकुल की कुमारी हो। तुम्हारा स्थान विप्रकुल की वधू-लक्ष्मी के आसन पर है। सात वर्ष पूर्व आचार्य अग्रहार रुद्रधीर तुम्हारे पाणि के लिये तुम्हारे परिवार के सम्मुख प्रार्थी था। देवी, आज तुम स्वतंत्र हो इसीलिये रुद्रधीर तुम्हारे ही सम्मुख पाणिपार्थी है। रुद्रधीर सागल की कुलश्री को पुन: सागल पहुँचा कर सागल को भाग्यवान करेगा।"[9]

इसी प्रकार भाषा को सहज एवं स्वाभाविक बनाने के लिए यशपाल ने अपने उपन्यास के मुसलमान पात्र से उर्दू कहलवायी। 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास का रज़ा एक मुसलमान पात्र है। रज़ा अपने विवाह के संबंध में अमरकांत से कहता है- "खुदा की कुदरत में बड़े-बड़े करिश्मे हैं। हमारा खयाल है, खुदा ने मिया शमसुद्दीन की परेशानी में इमदाद के लिये हमें मुफलिस बनाया और हमारे दिल में डाक्टरी तालीम का अरमान पैदा कर दिया, मियाँ शमसुद्दीन का जरखरीद दामाद बना देने के लिये।"[10]

इसी प्रकार 'मनुष्य के रूप' उपन्यास का मजहर एक मुसलमान पात्र है। वह धनसिंह को समझाते हुए कहता है- "बेटा, मालिक से झगड़ा करना खुदा के इंसाफ से मुनकिर होना है। अल्लाह सब देखता है। सब्र करो। मालिक से माफी माँगकर उसकी सजा बर्दाश्त करो। खुदा इंसाफ करेगा। मालिक के दिल में रहम देगा!"[11]

उपन्यास में अहिन्दी भाषी लोगों द्वारा बोली गयी हिन्दी में उनकी अपनी भाषा की झलक दिखाई देती है और उनकी हिन्दी टूटी-फूटी होती है। देशद्रोही उपन्यास का पात्र मराठे ऐसा ही एक पात्र है। मराठी होने के कारण उसकी हिन्दी में मराठी भाषा का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है- "कौन कहता है, मिलें मजदूर का नई है? मजदूर मेहनत नहीं करेगा तो मालिक मुनाफा किधर से करेगा? मुनाफा नई होने से मिल किधर से बनेगा?

मजदूर की मेहनत की कमाई को जमा कर मालिक मिल बनायेगा तो मिल मजदूर का होगा कि मालिक का? आपका यह अँग्रेज सरकार हिंदुस्तान को जब स्वराज देगा तो क्या इतना रेल और सरकारी इमारत हिंदुस्तान के रुपया से बनाया, वो सब विलायत उठा ले जायेगा?"[12]

इसी प्रकार 'मनुष्य के रूप' उपन्यास का भूरे सिंह हरियाणा का रहने वाला है। उसकी भाषा में हरियाणवी का पुट दिखाई देता है- "ये क्या गिट्ट-पिट्ट करो हो जी? सिद्धे-सिद्धे अपणी बोल्ली में बोल्लो, हमारी भी समझ माँ आवे। अपणे भाइयाँ ते किस बात का पर्दा है जी! जणता ही हमारी बात नई समझेगी ताँ क्याँ अंग्रेजों के समजाणे खातिर अंग्रेजी माँ गिट्ट-पिट्ट मारो हौ!"[13]

ड्राइवर और मजदूरों की भाषा सामान्य जनों की भाषा से थोड़ी भिन्न होती हैं। उनकी भाषा में गाली-गलौज के शब्द ज़्यादा होते हैं। यशपाल के 'मनुष्य के रूप' उपन्यास में चित्रित ड्राइवर कुंदनसिंह ऐसा ही पात्र है। उसकी भाषा में गाली-गलौज और अश्लील शब्दों का प्रयोग दिखाई देता है। वह धनसिंह से कहता है- "माँ के...हमें बनाता है। बहन... के इसीलिये बहाने से घर पर बीमारी की छुट्टी ली थी। दूसरे तेरी जगह एवजी देकर मरें और तू माँ का छिनरा करता फिरे। इसी करतूत में मोटर तोड़ी थी बहन....हरामी के पिल्ले!"[14]

यशपाल के उपन्यासों में स्थानीय भाषा का प्रयोग भी दिखाई देता है। इसका कारण यह है कि यशपाल ने अपने उपन्यासों में जिन स्थानों का चित्रण किया है, उन स्थानों की भाषा का प्रयोग अपने पात्रों के जरिए करवाया है। 'देशद्रोही' उपन्यास के पात्र डॉ. खन्ना का वजीरियों द्वारा अपहरण कर उन्हें वज़ीरिस्तान ले जाया जाता है। वह वहाँ से भागकर रूस के रास्ते भारत वापस आता है। इसलिए इस उपन्यास में वज़ीरिस्तान की पश्तो

भाषा के शब्द एवं उनके छोटे-छोटे वाक्य और रूसी भाषा के शब्दों का प्रयोग यशपाल ने किया है। उदाहरणस्वरूप वज़ीरिस्तान के एक अधेड़ उम्र के वजीरी का कथन देखा जा सकता है- "तुम चीटी लिखेगा अपने आदमी को। हमको तुम्हारा फिदिया मिलने से तुमको बन्नु, कोहाट, डेरा इस्मीलखाँ जहाँ बोलेगा, छोड़ देगा। नहीं हम तुमको गजनी बेच देगा।"[15]

इसी क्रम में बूढ़ा जमानगुल द्वारा डॉ. खन्ना से कहे गए कथन को देखा जा सकता है- "**वल्लटो विल (भाग जाना चाहता है?)**"[16]

इसके अलावा इस उपन्यास में **तबीयत खत**? (कैसा हाल है), **खैरयुस**? (सब ठीक है), **ढेर डरां लड़ई** (डरपोक आदमी), **पड़दूक** (शलवार), **इब्लिस** (शैतान), **खबरदोश** (गधे का बच्चा), **हिश्त बोदा** (नामर्द), आदि शब्दों का प्रयोग भी यशपाल करते हैं।

इसी क्रम में इस उपन्यास के वाक्यों में रूसी भाषा के शब्दों के प्रयोग को देखा जा सकता है- "विद्यार्थी समय पाकर टोलियाँ बाँध, लारियों पर चढ़कर सौ-सौ मील दूर के कोलखोज (संयुक्त कृषि के गाँव) या सोवखोज (सरकारी खेती के केंद्र) में सहायता के लिये चले जाते।"[17]

इसके अलावा **बिलेत** (पासपोर्ट), **रेवोल्यूत्सनेई इंदुस्की तावारिश** (भारतीय क्रांतिकारी साथी), **बागेस** (बूर्जुआ), आदि रूसी शब्दों का प्रयोग भी इस उपन्यास में किया गया है।

'मनुष्य के रूप' उपन्यास काँगड़ा जनपद की पृष्ठभूमि में लिखा गया है। इसलिए इस उपन्यास में पहाड़ी बोली के शब्दों का प्रयोग दिखाई देता है। उदाहरणस्वरूप सोमा की

सास के इस कथन को देखा जा सकता है- "हाय लड़की भी तो स्यानी है। उसकी **समरेढ़ों** के (सम-वयस्काओं के) दो-दो हो चुके।"[18]

इसके अलावा **लाड़ी** (बहू), **पड़तनी** (घुटनों तक का अँगौछा), **घराट** (पनचक्की), **मियाँ** (अमीर राजपूतों), **बट्टे** (बदले), **तिहाजू** (तीसरा ब्याह), आदि पहाड़ी बोली के शब्दों का प्रयोग यशपाल इस उपन्यास में करते हैं।

इसी प्रकार 'झूठा सच' उपन्यास में पंजाब तथा उसके आस-पास के कुछ स्थानों का चित्रण है। इसी कारण यशपाल ने इस उपन्यास में पंजाबी भाषा के शब्द एवं वाक्यों का अत्यधिक प्रयोग किया है। उदाहरण के तौर पर तारा के इस कथन को देखा जा सकता है- "बड़ा कोयदा (बिगड़ा) है। घूरता रहता है। जीने में मिल जाये तो छेड़ने लगता है। मैं डाँट देती हूँ- फिटे मुँह! लानत है! सिरसड़या (कपाल-फूटा) मुझे छू तो! चीख मारकर तेरी माँ से कह दूँगी।"[19]

इसी क्रम में बसंत कौर के कथन को भी देखा जा सकता है- "गुरु महाराज कक्ख न छड्डे (तिनका भी न बचे) इन ज़ालिमों का।"[20]

इसके अलावा भी **जी आयांनू** (आगत को स्वागत), **रुड़पुढ़जाणे** (बेड़ा बह जाये), **भाइया** (पिता), **गभरू** (पति), **कुड़माई** (सगाई), **बताऊ** (बैगन), **तास्सियाँ** (तश्तरियाँ), आदि अनेक पंजाबी शब्दों का प्रयोग किया गया है।

यशपाल अपने उपन्यासों की भाषा में सजीवता एवं सुंदरता लाने के लिये अलंकार का प्रयोग करते हैं। अलंकार के प्रयोग के कारण उपन्यासों की भाषा की रमणीयता में वृद्धि होती है। कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं-

उपमा अलंकार

1."शिवनाथ गरम तन्दूर की भाँति सन्ना रहा है।"[21]

2."गरमी में तवे की तरह तपने वाली उसकी कोठरी जाड़े में खूब ठंडी हो गई।"[22]

उत्प्रेक्षा अलंकार

1."ऐसा मालूम हुआ जैसे बरसाती मेंढकों के समूह पर चील आ पड़ी हो।"[23]

यशपाल अपने उपन्यासों में मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग सूक्ष्म एवं जटिल भावों की सरल अभिव्यक्ति के लिये करते हैं। उनके द्वारा प्रयुक्त मुहावरे और लोकोक्तियों के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं:

मुहावरे

1. "तुमने अपने आपको बलिदान कर सब सहा, अब उसके प्रति विद्रोह भी करो तो क्या कर सकती हो? जब तक जीवन के संघर्ष में **अपने पैरों पर खड़े होने** का साधन तुम्हारे पास न हो...।"[24]

2. "चंदा खन्ना को भय से बचाने के लिए **प्राणों की बाजी लगाकर** अपने आपको प्रत्येक पद पर भय के मुख में झोंकती जा रही थी।"[25]

3. "उसे यों जाते देख यशोदा का **हृदय मुँह को आने लगा**; ठीक उसी तरह जैसे उदय को छत की मुड़ेर पर झुकते देखकर वह काँप उठती थी।"[26]

4. "हमारे भाग्य फूट गये लाखों की सम्पत्ति छोड़ कर दूसरों की रोटी के मोहताज हो रहे हैं। इनके फैशन तो देखो! सब कुछ फैशनों में उड़ जाता है। मुँह पर पाउडर-क्रीम जरूर चाहिये, चाहे **पेट में चूहे कूदते रहें**।"[27]

5. “शत्रु के आक्रमण का प्रतिरोध न हो सकने से न केवल उत्तर टेकरी की प्रजा की रक्षा न हो सकेगी, अपितु सम्पूर्ण राजधानी की प्रजा आततायी के **पाँव तले कुचल दी जायेगी**।”[28]

6. “दादा के **पैरों तले जमीन खिसक गयी**, वे हैरान थे। स्त्री के प्रति सभ्यता के ख्याल से वे अपमान को पी गये। अपने निश्वास को रोक मूँछों को दाँत से काटते हुए उन्होंने पूछा- क्यों, आप पार्टी की मेम्बर नहीं? पार्टी की मेम्बर होकर आपको डिसिप्लिन में रहना होगा।”[29]

7. “भावरिया की उत्तेजना फिर भड़क उठी। उसे वश कर, भावाजी से **आँखे चुरा** उसने उत्तर दिया, अब जैसे बाजार वालों की राय हो। हम तो सबके साथ हैं।”[30]

8. “ऐसे नुकसान की मार कौन सह सकता है। हम तो मजबूरी में अपना **पेट काट कर** देते हैं। हम नाजायज फायदा क्या उठा लेते है?”[31]

9. धर्म के नाम पर इन जालिमों ने हमारे कितने ही हिन्दू बहु-बेटियों का **बेड़ा गर्क कर दिया** है।’[32]

10. “अमरो की सेवा के लिये ननद गंगा और हरलाल की बहु अपने पति और बेटे की सेवा की कृतज्ञता में उसकी खाट के समीप बनी रही। अमरो बच न सकी। सेठ जी **सिर पीटकर रह गये**।”[33]

लोकोक्तियाँ

1. “सुना नहीं, मैं क्या कह रहा हूँ?” कोठर स्वर में राजाराम ने धमकाया, ‘**सौ दिन चोर का तो एक दिन साहु का** भी आता है।’[34]

2. तेरा तन-मन सेवा के लिये है, प्रेम के लिये नहीं। तू राजप्रसाद के दासों के नियामक-दण्डक से अभिमान करती है। बेटी, **जल में रहकर मगर से बैर** नहीं निबहता।'[35]

3. "यहाँ तक कि भारत सरकार की प्रतिनिधि सर्वशक्तिमान पुलिस का भी साहस न था कि पदमलाल को **गाजर-मूली की भाँति उखाड़ फेंक** देती।"[36]

4. "अनुसूया ने सराहना में हास्य से समर्थन किया-"साधु! **सौ स्वर्णकार की तो एक लोहकार की**! अच्छा बेटियों, अब कलह समाप्त करो।"[37]

5. "भद्र, **कंचन की खान से लौह उत्पन्न नहीं हो सकता**। वंश और कुल मनुष्य की शक्ति से ऊपर देवता की कृति है। मनुष्य न कुल दे सकता है, न कुल ले सकता है। तुम्हारी धमनियों में विप्र का रक्त है। **कीचड़ में गिर कर स्वर्ण पत्थर नहीं हो सकता**। रुद्रधीर प्रतिज्ञा करता है, सागल के आचार्य पद पर वह तुम्हें पत्नी रूप में ग्रहण करेगा।"[38]

6. "तुम गरीब मजदूर की क्या सहायता करोगे?...**नंगा नहाये तो निचोड़े क्या**? उल्टा उन्हीं का तो पैसा खाते हो!"[39]

7. "हम तभी कह रहे थे, बेमतलब यह मुसीबत साथ ले आई। इसे वहाँ करना क्या है? वहाँ इतने बड़े-बड़े पड़े हैं। जाकर लीडरी करेंगी! **ऊँट दग रहे थे मेंडकी को भी शौक चर्राया, हमारे भी दाग लगा दो**।"[40]

8. "भाई, लाला कहते तो ठीक हैं।" रेवाचन्द ने पुत्तू का हाथ थामे ही आँख फैलाकर कहा, "**हाथ कंगन को आरसी क्या**?... अब देखो बेगम साहिबा खान साहब की बदौलत मौजूद हैं।"[41]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के अनूदित उपन्यासों में भी तत्सम शब्दों का प्रयोग कुछ स्थानों पर दिखाई देता है। लेकिन ऐसे शब्दों की संख्या कुछ कम दिखाई देती है। मूल असमिया उपन्यासों में संभवतः तत्सम शब्दों की संख्या अधिक हो। इसका कारण यह है कि असमिया भाषा के शब्द भंडार में संस्कृत भाषा के ढेर सारे शब्द शामिल हैं। लेकिन अनूदित उपन्यासों में तत्सम शब्दों की बहुलता दिखाई नहीं देती। इसका कारण संभवतः यह है कि अनुवादकों ने उपन्यासों की भाषा को आम बोलचाल की भाषा के नजदीक रखने का प्रयास किया है, जिससे उपन्यास की भाषा बोझिल न हो। अनूदित उपन्यासों में जिन तत्सम शब्दों का प्रयोग किया गया है, वह भी ऐसे शब्द हैं जो कि आम बोलचाल की भाषा में प्रयुक्त होते हैं।

उदाहरण के तौर पर 'अँधेरा-उजाला' उपन्यास की इन पंक्तियों को देखा जा सकता है:

"वह तो **अंतर्यामी** ही जानता है- सेउती ने **आकाश** की ओर देखते हुए जवाब दिया"[42]

"खाउण्ड के बागान की ओर जो जमीन **अधिग्रहण** कर ली गयी है, उस पर गजेन शर्मा ने रचानात्मक कामों का एक केंद्र स्थापित किया।"[43]

इसी क्रम में 'माँ' उपन्यास की इन पंक्तियों को देखा जा सकता है:

"इस **वयस्क** आदमी के इस **उज्ज्वल** व्यक्तित्व के सामने जवान की **क्षीण**, **अपरिपक्व** और लड़की की तरह दिखने वाली देह बिल्कुल **निष्प्रभ** हो गई है।"[44]

"**गृहस्थ** का **अन्न-जल** ग्रहण करना संन्यासी को शोभा नहीं देता है।"[45]

इसके अलावा भी **ग्राम**, **निशाचर**, **विश्राम**, **रात्रि**, **कर्णफूल**, **अकस्मात्**, **गुप्तचर**, **विदीर्ण**, आदि प्रचलित तत्सम शब्दों का प्रयोग बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के अनूदित उपन्यासों में दिखाई पड़ता है।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के हिन्दी में अनूदित उपन्यासों में अनुवादकों ने असमिया भाषा के कुछ शब्दों का भी प्रयोग किया है। असमिया से हिन्दी में अनूदित होने के कारण असमिया के शब्दों का प्रयोग होना स्वाभाविक ही है। उपन्यासों में असमिया भाषा के जिन शब्दों का प्रयोग किया गया है, उनमें से ज्यादातर वैसे शब्द हैं जो असमिया संस्कृति, रीति-रिवाज, आदि को प्रकट करते हैं। हालाँकि असमिया न जानने वाले पाठकों को भाषा बोझिल न लगे, इसी कारण अनुवादक ने इन असमिया शब्दों के अर्थ भी उपन्यास में दे दिए हैं। उदाहरण स्वरूप 'अँधेरा-उजाला' उपन्यास की इन पंक्तियों को देखा जा सकता है-

"गाँव में चुने हुए अभिनेताओं और **बायन** आदि को लेकर रमाई मुक्तियार चौथे दिन **नामघर** में गुरुजन का पारिजात हरण नाटक मंचस्थ करना चाहता था।"[46]

इसी क्रम में 'माँ' उपन्यास की इन पंक्तियों को भी देखा जा सकता है-

"पगहा यदि न मिले तो गौ-बिहु नहीं होगा। यह बात बापुकन याद रखो!"[47]

इसके अलावा भी उपन्यासों में **खोल**, **साँको**, **थुरिया**, **बाड़ी**, **आलि**, **बेज**, **सत्-पथ, पछुवा, बाइदेउ, तालिका** आदि असमिया शब्दों का प्रयोग किया गया है।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास 'मृत्युंजय' में असम की क्षेत्रीय भाषा जैसे मिकिर भाषा के कुछ शब्दों का प्रयोग भी किया गया है। उदाहरणस्वरूप यह पंक्ति द्रष्टव्य है- "डिमि के गले में 'लेक' पड़ी होती, कानों में 'काडेङ सिन्रो', कलाइयों में 'रॅई', वक्ष पर 'जिन्सो'; और कटिभाग पर लपेटे रहती रंगीन 'पिनि'। धनपुर ने उसी से पूछ-पूछकर ये सब नाम याद किये थे।"[48]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों को अनूदित करते हुए अनुवादकों ने भाषा को आम बोलचाल के निकट रखने का प्रयास करते हुए उपन्यासों में अरबी, फारसी के शब्दों जैसे चिट्ठीरसा, अलाव, कब्रगाह, मुहब्बत, आदि प्रचलित शब्दों का प्रयोग भी किया है।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य अपने उपन्यासों में अंग्रेजी भाषा के शब्दों का प्रयोग भी करते हैं। उपन्यासों में प्रयुक्त अंग्रेजी शब्द ज्यादातर आम बोलचाल में प्रचलित शब्द हैं। ऐसे अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग उपन्यास को यथार्थवादी और सुंदर ही बनाता है। उदाहरण के तौर पर 'मृत्युंजय' उपन्यास के एक प्रसंग को देखा जा सकता है- "कमरे में लौटा तो कॅली दीदी ने कहा, 'जा, देखकर आ **डिस्पेन्सरी** में **डॉक्टर** हैं या नहीं। हों तो बुला लाना।' मुझे नाक पर रूमाल रखते देखा तो झिड़कते हुए बोलीं, 'एक की गन्ध से यह हाल? **मिलिटरी** और **पुलिस** ने तो न जाने ऐसी कितनी-कितनी बेचारियों का सर्वनाश किया है।"[49]

इसके साथ ही 'अँधेरा-उजाला' उपन्यास में परिस्थिति और पात्र के अनुसार अंग्रेजी भाषा के पूरे वाक्य का प्रयोग भी एक-दो जगहों पर दिखाई पड़ता है। उपन्यास के उच्चवर्गीय शिक्षित पात्र नंदन की भाषा को देखा जा सकता है-"मीनधर, तुम सबके विचार में इन्दिरा गाँधी की यह **इमरजेन्सी** आखिर है क्या? आइधन की तो उससे भी कहीं बढ़कर है। **नो फ्रीडम आफ स्पीच, नो राइट आफ मूवमेंट, नो राइट इवन टु बाइ ड्रग्स!**"[50] आगे फिर वह कहता है-"जानबूझकर अनजान बनने का नाटक बुरा है। तुम **इन्टलेक्चुएल**- माने बुद्धिजीवी ठहरे। **एन इन्टलेक्चुएल दैट डू नॉट सी। हिपोक्रेसी, दाइ नेम इज मीनधर**।"[51]

इसके अलावा उपन्यासों में **रिवाल्वर**, **ऑफिस**, **एक्स रे**, **पोस्ट-ऑफिस**, **प्रीमियम,** आदि अंग्रेजी के प्रचलित शब्दों का प्रयोग भी मिलता है।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य अपने उपन्यासों में भाषिक सौंदर्य लाने के लिए अलंकारों का प्रयोग भी करते हैं। अलंकार के प्रयोग से उपन्यास की भाषा सुंदर और सजीव बन गयी है। उपन्यासों में इनके द्वारा प्रयुक्त अलंकारों के कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं-

उपमा अलंकार-

1. "कुमुदिनी की पंखुड़ी की तरह उसकी आँखें सदा के लिए बंद हो चुकी थीं।"[52]
2. "आकाश टिड्डे के पंख जैसा फैला था: हल्का पीताभ और कुछ-कुछ लालिमा लिये।"[53]
3. "कंदर्प जैसा चेहरा-मोहरा।"[54]

उत्प्रेक्षा अलंकार-

1. "इस असुर के अट्टहास से आदमी का हृदय मानो विदीर्ण हो गया है।"[55]
2. "सींगे का सुर उसके भीतर में पैठ जाएगा- मानो मधुमक्खी के छत्ते में घुसकर उससे रस खींच लाएगा।"[56]
3. "जगह तो मानो सामरिक घाटी।"[57]

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में असमिया के कुछ मुहावरों एवं लोकोक्तियों के प्रयोग भी दिखाई पड़ते हैं। अनुवादकों द्वारा अनूदित उपन्यासों में असमिया की लोकोक्तियों को हिन्दी में अनूदित कर उसका प्रयोग किया गया है, परंतु उसके भाव में कोई अंतर नहीं आने दिया गया है। अनुवादकों द्वारा लोकोक्तियों को अनूदित करने का कारण संभवतः यह है कि हिन्दी पाठक को वह आसानी से समझ में आ सके। उपन्यासों में प्रयुक्त मुहावरों और लोकोक्तियों के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं-

मुहावरा

"मेरे तो हित-अहित की सोच-सोचकर आपको अपना दिमाग खराब करने की क्यों सूझी? पहले आपने यह भी सोचा है कि आपने अपने को कितना पतित बना लिया है। मैंने अपने पति से कहा था- **अतिदर्पे हतेलंका**।" [58]

लोकोक्तियाँ

1. "मधु का चिंताग्रस्त मन भी अब जैसे अचानक आयी बाढ़ से उद्वेलित हो उठा था।...उसे निर्णय कर पाना कठिन हो गया था कि इनमें से किसे अंगीकार करे। इतना सच था कि अब सुख का परिवारी जीवन बिताने की स्थिति तक नहीं रह गयी थी। तभी एक कामरूपी कहावत याद हो आयी: **कहा लाने को पेटला, दिया लाकर धनुष**।"[59]

2. "लड़का पिण्डदान कर सकता, और लड़की होती तो रो-पीट लेती, कुल की एक निशानी भी रह जाती। संसार में और कुछ अपना रह ही क्या जाता है। '**खेती का फल धान, संसारी का फल संतान**' ।"[60]

3. "हे कृष्ण, आपकी यह बात भी एकदम सही है। **सेम लता का ओर-छोर पाना बड़ा मुश्किल होता है।**"[61]

4. "मीनधर ने कहा-उसे पुराने संस्कारों का मोह छोड़ना होगा।'**चावल भी सीझे, और मीत भी रहे**' दोनों बातें एक साथ नहीं चल सकतीं।"[62]

5. "आतन बूढ़ागोहाईं की उक्ति याद है आप लोगों को? **घरूवा पोखर का पानी उलीचने में सिंघी मछली भी आठ-दस व्यक्तियों को बींध लेती है**।"[63]

6. “मगर हमारी बेटी को अब ‘ढोकिया’ खाने में मशहूर बनकर ही संतोष करना पड़ा है। मीनधर समझे न, यहाँ तो सब-कुछ सड़ता है, मुरझाता है। **मंदार का फूल, न गुरु को चढ़े, न भकत को भाये। सिर्फ नीचे झड़कर बिखर जाए**।”[64]

इसके अलावा हिन्दी में अनूदित होने के कारण अनूदित उपन्यासों में हिन्दी के कुछ मुहावरों और लोकोक्तियों का भी प्रयोग हुआ है-

मुहावरे

1. “विवाह के पहले पिता आदि ने लड़की का सारा पता-ठिकाना लगाया, ज्योतिषी से गणना भी मिलवायी, मगर लड़की के जीवनादर्श से लड़के के जीवनादर्श का मेल रहेगा या नहीं, इसका पता नहीं लगाया। इसी कमी के कारण यह अनहोनी हो गई। माँ-बाप को जब इस बात का पता चला, उनके **सिर पर आसमान टूट पड़ा**।”[65]

2. “मीनधर के विचार से असम के धर्मगुरू और पंडित लोग अब भी रूढ़िवादी ही बने हुए हैं। किसी तरह की क्रांतिकारी व्यवस्था के लिए उनके यहाँ जाना **छत पर ऊँट खोजने** जैसा ही है।”[66]

3. “यही न कि मैं मर जाऊँगा? मरना तय है तो मरूँगा ही। ऐसा कहने में कुछ लगता नहीं, किंतु सोचते ही **हृदय काँप उठता** है। कोई भी मरने के लिए तैयार नहीं होता।”[67]

लोकोक्ति

1. “शहरी आदमी केवल देखने में ही फिट-फाट हैं। दरअसल वे बड़े डरपोक हैं- ‘**ऊपर से फिट-फाट, भीतर से मोकमाघाट**’।”[68]

उपर्युक्त विचार विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों के उपन्यासों में तत्सम शब्दों का प्रयोग दिखाई पड़ता है। परंतु बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य की तुलना में यशपाल के उपन्यासों में तत्सम शब्दों का प्रयोग अधिक दिखाई देता है, खासकर 'दिव्या', 'अमिता' और 'अप्सरा का शाप' उपन्यासों में। इन दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में स्थानीय भाषा का प्रयोग भी दिखाई देता है। इसके साथ ही इन दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में विदेशी शब्दों का प्रयोग भी अवसरानुकूल कुछ जगहों पर किया गया है। एक ओर जहाँ बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में अंग्रेजी और अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग मिलता है, वहीं यशपाल अपने उपन्यासों में अंग्रेजी, उर्दू, रूसी, पश्तो के शब्दों का प्रयोग करते दिखाई देते हैं। यशपाल के उपन्यासों में अंग्रेजी शब्दों के साथ कहीं-कहीं अंग्रेजी के पूरे-पूरे वाक्य भी दिखाई देते हैं। वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास 'अँधेरा-उजाला' में बस एक ही पात्र के जरिए पूरे उपन्यास में एक-दो स्थान पर ही अंग्रेजी के पूरे वाक्य दिखाई देते हैं। बाकी अन्य उपन्यासों में अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग भले ही दिखाई देते हैं, परंतु अंग्रेजी के पूरे-पूरे वाक्य दिखाई नहीं देते। इसका कारण यह है कि उनके उपन्यासों के ज्यादातर पात्र ग्रामीण हैं। इन दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में कहीं-कहीं आलंकारिक भाषा का प्रयोग भी किया है। इसके साथ ही इन दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग भी मिलता है। लेकिन बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग सीमित है। यशपाल ने जहाँ अपने उपन्यासों में हिन्दी के मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग किया है, वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के अनूदित उपन्यासों में असमिया के कुछ मुहावरों और असमिया की कुछ लोकोक्तियों का प्रयोग हिन्दी में अनूदित कर किया गया है। परंतु अनुवादकों ने उसके भाव में कोई अंतर नहीं आने दिया है। साथ ही उपन्यासों के हिन्दी में अनूदित होने के कारण कुछ हिन्दी मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग भी किया गया है। अत: यह कहा जा सकता है कि इन दोनों ही उपन्यासकारों के

उपन्यासों की भाषा सहज, सरल और प्रवाहपूर्ण है। लेकिन बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों की भाषा की तुलना में यशपाल के उपन्यासों में भाषाई विविधता अधिक दिखाई पड़ती है।

5.2 कथा-शिल्प

रचनाकार जिस पद्धति के माध्यम से किसी रचना को सुव्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करता है, उसे शिल्प कहा जाता है। इसे ही अंग्रेजी में 'टेकनीक' कहा जाता है। किसी भी रचना की 'कथा' उस रचना की आत्मा होती है। साहित्यकार कथा को व्यवस्थित रूप से पाठकों के सामने जिस रीति या पद्धति से प्रकट करता है उसे कथा का शिल्प कहा जाता है। गोपाल राय के अनुसार- "उपन्यास के लिए जरूरी है कि उसकी कथा 'प्रस्तुत' की जाए। उपन्यास को प्रस्तुत करने की प्रविधियों को ही उपन्यास शिल्प की संज्ञा प्राप्त होती है।"[69] प्रस्तुत उप-अध्याय में यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों के कथा-शिल्प को समझने एवं विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

कोई भी उपन्यासकार अपने उपन्यास की कथा-वस्तु को नाटकीय रूप देने के लिये अपने उपन्यासों में दृश्यात्मक और परिदृश्यात्मक प्रविधियों का प्रयोग करता है। दृश्यात्मक प्रविधि में उपन्यासकार अपनी ओर से कुछ नहीं कहता, बल्कि पात्र के संवाद के माध्यम से ऐसा चित्र खींच देता है, जिससे सबकुछ पाठक की आँखों के सामने घटित होता हुआ प्रतीत होता है। परिदृश्यात्मक प्रविधि में कथा में उपन्यासकार की उपस्थिति बनी रहती है। यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य अपने-अपने उपन्यासों में दृश्यात्मक और परिदृश्यात्मक इन दोनों ही कथा-प्रविधियों का प्रयोग करते दिखाई देते हैं। यशपाल के 'अप्सरा का शाप' उपन्यास में प्रियंवदा द्वारा दुष्यंत का नाम लेकर अपनी सखी शकुंतला को छेड़ने के प्रसंग में दृश्यात्मक प्रविधि का उदाहरण देखा का सकता है-

प्रियंवदा ने शकुन्तला को बाहु से अपनी और खींचा, मुख उसके कान से लगाकर पूछा- "नागरिक को स्मरण कर रही हो?"

"हट!" शकुन्तला ने धीमे निश्वास में कहा।

"सच मान, उसकी दृष्टि निरन्तर तेरी ओर थी।"

"मैं क्या जानूँ!"

"उसका रूप तथा व्यवहार संपन्न और विशिष्ट क्षत्रिय का था।"

"तो क्या!"

"हाय तेरी सहायता के लिये कितना आतुर था।...तुझ पर आसक्त था।"

"व्यर्थ परिहास न कर।"

"तेरी स्मृति साथ ले जायेगा।"

"हट!"[70]

इसी क्रम में 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में बाहर के कुछ लोगों द्वारा उषा और नरेन्द्र के संबंध को लेकर कही गयी बातों को लेकर उषा और उसके पति सेठ अमरकांत के बीच हुयी बहस के प्रसंग को भी देखा जा सकता है:

"दूसरे सब जैलेसी में झूठ बकते हैं?"

"राजे, ह्वाट डू यू मीन?" उषा ने घूरकर पूछा, "क्या हो गया है आपको!"

"हमें कुछ नहीं हुआ। हमने जो देखा, जो दूसरों ने देखा-सुना, तुम्हारे प्रति कर्तव्य और अधिकार से तुम्हें सावधान करने के लिये कह दिया।"

"राजे, तुम्हारा अधिकार-कर्तव्य है पर गलतफहमी दूर करना हमारा भी फर्ज। आपको हम पर नहीं, लोगों की बात पर विश्वास ?"

"तुम पर विश्वास है और आपसी हित में तुम्हें सचेत करना भी आवश्यक है।"

"राजे, ये छ: मास जेल की घुटन का असर। चिड़चिड़े हो गये हैं और अकारण भ्रान्तियाँ। धैर्य रखिये, स्वंय देख लेंगे।"

"हम सब देख रह हैं। हमें कैसी घुटन!...हमें अकारण भ्रान्ति और सब लोगों को भी भ्रान्ति। सोचना चाहिए, हमें या लोगों को भ्रान्ति क्यों? भान्ति का कारण दूर होना चाहिये।"

"हम अपनी भावना नहीं जानते?"

"ये तर्क नहीं, जिद्द है। अपने बारे में किसी की राय का कोई मूल्य नहीं होता।"[71]

इसी तरह बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'माँ' उपन्यास में बाछा और बूड़े भगत के बीच के वार्तालाप में दृश्यात्मक प्रविधि का उदाहरण देखा जा सकता है-

'लड़के को भी कुछ हो गया है क्या?' -बाछा ने पूछा।

'उसे सदा उलटी होती है। किसी ग्रह की कोप-दृष्टि पड़ी है।'- बूढ़े भगत ने कहा।

कुछ देर चुप रहने के बाद बूढ़े भगत ने पूछा-'किस लिए आए?'

'माँ ने धान की खोज करने के लिए भेजा है।'

'धान मुहल्ले भर में किसी के पास भी नहीं है। बहुतों के घर कच्चा धान ही खाया जा रहा है। दो-एक के घर में है, किंतु वे देते नहीं।'

'क्यों?'

'मारवाड़ी महाजनों ने पेशगी दे रखी है। चारों ओर उधार-ही-उधार हुआ है-भैया! अम्मा से कहना कि मैं चल-फिर नहीं सकता। लड़कों का स्वभाव ठीक नहीं। दो पाही में हैं, एक सेना में और तीसरा मेरे कहने में ही नहीं रहता।'

बूढ़े भगत को जाड़े के साथ ज्वर हो आया था। यह देखकर बाछा ने कहा-' बूढ़े भगत, जाकर सो जाइए।'[72]

उपर्युक्त पंक्तियों के माध्यम से गाँव की विपन्नावस्था का दृश्य पाठक की आँखों के सामने उभर आता है।

इसी क्रम में 'मृत्युंजय' उपन्यास में गोसाईं और भिभिराम के अपने-अपने क्रांतिकारी दल के लोगों के संबंध में किये गये वार्तालाप को भी देखा जा सकता है-

भिभिराम ने उच्छवास लेते हुए कहा:

"यह तो बड़े खेद की बात हुई।"

"हाँ, लेकिन वे रास्ता देख आये हैं। और जगह भी निश्चित कर ली है।"

"पर काम क्यों नहीं कर सके?"

"मिलिटरी का पहरा रहता है न। सैनिकों को गश्त लगाते देख डर गये।"

"कायर।" भिभिराम ने विरक्ति पूर्वक कहा।

"तुम्हारे आदमी कैसे हैं?"

"भरोसे के और साहसी।"

"ठीक है; खा-पीकर और बातें करेंगे। भोजन लग रहा है। और जयराम सुनो, माणिक बँरा को सोने के लिए तुम अपने घर ले जाना। धनपुर तुम्हारे साथ जाएगा, मधु। इस बीच आज ही रात धनपुर को साथ लेकर शिलडुबी जाना और बन्दूक सहित लयराम को लिवा लाना।"

"लयराम कौन है?" भिभिराम ने पूछा।

"लयराम कोच। बड़ा दुर्जय शिकारी है।"

"अच्छा रहेगा बन्दूक तो हमें चाहिए भी।"[73]

यशपाल के उपन्यास 'झूठा सच' में प्रयुक्त परिदृश्यात्मक प्रविधि का उदाहरण भी द्रष्टव्य है-

"पुरी में काम करने की शक्ति थी और काम करने का उत्साह था। काम करने के लिए उसका मन और मस्तिष्क छटपटा रहे थे, परंतु काम करने का अवसर उससे छीन लिया गया था। काम करने का अवसर छीन लिया जाने का अर्थ, उसे आधा पेट भोजन, अपर्याप्त वस्त्र की कृच्छ्रता और बेरोज़गारी के अपमान की यंत्रणा में सताना था। लाहौर के पत्रों में उसके लिये कोई स्थान न रहा था। उसे लाहौर से बाहर जाकर काम करने का ध्यान आता परंतु बिना किसी आश्वासन के कहीं चल देने का भी साहस न होता था। पुरी ने अपने आपको सँभाला।'पैरोकार' में नौकरी आरम्भ करने के समय की अपेक्षा अब साहित्य, पत्रकारिता और प्रकाशन के क्षेत्र में उसका नाम अधिक था। उसने स्वतंत्र रूप से पत्रकारिता का काम करने का निश्चय किया।"[74]

इस तरह 'गीता' उपन्यास की इन पंक्तियों को देखा जा सकता है-

"गीता दिन भर घर से उड़ी रहकर पार्टी का साहित्य बेचती और चंदा माँगती। वह रिसर्च-स्कालर थी, इसीलिए कालेज जाना केवल नाम को था। जगह-जगह उसे अनेक प्रकार का व्यवहार मिलता, अनेक प्रकार के उत्तर मिलते। प्रति शनिवार दोपहर के बाद गीता पार्टी के दफ्तर जाती थी।...पिछले सप्ताह की कापियों का हिसाब देकर, नई कापियाँ लेती और चन्दा भी जो कुछ मिला होता दे आती। चन्दे का हिसाब था मजहर के हाथ में और अखबार का हिसाब मेघनाथ रखता था।"[75]

इस तरह की परिदृश्यात्मक प्रविधि का प्रयोग उनके सभी उपन्यासों में मिलता है। इसमें लेखक स्वयं एक नैरेटर की तरह उपन्यास की कथा अथवा घटनाओं को सुनाता या प्रस्तुत करता है। उपन्यास की कथा को तेजी से और संतुलित ढंग से आगे बढ़ाने के लिए उपन्यासकार बीच-बीच में इस परिदृश्यात्मक प्रविधि का इस्तेमाल करता रहता है।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'मृत्युंजय' उपन्यास में परिदृश्यात्मक प्रविधि के प्रयोग का उदाहरण देखा जा सकता है-

"साँझ के समय उनके यहाँ प्रायः बैठक जमा करती। ऐसी ही एक बैठक में रेलगाड़ी उलटने का निर्णय लिया गया था। उस समय वह समझ नहीं पाया था कि ऐसी कार्रवाई से होगा क्या। अब जैसे-जैसे समय निकट आता गया, उसकी समझ में पैठता चला कि उस सबका अर्थ क्या होगा। कुछ दिन पहले गोसाईंजी के यहाँ एक बैठक में जो कार्यकर्ता लोग इकट्ठा हुए थे, वे सब भी इसी पर विचार करते रहे। स्वभावतः अब उसे लग रहा है कि यह कार्यक्रम गाँधीजी के सत्याग्रह का भाग नहीं है। यह तो सीधे-सीधे जीवहत्या होगी; नरमेध।"[76]

इसी क्रम में 'माँ' उपन्यास में प्रयुक्त परिदृश्यात्मक प्रविधि का उदाहरण भी देखा जा सकता है-

"चाय पीकर वह बैठक में निकल आया, उसने देखा कि बूढ़ा भगत चटाई पर बैठ कर हुक्का पी रहा है और अम्माँ के सामने खेती-बारी की गई-गुजरी हालत का वर्णन कर रहा है। उसके कहने का सार यही था- कलिकाल में बाल-बच्चे उद्दण्ड हो गए हैं, किसी की बात नहीं मानते, मन लगा कर काम नहीं करते, गाय-बैलों की अच्छी तरह देख-भाल नहीं करते, देर तक सोए रहते हैं- आदि-आदि। इसलिए खेती-बारी खराब होती जा रही है। सब कुछ विचार कर इसलिए ही उसने अब संसार की माया-ममता को छोड़ कर संन्यासी के कथनानुसार भगवान् के चरण में अपने को सौंप दिया है।"[77]

उपन्यास में गीत और कविता का प्रयोग उपन्यासकार अपने उपन्यास में कलात्मकता लाने के लिए और उसे वास्तविक जीवन करीब लाने के लिए करता है। यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य अपने प्रायः सभी उपन्यासों में इस शैली का प्रयोग करते दिखाई देते हैं। यशपाल के उपन्यासों में कहीं कोई पात्र गजल गुनगुनाता है, कहीं कोई पात्र गाना गाता है तो कहीं कोई स्त्री पात्र पंजाबी टप्पे और विवाह गीत गाती हुई दिखाई देती है। उदाहरण के तौर पर यशपाल के 'झूठा सच' उपन्यास की स्त्री पात्र शीलो, पुष्पा, सीता और बीरूमल की बहु द्वारा गाये गये विदाई गीत को ही देखा जा सकता है-

"आले ते जाले बाबल गुड्डियाँ,
मेरा नई खेडुन ते चाह होये।
माँ रोंदी दी अँगिया भिज्ज गई,
प्यू रोये दरया बहे।
मेरा वीर रोये, सारा जग रोये,
मेरी भाभियाँ मन चाव होये।"[78]

(हे पिता, मैं तो अभी नन्ही हूँ। घर के कानों में, दिवालों के आलों में सभी जगह मेरी गुड़ियाँ रखी हैं। अभी मेरा गुड़ियाँ खेलने का चाव कहाँ पूरा हुआ है। मुझे अभी क्यों घर से निकाल दे रहे हो! मैं घर छोड़कर जा रही हूँ, रो-रोकर माँ की अँगिया भीग गयी, पिता के रोने से नदियाँ बह गयीं, भाई को रोता देखकर संसार रो रहा है, परंतु भाभियों के मन प्रसन्न हैं।)

इसी तरह 'देशद्रोही' उपन्यास का लख्तई लड़का एक हाथ कान पर रख, दूसरा आकाश की ओर उठा गीत गाता हुआ दिखाई देता है-

"दस्पिन खलुदी प्रशादि मिमद

पस्ता त्रिसिन्नाशिरिं गविन्दा

स्ये और लगाइबे जड़मि द्वनिमद...।"[79]

(तेरा रंग गोरा है जैसे मेम का चेहरा हो। तेरे वक्ष कोमल हैं जैसे कालीन हो और दिल मीठा है पर मुझे तो तूने जख्मी कर दिया, जलाकर खाक कर दिया।)

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'मृत्युंजय' उपन्यास में भी जगह-जगह बज्रबुलि भाषा के श्लोकों का प्रयोग किया गया है। उदारणस्वरूप इस उपन्यास में मणिक बरॉ द्वारा गाये गये बज्रबुलि भाषा की इन पंक्तियों को देखा जा सकता है-

"मरिबार बेला ईटो अजामिले नारायण नाम लेइलॅ

कोटि जनमरो जॅत महापाप तारो प्रायश्चित भइलॅ।"[80]

'मृत्युंजय' उपन्यास में गोसाईं जी द्वारा चैतन्य महाप्रभु के लिए गायी गयी पंक्तियों में बंगला भाषा का रसास्वाद हमें प्राप्त होता है-

"आपनि आचारि धर्म सबारे शिखाय।

आपनि ना कैले धर्म शिखान नायाय॥"[81]

'पाखी घोड़ा' उपन्यास में अंग्रेजी के धर्म-गीत को हिन्दी में अनूदित कर प्रयोग किया गया है, जो इस प्रकार है-

"महान् चिकित्सक कृपा कर यहाँ पधारे,

वे महान सबके प्रति सहानुभूतिशील जेसस क्राइस्ट।

वे डूबते हुए निराश, दु:खी हृदयों से

मधुर वाणी में बातें करते हैं-

उन्हें आनंदित-प्रफुल्लित करने के लिए,

अरे सुनो! सुनो मधुर वचन जेसस के।"[82]

व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग रचनाकार अपनी रचनाओं में रोचकता एवं प्राभावोत्पादकता लाने के लिए करता है। इस शैली का प्रयोग यशपाल अपने प्रायः सभी उपन्यासों में बखूबी करते हैं। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में व्यंग्य उस तरह से दिखाई नहीं पड़ता। यशपाल के 'देशद्रोही' उपन्यास की इन पंक्तियों में व्यंग्यात्मक शैली को देखा जा सकता है-

"मोटर और दूसरे यंत्रों से बद्री बाबू को घृणा थी। जीवन की सादगी को नष्ट कर, उसमें विषमता लाने वाली मशीनरी को भी वे अच्छा न समझते थे, परंतु उनका समय जनता का समय था। काँग्रेस के कार्यकर्ताओं के बहुत कुछ कहने-सुनने, समझाने पर समय की बचत

करने के लिए उन्होंने मोटर का व्यवहार स्वीकार कर लिया था।"[83] इन पंक्तियों के माध्यम से यशपाल काँग्रेसी नेता बद्रीबाबू के जरिए उस पूरे वर्ग के व्यवहार और चरित्र पर व्यंग करते हैं।

भाषण शैली का प्रयोग रचनाकार विचारों को सार्वजनिक रूप देने के लिए करते हैं। इस शैली का प्रयोग यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने राजनैतिक उपन्यासों में किया है। उदाहरण के तौर पर यशपाल के 'झूठा सच' उपन्यास में कामरेड प्रद्युम्न द्वारा दिये गये भाषण को देख सकते हैं-

"हिदुस्तान की आज़ादी का दुश्मन ब्रिटिश साम्राज्यवाद तो है ही जो हिंदुस्तानी कौम के हिन्दू और मुस्लिम भागों को आपस में लड़ाकर अपने वश में किये हुए है, परंतु मुल्क की आज़ादी के सबसे बड़े दुश्मन वे लोग हैं जो हिंदुस्तान की राजनीति को सांप्रदायिक संघर्ष का दृष्टिकोण दे रहे हैं। हिंदुस्तान की आज़ादी और एकता आज हिन्दू-मुस्लिम एकता के आधार पर ही सम्भव है। सांप्रदायिक उत्तेजना के बल से, ब्रिटिश नौकरशाही की छत्रछाया में मंत्रिमंडल बनाने की अपनी भूख पूरी करने के प्रयत्न का परिणाम आपके सामने है।"[84]

इसी तरह बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'पाखी-घोड़ा' उपन्यास में गोपिनाथ बरदलै के भाषण को देखा जा सकता है-

"यह समय, एक ऐसा समय है जबकि सभी प्रकार की, भिन्न-भिन्न विचारधाराओं की राजनैतिक पार्टियों के लोगों को, भेद-भाव भुलाकर, एकजुट होकर पाकिस्तान रूपी-ग्राह के जबड़े में जाने से रक्षा करने के लिए, बचा लेने के लिए, सभी वर्गों के लोगों को, देश की स्वतंत्रता की रक्षा करने के लिए इकट्ठा होने, संगठित होकर आगे बढ़ने का समय है।"[85]

पत्र शैली का प्रयोग उपन्यासकार उपन्यास के पात्र और पाठक के बीच तादात्म्य स्थापित करने एवं पाठक को प्रभावित करने के लिए करता है। यशपाल और बीरेन्द्र कुमार

भट्टाचार्य दोनों ने इस शैली का प्रयोग अपने कुछ उपन्यासों में किया है। उदाहरण के तौर पर यशपाल के 'देशद्रोही' उपन्यास की चंदा के द्वारा डॉ. खन्ना को,[86] 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में उषा द्वारा अपने पिता धर्मानंद पंडित को[87], 'बारह घंटे' उपन्यास में विनी द्वारा अपनी दीदी जेनी और जीजा पामर को[88] 'झूठा सच' उपन्यास में तारा द्वारा डाक्टर प्राणनाथ को[89] भेजे गये पत्रों को देखा जा सकता है। इसी तरह बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'माँ' उपन्यास में बाछा द्वारा मुरुली बरुवा,[90] 'शतघ्नी' उपन्यास में प्रशांत द्वारा अपनी माँ प्रमिला[91] और 'प्रजा का राज' उपन्यास में खार्टिंग द्वारा अपने पिता नाजेक[92] को भेजे गये पत्र का उदाहरण भी देखा जा सकता है।

मनोविश्लेषणात्मक शैली का प्रयोग रचनाकार अपनी रचनाओं में पात्रों के मानसिक अंतर्द्वंद्व को व्यक्त करने के लिये करते हैं। इस शैली के प्रयोग से पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ सहज ही व्यक्त हो जाती हैं। इस शैली का प्रयोग यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने उपन्यासों में बखूबी किया है। उदाहरण के तौर पर 'दादा कामरेड' उपन्यास में यशपाल द्वारा यशोदा के मनोविश्लेषण को देखा जा सकता है- "इनके मन में मेरी बाबत संदेह हो गया है- यशोदा दाएँ हाथ की मुठ्ठी पर ठोड़ी रखे बैठी सोच रही थी। संदेह का विचार आते ही भय और ग्लानि से उसके होंठ काँप उठे और अन्याय की अनुभूति से क्रोध की भावना ने उठते हुए आँसुओं को दबा दिया- संदेह आखिर क्यों? मैंने क्या किया है? किस बात का संदेह? घंटों छत की ओर देख-देख वह सोचती- यह मेरा अपमान क्यों कर रहे हैं-मुझ पर यह ज्यादती क्यों कर रहे हैं?...आखिर मैंने किया क्या है?...हरीश को रात भर नीचे कमरे में टिकाने की बात उसे याद आ जाती, परंतु यह तो वे जानते नहीं और जानें तो वे जाने क्या समझें, परंतु मैंने कौन बुरा काम किया है?"[93]

इसी तरह 'मृत्युंजय' उपन्यास में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य गोसाईं के मनोभावों का विश्लेषण करते हैं- "गोसाइन सचमुच डर गयी है। वह इस तरह कभी डरी नहीं थी। पर डरने का कोई कारण तो है नहीं। यही न कि मैं मर जाऊँगा? मरना तय है तो मरूँगा ही। ऐसा कहने में कुछ लगता नहीं, किंतु सोचते ही हृदय काँप उठता है। कोई भी मरने के लिए तैयार नहीं होता। सभी जीना चाहते हैं।"[94]

पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग उपन्यासकार उपन्यास की वर्णित घटनाओं को आगे बढ़ाने के लिए और साथ ही उसमें पाठक की रुचि को बनाये रखने के लिए करते हैं। इसमें उपन्यास का कोई पात्र स्मृति के आधार पर अतीत की किसी घटना को याद करता है या उसे पुनर्प्रस्तुत करता है। इससे कई बार कथा में रोमांच और कौतूहल बनाए रखने में रचनाकार को सहूलियत होती है। यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के कई उपन्यासों में इस शैली का प्रयोग दिखाई देता है। उदाहरणस्वरूप यशपाल के 'बारह घंटे' उपन्यास में विनी और फैंटम अपने-अपने जीवन साथी की मृत्यु की घटना को याद करते हुए एक दूसरे से उसे साझा करते हैं। विनी अपने पति रोमी को याद करती हुई कहती है- "रोमी ने मुझे झील पर साथ ले जाने से इंकार कर दिया- मुझ पर हँसती हो! कहता था- तैरना आ गया। वर्षा में भी चला जाता था। पिछले साल हमने अपर माल रोड रौशर हाल का आधा भाग किराये पर लिया था। चौदह जुलाई को झड़ी लगी हुई थी परंतु वह तैरने चला गया। पड़ोसी स्विंग भी उसके साथ जाता था।...मेरे मन में कुछ हो रहा था, नजर बार-बार बाहर चली जाती थी। कई लोग डांडी उठाये हुये आ गये और डांडी बरामदे में रख दी। स्विंग गर्दन झुकाये कमरे में आया। मेरा कलेजा धक् से रह गया। बाहर निकली...।...डांडी में रोमी ट्रंक (तैरने का जांघिया) पहने निश्चल पड़ा। नीला चेहरा, मुँदी हुई पलकें सिर लुढ़का हुआ...मैं एकदम बेहोश हो गयी।...समाचार पाकर बरेली से ससुर भी आ गये थे। लेकिन यहाँ उसके बिना रहना सह्य नहीं हुआ। चौथे दिन ही लखनऊ चली गयी।"[95]

इसी तरह 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में भी पूर्वदीप्ति शैली का उदाहरण देखा जा सकता है जब उषा अपने पिता और स्वामी आत्मानन्द के बीच हुयी बातचीत को याद करती है।[96]

इसी तरह बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'अँधेरा-उजाला' उपन्यास का पात्र मीनधर बचपन की प्रेमिका आइधन के साथ बिताये पलों को याद करता है- "इसी बाड़ी के आम के पेड़ से आम तोड़कर उसने आइधन के साथ खाया था। उन्हें बचपन में साथ खेलते देख फकीर साहब ने बाप से कहा था 'वाह, कितनी बढ़िया जोड़ी है'। फकीर साहब मुसलमान थे मगर खाउंड और पिता के वे दिली दोस्त थे। फकीर साहब की वाणियों का शायद मूल्य है। जोड़ी को वि-जोड़ी कर देने के कारण ज्योतिष-शास्त्र भी गलत साबित हो गया। मन का विवाह ही असली विवाह है। यह बात फकीर साहब ने पहले भी कही थी जबकि उन्होंने सुना कि अलका के साथ उसका विवाह-सम्पर्क टूट गया। अलका से विवाह न होकर अगर आइधन से होता, तो हो सकता है कि वह सुखी होता।"[97]

'शतघ्नी' उपन्यास का पात्र बंधुराम अपने पिता के साथ बिताये बचपन के पलों को याद करता है- "शैशव के चित्र उभरने लगे। वही रंग वही गंध। मुझे याद आया जुहाल-खन जहाँ आग जलाई जाती थी...।वह हमारे जीवन का क्रेंद्रबिंदु था। जहाँ मैं पिताजी के लिए चिलम भरता था वहाँ माही मुझे गालियाँ देती थी- तु हैजे से मरे। जहाँ पिताजी हमें कहानियाँ सुनाते थे- बूढ़ा-बूढ़ी की कछारी कहानी, शंकर-अनिरुद्ध की कहानी। कितनी बातें जानते थे पिताजी। अपने नगर की और शहर की बातें।"[98]

उपर्युक्त विचार विश्लेषण के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भटाचार्य अपने-अपने उपन्यासों के शिल्प-विधान के प्रति बेहद सचेत दिखाई पड़ते हैं। उनके उपन्यासों का शिल्प सुगठित एवं सुंदर है, जो उपन्यास के कथ्य को उसके सर्वोत्तम रूप में प्रस्तुत कर पाने में सक्षम है।

संदर्भ

[1] यशपाल, दिव्या, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2017, पृ. 67

[2] वही, पृ.119

[3] यशपाल, अमिता, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2017, पृ. 33

[4] यशपाल, अप्सरा का शाप, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2015, पृ. 70

[5] यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018, पृ. 210

[6] यशपाल, झूठा सच(भाग-1), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018, पृ. 181

[7]यशपाल, यशपाल रचनावली(खण्ड-5), आनंद (संपा.), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007, पृ. 375

[8] वही

[9] यशपाल, दिव्या, पृ. 123

[10] यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, पृ. 86-87

[11] यशपाल, मनुष्य के रूप, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009, पृ. 32

[12] यशपाल, देशद्रोही, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014, पृ. 59

[13] यशपाल, मनुष्य के रूप, पृ. 87

[14] वही, पृ. 41

[15] यशपाल, देशद्रोही, पृ. 10

[16] वही, पृ. 12

[17] वही, पृ. 78

[18] यशपाल, मनुष्य के रूप, पृ. 27

[19] यशपाल, झूठा सच(भाग-1) पृ. 6

[20] वहीं, पृ. 50

[21] यशपाल, देशद्रोही, पृ. 19

[22] वही, पृ. 22

[23] यशपाल, गीता, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, पृ. 26

[24] यशपाल, देशद्रोही, पृ. 194

[25] वही, पृ. 203

[26] यशपाल, दादा कामरेड, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2016, पृ. 11

[27] यशपाल, झूठा सच (भाग-2), पृ. 36

[28] यशपाल, अमिता, पृ. 27

[29] यशपाल, दादा कामरेड, पृ. 58

[30] यशपाल, गीता, पृ. 88

[31] यशपाल, झूठा सच(भाग-2), पृ. 490

[32] वही, पृ. 110

[33] यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, पृ. 22

[34] यशपाल, देशद्रोही, पृ. 188

[35] यशपाल, अमिता, पृ. 38

[36] यशपाल, गीता, पृ. 17

[37] यशपाल, अप्सरा का शाप, पृ. 16

[38] यशपाल, दिव्या, पृ. 124

[39] यशपाल, गीता, पृ. 62

[40] यशपाल, देशद्रोही, पृ. 53

[41] यशपाल, गीता, पृ. 42

[42] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, नवारुण वर्मा (अनु.), किताबघर, नई दिल्ली, 1990, पृ. 28

[43] वही, पृ. 50

[44] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, माँ, लोकनाथ भराली (अनु.), हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, 1963, पृ. 29

[45] वही, पृ. 10

[46] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, पृ. 19

[47] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, माँ, पृ. 88

[48] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, डॉ. कृष्ण प्रसाद सिंह मागध (अनु.), भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2013, पृ. 12

[49] वहीं, पृ. 22

[50] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, पृ. 86

[51] वही, पृ. 87

[52] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, पृ. 73

[53] वही, पृ. 97

[54] वही, पृ. 25

[55] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, माँ, पृ. 117

[56] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, पृ. 119

[57] वही, पृ. 151

[58] वही, पृ. 274

[59] वही, पृ. 56

[60] वही, पृ. 57

[61] वही, पृ. 85

[62] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, पृ. 39

[63]बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, पृ. 82

[64] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, पृ. 31

[65] वही, पृ. 43

[66] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, पृ.105

[67] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, पृ. 80

[68] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, पृ. 212

[69] गोपाल राय, उपन्यास की संरचना, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012, पृ. 143

[70] यशपाल, अप्सरा का शाप, पृ. 22-23

[71] यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, पृ. 361

[72] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, माँ, पृ. 39-40

[73] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, पृ. 43

[74] यशपाल, झूठा सच(भाग-1), पृ. 108

[75] यशपाल, गीता, पृ. 21

[76] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, पृ. 51

[77] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, माँ, पृ. 21

[78] यशपाल, झूठा सच(भाग-1), पृ. 275

[79] यशपाल, देशद्रोही, पृ. 70

[80] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, पृ. 37

[81] वही, पृ. 35

[82] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, डॉ. महेन्द्र नाथ दुबे (अनु), भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 1990, पृ. 114

[83] यशपाल, देशद्रोही, पृ. 93

[84] यशपाल, झूठा सच(भाग-1), पृ. 106

[85] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी-घोड़ा, पृ. 324

[86] यशपाल, देशद्रोही, पृ. 191-192

[87] यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, पृ. 256

[88] यशपाल, बारह घंटे, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2015, पृ. 96

[89] यशपाल, झूठा सच(भाग-2), पृ. 429-430

[90] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, माँ, पृ. 55

[91] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, शतघ्नी, नेशनल पाब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1962, पृ. 14-15

[92] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, प्रजा का राज, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2002, पृ. 61

[93] यशपाल, दादा कामरेड, पृ. 91-92

[94] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, पृ. 80

[95] यशपाल, बारह घंटे, पृ. 40-41

[96] यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, पृ. 194

[97] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजला, पृ. 11

[98] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, शतघ्नी, पृ. 10

उपसंहार

उपसंहार

प्रस्तुत शोध-प्रबंध '**यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन**' में यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों को तुलनात्मक रूप से समझने एवं विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। सम्पूर्ण शोध-प्रबंध में यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों की तुलना स्त्री, स्त्री-पुरुष संबंध, जाति-वर्ण, वर्ग चेतना एवं आर्थिक विषमता, भारत छोड़ो आंदोलन की औपन्यासिक अभिव्यक्ति, भारत की आजादी और विभाजन तथा भाषा एवं कथा-शिल्प के आधार पर करने का प्रयास किया गया है।

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों के तुलनात्मक अध्ययन-विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि इन दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में स्त्री और उससे जुड़े प्रश्नों को उठाया है। यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य अपने-अपने उपन्यासों में स्त्री-पुरुष के समानाधिकार के स्वर को पूरी ताकत के साथ मुखरित करते हैं। यही कारण है कि उन्होंने अपने लगभग सभी उपन्यासों में ऐसी स्त्री पात्रों को रचा जो सदियों से चली आ रही सड़ी-गली परंपरा के प्रति विद्रोह करते हुए समाज में नारी जागृति का आह्वान करने का प्रयास करती हैं। इसके साथ ही उनके उपन्यासों में चित्रित स्त्रियाँ पारंपरिक विवाह संस्था का विरोध करती हुई दिखाई देती हैं।

यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों उपन्यासकार शिक्षा को स्त्री मुक्ति का अन्यतम साधन मानते हैं। इन दोनों उपन्यासकारों का मानना है कि शिक्षा स्त्री को उसके सामाजिक अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति सजग बनाने में मुख्य भूमिका अदा करती है। अत: यह अकारण नहीं है कि यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों की ज्यादातर स्त्री पात्र, चाहे वे शहरी हों, ग्रामीण हों या फिर आदिवासी, वे सभी शिक्षित,

विवेकशील एवं अपने सामाजिक कर्तव्यों और अधिकारों के प्रति अत्यंत सजग दिखाई देती हैं।

इन दोनों उपन्यासकारों ने अपने-अपने उपन्यासों में स्त्री की आर्थिक आत्मनिर्भरता पर विशेष बल दिया है। यशपाल ने सोमा (मनुष्य के रूप), उषा (मेरी तेरी उसकी बात), आदि तथा बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने कॅली दीदी (मृत्युंजय), माकन (पाखी घोड़ा), आदि के जरिए आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने के कारण अपनी शर्तों पर जीवन व्यतीत करने में सक्षम हुई स्त्री का चित्रण किया है।

यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य- इन दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में राष्ट्रीय आंदोलन में पुरुषों की ही भाँति स्त्रियों की बराबर की हिस्सेदारी को दर्शाया है। यशपाल के यहाँ स्त्रियाँ प्रत्यक्ष रूप में आंदोलन में भाग लेती हुई दिखाई देती हैं। वहीं दूसरी ओर बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के यहाँ स्त्रियाँ आंदोलन में प्रत्यक्ष रूप से भाग न लेकर परोक्ष रूप से आंदोलन में भाग लेती हुई दिखाई देती हैं। उनके यहाँ स्त्रियाँ गाँधीवादी विचारधारा से प्रभावित हैं।

यशपाल अपने उपन्यासों में नारी के प्रति धर्म के विकृत अप्रोच को उजागर करते हैं। इसका स्पष्ट रूप हमें 'झूठा सच' तथा 'दिव्या' उपन्यास में दिखाई देता है। वहीं, बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री के प्रति धर्म का यह विकृत अप्रोच दिखाई नहीं देता। इसका प्रमुख कारण संभवतः यही हो सकता है कि वे स्वयं धर्म के प्रति आस्थावान थे।

यशपाल अपने उपन्यासों में स्त्रियों के लिए सदियों से चले आ रहे नैतिक मूल्य एवं मर्यादा की शृंखला की कड़ियों को तोड़ने का भरसक प्रयास करते हैं। यशपाल ने अपने उपन्यासों में ऐसी स्त्री पात्रों को रचा है जो यौन-संबंधी अपनी स्वतंत्रता एवं इच्छा को व्यक्त करना अपना मानवीय अधिकार मानती हैं। मगर बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य स्त्री के मुक्त यौन संबंध को अनैतिक मानते हैं। उनका मानना है कि स्त्रियों के ये अनैतिक कार्य एक आदर्श समाज के निर्माण में बाधा उत्पन्न करते हैं। यही कारण है कि उनके द्वारा रचित स्त्री

पात्र चाहे वह शहरी हो या ग्रामीण अपने पति के अलावा किसी भी दूसरे पुरुष के साथ शारीरिक संबंध स्थापित करती हुई दिखाई नहीं देतीं।

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों की विषय वस्तु चाहे राजनीतिक हो या सामाजिक, प्राय: सभी उपन्यासों में स्त्री-पुरुष संबंध को लेकर उनकी दृष्टि स्पष्ट दिखाई पड़ती है। इन दोनों ने ही स्त्री-पुरुष संबंध में प्रेम को महत्व दिया है। यशपाल का मानना है कि प्रेम महज आंतरिक अनुभूति नहीं है। प्रेम का आकर्षण काम प्रेरित होता है। वे स्त्री-पुरुषों के आपसी आकर्षण को स्वाभाविक मानते हैं। यशपाल स्त्री-पुरुष के प्रेम को आत्मिक मानने से इनकार करते हैं। लेकिन बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य प्रेम के अध्यात्मिक रूप को स्वीकार करते हैं। उनके द्वारा रचित पात्र 'मृत्युंजय' के डिमि और धनपुर, 'पाखी घोड़ा' के सुमति बहन और विमल भाई के बीच प्रेम का आध्यात्मिक रूप दिखाई देता है। यशपाल ने स्त्री-पुरुष संबंधों का विश्लेषण जहाँ मार्क्सवादी नज़रिए से किया है, वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के साहित्य में स्त्री-पुरुष संबंध गांधीवाद से प्रभावित दिखाई देता है। यशपाल विवाह-पूर्व एवं विवाहेतर प्रेम को सहज एवं स्वाभाविक मानते हैं, जबकि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इस मामले को सहज नहीं मानते और इसलिए उनके उपन्यासों में प्रायः जहाँ कहीं भी विवाह-पूर्व अथवा विवाहेतर प्रेम दिखाई पड़ता है, वहाँ उसकी परिणति अंततः आध्यात्मिक प्रेम के रूप में होती है। यशपाल विवाह-पूर्व काम-संबंध को भी अनैतिक नहीं मानते; जबकि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के लिए विवाह-पूर्व काम-संबंध हमेशा अनैतिक है, इसीलिए वे ऐसे संबंधों की आदर्श परिणति विवाह में देखते हैं।

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इन दोनों उपन्यासकारों ने अपने-अपने उपन्यासों में जाति-वर्ण संबंधी मुद्दों को उजागर किया है। यशपाल जाति-वर्ण सम्बंधी प्रचलित मान्यताओं का घोर विरोध करते हैं। वे वर्ण व्यवस्था एवं जाति व्यवस्था को

समतामूलक समाज के लिए घातक मानते हैं। यशपाल समाज में व्याप्त जाति-वर्ण संबंधी विषमता को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहते हैं। 'मेरी तेरी उसकी बात' का ब्राह्मण लड़का देवदत्त पंडित अपना धर्म परिवर्तन कर ईसाई बन जाता है और स्पष्ट रूप से कहता है कि हिन्दुओं की क्रुरता और कु-संस्कारों को मिटाने के लिए अपना जीवन अर्पित कर रहा हूँ। वहीं, बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य असमिया समाज में फैले जाति-भेद से भली-भाँति परिचित थे। उनकी दृष्टि में प्रचलित जाति-भेद तुच्छ है। वे मानव को मानव धर्म की दृष्टि से देखने के पक्षधर हैं। उन्होंने अपनी इसी विचार धारा को उपन्यासों में विभिन्न पात्रों 'मृत्युंजय' के धनपुर, गोसाईं, 'शतघ्नी' के बंधुराम, 'माँ' के केन्दुकलाई आदि के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। साथ ही इन दोनों उपन्यासकारों ने जातिगत भेदभाव को दूर करने के लिए अपने-अपने उपन्यासों में अंतरजातीय विवाह को एक विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया है।

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के प्राय: सभी उपन्यासों में उनकी वर्गीय चेतना साफ दिखाई देती है। यशपाल वर्ग के सवाल को मार्क्सवादी नज़रिए से देखते हैं और इसलिए समाज में मौजूद वर्ग भेद को खत्म कर एक वर्गविहीन समतामूलक समाज की स्थापना के लिए वर्ग-संघर्ष के माध्यम से समाज की आर्थिक व्यवस्था में बदलाव को आवश्यक मानते हैं। यशपाल सामाजिक अर्थव्यवस्था पर किसी एक वर्ग के अधिकार को अनुचित मानते हैं। उनका मानना है कि सामाजिक अर्थव्यवस्था पर किसी एक वर्ग का अधिकार समाज में वर्गभेद उत्पन्न करता है। इसलिए उन्होंने समाज में फैली आर्थिक विषमता को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए वर्ग संघर्ष को अनिवार्य माना है। 'दादा कामरेड' उपन्यास के पात्र मजदूर नेता हरिश, 'देशद्रोही' उपन्यास के पात्र नासिर, 'मनुष्य के रुप' उपन्यास के पात्र भूषण सम्पूर्ण संसार से पूँजीवाद को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिये तत्पर दिखाई देते हैं। लेकिन बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य वर्ग-संघर्ष की अनिवार्यता को स्वीकार नहीं करते। उनका मानना है कि गाँधीवादी रचनात्मक कार्य, वर्ग-मैत्री और संशोधनवाद की

राह पर चलकर ही एक समतामूलक समाज की स्थापना की जा सकती है।'अँधेरा-उजाला' उपन्यास का मीनधर, 'पाखी घोड़ा' उपन्यास का नवीन ग्रामीण समाज में फैले शोषित एवं शोषक वर्ग के अंतर को गांधी के रचनात्मक कार्य के जरिए समाप्त करने का प्रयत्न करते हैं।

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इन दोनों ने अपने उपन्यासों में भारत छोड़ो आंदोलन की अभिव्यक्ति तथा उत्तर भारत और असम में उस आंदोलन के प्रभाव को उजागर किया है। यशपाल के मेरी तेरी उसकी बात और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'मृत्युंजय' ये दोनों ही उपन्यास भारत छोड़ो आंदोलन की पृष्ठभूमि के आधार पर लिखा गया है। मेरी तेरी उसकी बात' और 'मृत्युंजय'- इन दोनों ही उपन्यासों में समाजवादियों द्वारा गुप्त रूप से अंजाम दी गयी क्रांतिकारी गतिविधियों को दर्शाया गया है। 'मेरी तेरी उसकी बात' में उषा, रूद्रदत्त पाठक, बिरजू तथा उनके अन्य साथी सोशलिस्ट पार्टी के प्रभाव में हैं। यशपाल ने इस उपन्यास में उत्तर भारत के इलाकों- इलाहबाद, बनारस, लखनऊ, बिहार आदि में जनता द्वारा, खासकर छात्रों द्वारा भूमिगत रहकर की गई क्रांतिकारी गतिविधियों जैसे- रेल दुर्घटना, बम विस्फोट, पुलिस थाने पर हमला कर कब्जा करना, सरकारी कर्मचारियों के बंगले को ध्वस्त करना आदि का वर्णन किया है। उपन्यास में आंदोलन के दौरान बलिया जिले में बिरजू और अन्य गुप्त आंदोलनकारियों द्वारा समानंतर सरकार गठित किये जाने का भी विस्तृत वर्णन किया गया है। वहीं, 'मृत्युंजय' उपन्यास में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य गोसाईं, अहिना कोंवर, सेवक मधु केवट, जयराम, भिभिराम आदि पात्रों के जरिए आंदोलन में हिंसा-अहिंसा को लेकर तत्कालीन असम की जनता के अंतर्द्वंद्व को अभिव्यक्त करने का प्रयास करते हैं। नगाँव के पश्चिमी अंचलों- मायाङ, बारपुजिया, बढ़मपुर, कामपुर आदि में एक ओर जनता गाँधी के अहिंसात्मक आंदोलन से प्रभावित थी तो दूसरी ओर अत्याचार से पीड़ित जनता सुभाष चंद्र बोस की

हिंसात्मक नीति को अपनाते हुए मृत्युवाहिनी सेना गठित कर रेल दुर्घटना आदि को अंजाम दे रही थी। 'मृत्युंजय' उपन्यास में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के दौरान अंग्रेजों के विरुद्ध असमिया जनता की ऐसी ही हिंसात्मक-अहिंसात्मक प्रतिक्रिया और आंदोलन को सफल बनाने में उनके महत्वपूर्ण योगदान को रेखांकित करने की कोशिश की गई है।

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों के माध्यम से उत्तर भारत और असम में भारत की आजादी और विभाजन के पूर्व, दौरान एवं पश्चात् की घटनाओं के प्रभाव एवं विस्तार को समझने और विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। नौ-सेना विद्रोह भारत की आजादी के ठीक पहले घटित एक महत्वपूर्ण घटना थी। भारत की आजादी के लिये किये गये आंदोलनों में से यह एक महत्वपूर्ण आन्दोलन था,जिसने ब्रिटिश साम्राज्यावाद की नींव को हिला दिया। नौ-सेना द्वारा अंग्रेजों के खिलाफ किये गये इस विद्रोह का चित्रण यशपाल के 'गीता' और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास 'पाखी घोड़ा' में मिलता है। एक ओर जहाँ यशपाल ने अपने उपन्यास में नौ-सेना द्वारा बंबई के कुछ स्थानों पर किये गये आंदोलन का विस्तृत चित्रण किया है, वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य अपने उपन्यास में असम की जनता द्वारा इस आंदोलन के दौरान आयोजित की गई सभा-समितियों के चित्रण तक ही सीमित रहते हैं।

देश की आज़ादी और विभाजन एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। देश की आजादी और विभाजन दो ऐसी घटनाएँ हैं, जो एक साथ घटित हुईं, मगर जहाँ आज़ादी ने भारत के लोगों के दिलों को ऊर्जा और उत्साह से भर दिया, वहीं विभाजन ने तमाम भारतवासियों के मन पर एक भयानक छाप छोड़ दी। यशपाल द्वारा रचित 'झूठा सच' उपन्यास विभाजन की पृष्ठभूमि पर लिखा गया है। इस उपन्यास में विभाजन के पूर्व, दौरान एवं पश्चात् सांप्रदायिकता की आग में जलते देश का चित्रण किया गया है। एक ओर जहाँ विभाजन से

पूर्व समस्त उत्तर भारत में सांप्रदायिकता का जहर फैला हुआ था, वहीं दूसरी ओर ब्रिटिश सरकार तथा मुस्लिम लीग द्वारा असम को बंगाल के साथ जोड़कर पाकिस्तान में शामिल किए जाने की साजिश के विरोध में असम के प्रमुख नेता लोकप्रिय गोपिनाथ बरदलै के नेतृत्व में असमवासियों द्वारा असम में स्थायी शासन स्थापित करने तथा असमिया भाषा एवं अस्तित्व की रक्षा के लिए आंदोलन किये जा रहे थे। इस आंदोलन में असम के सभी वर्ग के लोगों ने साथ दिया। असमिया उपन्यासकार बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में तत्कालीन असम में गोपिनाथ बरदलै के नेतृत्व में असम की जनता द्वारा किये गये इस आंदोलन का चित्रण बहुत बारीकी से किया है।

यशपाल के उपन्यास और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों के हिन्दी में अनूदित उपन्यासों की भाषा का विश्लेषण और उसकी तुलना करने की कोशिश की गयी है। यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग दिखाई पड़ता है। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य की तुलना में यशपाल के उपन्यासों में संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग अधिक दिखाई देता है, खासकर दिव्या, अमिता और अप्सरा का शाप उपन्यास में। इन दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में स्थानीय भाषा का झलक दिखाई देता है। इन दोनों उपन्यासकारों ने उपन्यासों में विदेशी भाषा का प्रयोग किया गया है। यशपाल के उपन्यासों में प्रसंगानुकूल अंग्रेजी, उर्दु, रूसी, पश्तो भाषा का प्रयोग किया गया है। कहीं-कहीं अंग्रेजी के पूरे-पूरे वाक्यों का भी प्रयोग किया गया है। वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास 'अँधेरा-उजाला' में बस एक ही पात्र के जरिए पूरे उपन्यास में एक-दो स्थान पर ही अंग्रेजी के पूरे वाक्य दिखाई देते हैं। बाकी अन्य उपन्यासों में अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग भले ही दिखाई देते हैं, परंतु अंग्रेजी के पूरे-पूरे वाक्य दिखाई नहीं देते। इसका कारण यह है कि उनके उपन्यासों के ज्यादातर पात्र ग्रामीण हैं।

इन दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में कहीं-कहीं आलंकारिक भाषा का प्रयोग भी किया है। इसके साथ ही इन दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग भी मिलता है। यशपाल ने जहाँ अपने उपन्यासों में हिन्दी के मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग किया है,वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के अनूदित उपन्यासों में असमिया के कुछ मुहावरों और असमिया की कुछ लोकोक्तियों का प्रयोग हिन्दी में अनूदित कर किया गया है। परंतु अनुवादकों ने उसके भाव में कोई अंतर नहीं आने दिया है। साथ ही उपन्यासों के हिन्दी में अनूदित होने के कारण कुछ हिन्दी के मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग भी किया गया है। अत: यह कहा जा सकता है कि इन दोनों ही उपन्यासकारों के उपन्यासों की भाषा सहज, सरल और प्रवाहपूर्ण है। लेकिन बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों की भाषा की तुलना में यशपाल के उपन्यासों में भाषाई विविधता अधिक दिखाई पड़ती है।

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में कथा संरचना, कथा प्रविधियों आदि का विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। विविध कथा प्रविधियों का प्रयोग इन दोनों ही उपन्यासकारों के उपन्यासों में दिखाई देता है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि इन दोनों ही उपन्यासकारों के उपन्यासों का शिल्प सुंदर एवं सुगठित है, जो उपन्यास के कथ्य को उसके सर्वोत्तम रूप में प्रस्तुत कर पाने में सक्षम है।

शोध-प्रबंध के महत्वपूर्ण निष्कर्ष

अध्ययन की सुविधा के लिए प्रस्तुत शोध प्रबंध के महत्वपूर्ण निष्कर्षों को बिन्दुवार इस रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है:

1. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ने अपने उपन्यासों में स्त्री की आर्थिक स्वतंत्रता पर बल दिया है। उन दोनों का मानना है कि जब तक स्त्री आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर नहीं होगी तब तक उसका शोषण होता ही रहेगा।

2. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्यने अपने उपन्यासों में स्त्री शिक्षा को विशेष महत्व दिया है।

3. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने उपन्यासों में समाज में स्त्री के समानाधिकार पर बल दिया है।

4. यशपाल के उपन्यासों में स्त्री की यौन स्वतंत्रता का स्वर मुखरित हुआ है। मगर बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री की यौन स्वतंत्रता का सवाल महत्वपूर्ण नहीं है। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य स्त्री की यौन स्वतंत्रता का समर्थन भी नहीं करते। वे एक आदर्श समाज के लिए स्त्री की यौन स्वतंत्रता को अनैतिक मानते हैं। इसीलिए उनके यहाँ प्रायः तमाम स्त्री पात्र, वह चाहे शहरी हो या ग्रामीण,अपने पति के अलावा किसी और पुरुष के साथ शारीरिक संबंध स्थापित करती हुई दिखाई नहीं देती।

5. यशपाल ने अपने कुछ उपन्यासों में स्त्री के प्रति धर्म के विकृत अप्रोच को दर्शाया है, जबकि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के यहाँ स्त्री के प्रति धर्म का विकृत अप्रोच दिखाई नहीं देता। इसका कारण संभवतः यह है कि वे स्वयं धर्म के प्रति आस्थावान थे।

6. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने-अपने उपन्यासों में राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने वाली स्त्रियों का चित्रण किया है। लेकिन यशपाल के उपन्यास की स्त्रियाँ

समाजवादी विचारधारा से प्रभावित हैं और प्रत्यक्ष रूप से आंदोलन में भाग लेती हैं, जबकि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास की स्त्रियाँ गाँधीवादी विचारधारा से प्रभावित हैं और परोक्ष रुप से आंदोलन में भाग लेती हैं।

7. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ने अपने उपन्यासों में परम्परावादी भारतीय नारी का चित्रण किया है। लेकिन दोनों उपन्यासकारों की दृष्टियों में पर्याप्त भिन्नता है। एक ओर जहाँ बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य भारतीय नारी की सहनशीलता, पतिपरायणता और त्याग की महानता को दर्शाते हैं, वहीं यशपाल अपने उपन्यासों में परम्परावादी भारतीय नारी के शोषण और उसके असहाय रूप को उजागर करते हैं।

8. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों के उपन्यासों में स्त्री-पुरुष का प्रेम दिखाई देता है। यशपाल ने स्त्री-पुरुष के आकर्षण को सहज एवं स्वाभाविक माना है। वे प्रेम को स्त्री-पुरुष की परस्पर संतुष्टि की कामना और परस्पर आश्रय की भावना के रूप में देखते हैं। वे प्रेम रहित यौन संबंध को अनुचित मानते हैं। वे प्रेम को स्त्री-पुरुष के जीवन की स्वाभाविक माँग के रुप में देखते हैं। यशपाल ने स्त्री-पुरुष संबंधों का विश्लेषण जहाँ मार्क्सवादी नज़रिए से किया है, वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के साहित्य में स्त्री-पुरुष संबंध गाँधीवाद से प्रभावित दिखाई देता है। यशपाल विवाह-पूर्व एवं विवाहेतर प्रेम को अनिवार्यतः अनैतिक नहीं मानते बल्कि उसे सहज एवं स्वाभाविक मानते हैं। इसके अलावा वे स्त्री-पुरुष के परस्पर आकर्षण और प्रेम को स्थायी रूप देने के लिए विवाह जैसी संस्था को अनिवार्य नहीं मानते। वे विवाह को एक बंधन मानते हैं। वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य विवाह-पूर्व एवं विवाहेतर प्रेम को सहज नहीं मानते और इसलिए उनके उपन्यासों में प्रायः जहाँ कहीं भी विवाह-पूर्व अथवा विवाहेतर प्रेम दिखाई पड़ता है, वहाँ उसकी परिणति अंततः आध्यात्मिक प्रेम के रूप में होती है। यशपाल विवाह-पूर्व काम-संबंध को भी

अनैतिक नहीं मानते, जबकि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के लिए विवाह-पूर्व काम हमेशा अनैतिक है, इसीलिए वे ऐसे संबंधों की आदर्श परिणति विवाह में देखते हैं।

9. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इन दोनों के उपन्यासों में जाति-वर्ण संबंधी मुद्दों को उठाया गया है। यशपाल जाति-वर्ण व्यवस्था को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहते हैं, जबकि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का जाति-वर्ण संबंधी दृष्टिकोण संशोधनवादी है। यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ने जात-पात के भेदभाव को दूर करने के लिए अपने उपन्यासों में अंतरजातीय विवाह को एक विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया है।

10. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के प्रायः सभी उपन्यासों में उनकी वर्गीय चेतना साफ दिखाई पड़ती है। यशपाल वर्ग के सवाल को मार्क्सवादी नज़रिए से देखते हैं और इसलिए समाज में मौजूद वर्ग भेद को खत्म कर एक वर्ग विहीन समतामूलक समाज की स्थापना के लिए वर्ग-संघर्ष के माध्यम से समाज की आर्थिक व्यवस्था में बदलाव को आवश्यक मानते हैं। यशपाल केवल विचार के माध्यम से किसी किस्म के सामाजिक परिवर्तन के कोरे भाववाद में नहीं उलझते हैं। जबकि,बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य समतामूलक समाज की स्थापना के लिए वर्ग-संघर्ष की अनिवार्यता को स्वीकार नहीं करते। वे गाँधीवादी संशोधनवाद के रास्ते समाज में समरसता कायम करना चाहते हैं। वे ग्रामीण समाज में फैली आर्थिक विषमता को समाप्त करने के लिए वर्ग-संघर्ष के बदले श्रेणी-मैत्री को आवश्यक मानते हैं।

11. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास 'मृत्युंजय' और यशपाल के उपन्यास 'मेरी तेरी उसकी बात' में 'भारत छोड़ो आंदोलन' में जनता की भागीदारी का विस्तृत चित्रण किया गया है। यशपाल भारत की आजादी में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के महत्व को स्वीकार नहीं करते। अपने वामपंथी विचारधारात्मक रुझान के कारण यशपाल 'भारत छोड़ो आंदोलन' और उसमें गाँधी की भूमिका के प्रति नकारात्मक रूप से काफी 'क्रिटिकल' हैं। यशपाल के

विपरीत बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने 'मृत्युंजय' उपन्यास में असम की जनता पर गाँधी और उनके आंदोलनों के प्रभाव को बहुत ही महत्वपूर्ण ढंग से दर्शाया है। 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में आंदोलन में भाग लेने वाले कई वामपंथी और समाजवादी युवक-युवतियाँ दिखाई देते हैं, परन्तु एक भी गाँधीवादी युवक या युवती उपन्यास में मौजूद नहीं है। यशपाल ने संभवतः यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि देश के युवावर्ग की गाँधी की अहिंसात्मक नीति में कोई आस्था नहीं है। यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने क्रमशः उत्तर भारत और असम के कुछ खास हिस्सों में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के प्रभाव और प्रसार का चित्रण बहुत ही बारीकी से किया है। निश्चय ही चित्रण की इस प्रक्रिया में दोनों रचनाकारों की अपनी-अपनी विचारधाराओं ने भी अपना काम किया है। विचारधारा की भिन्नता के कारण 'भारत छोड़ो आंदोलन' के प्रति और उसके प्रभाव के प्रति दोनों उपन्यासकारों के नजरिए में पर्याप्त अंतर दिखाई पड़ता है।

12. यशपाल के वृहदाकार उपन्यास 'झूठा सच' में विभाजन से पूर्व, उसके दौरान एवं उसके बाद सांप्रदायिकता की आग में जलते देश का चित्रण किया गया है। एक ओर जहाँ विभाजन से पूर्व समस्त उत्तर भारत में सांप्रदायिकता का जहर फैला हुआ था, वहीं दूसरी ओर सांप्रदायिकता का कोई खास प्रभाव असम में दिखाई नहीं देता। असम को बंगाल के साथ जोड़कर पाकिस्तान में सम्मिलित करने की साजिश के विरोध में असम के प्रमुख नेता गोपिनाथ बरदलै के नेतृत्व में असमवासियों द्वारा स्थायी शासन स्थापित करने तथा असमिया भाषा एवं अस्तित्व की रक्षा के लिए आंदोलन किये जा रहे थे। असम के अधिकांश मुसलमान भी असम को बंगाल के साथ मिलाकर पाकिस्तान में शामिल किए जाने के खिलाफ थे। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में असम में गोपिनाथ बरदलै के नेतृत्व में असम की जनता द्वारा किये गये इस आंदोलन का चित्रण बारीकी से किया है।

13. यशपाल के उपन्यासों में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों की तुलना में भाषाई विविधता नजर आती है। उनके उपन्यासों में अंग्रेजी भाषा के पूरे-पूरे वाक्य भी दिखाई देते हैं, जो बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के यहाँ 'अँधेरा-उजाला' उपन्यास छोड़कर अन्य उपन्यासों में नहीं मिलते। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास चूँकि असमिया से हिन्दी में अनूदित हुए हैं, इस कारण असमिया भाषा के कुछ शब्दों का प्रयोग वहाँ दिखाई पड़ता है। यशपाल के उपन्यासों में हिन्दी और थोड़े-बहुत पंजाबी के मुहावरे एवं लोकोक्तियों का प्रयोग मिलता है तथा बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के अनूदित उपन्यासों में असमिया के मुहावरों और असमिया की लोकोक्तियों का प्रयोग हिन्दी में अनूदित कर किया गया है।

14. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ही उपन्यासकारों ने विभिन्न कथा-प्रविधियों का प्रयोग अपने उपन्यासों में किया है। पत्र, भाषण, व्यंग्य, पूर्वदीप्ति, दृश्यात्मक, परिदृश्यात्मक, आदि विविध कथा-प्रविधियों को इन दोनों ही उपन्यासकारों के उपन्यासों में देखा जा सकता है। तुलनात्मक रूप से यशपाल के उपन्यासों में औपन्यासिक शिल्प की विविधता ज़्यादा है।

संदर्भ-ग्रंथ सूची

अधार ग्रंथ:

1. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, नवारुण वर्मा (अनु.),किताबघर, नई दिल्ली, 1990
2. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, डॉ. महेंद्रनाथ दुबे (अनु.), भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 1990
3. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, प्रजा का राज, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2002
4. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, कृष्णप्रसाद सिंह मागध (अनु.),भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2013
5. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, शतघ्नी, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1962
6. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, माँ, लोकनाथ भराली (अनु.), हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, 1963
7. यशपाल, अप्सरा का शाप, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2015
8. यशपाल, अमिता, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2017
9. यशपाल, गीता, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010
10. यशपाल, दादा कामरेड, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2016
11. यशपाल, दिव्या, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2017
12. यशपाल, देशद्रोही, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014
13. यशपाल, बारह घंटे, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2015
14. यशपाल, मनुष्य के रूप, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009
15. यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात,लोकभारती प्रकाशन,इलाहाबाद, 2018
16. यशपाल, झूठा सच(भाग-1, 2), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018
17. यशपाल, यशपाल रचनावली(खंड-5), आनन्द(संपा.), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007

सहायक ग्रंथ :

हिन्दी पुस्तकें:

1. अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2012
2. इंद्रनाथ चौधुरी, तुलनात्मक साहित्य का भारतीय परिपेक्ष, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2010
3. कामताप्रसाद गुरु, हिन्दी व्याकरण, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2019
4. खगेंद्र ठाकुर, कहानी परम्परा और प्रगति, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2018
5. गोपाल कृष्ण शर्मा, यशपाल का उपन्यास साहित्य, नवचेतना प्रकाशन, दिल्ली, 2004
6. गोपाल राय, उपन्यास की संरचना, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012
7. गोपाल राय, हिन्दी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002
8. चमनलाल, यशपाल के उपन्यास, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2002
9. चमनलाल, यशपाल के उपन्यासों में राजनैतिक चेतना, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 1985
10. चौहार्य मिश्र, यशपाल के उपन्यासों की सामाजिक तथा राजनैतिक चेतना एवं शिल्प-विधान, संजय बुक सेंटर, नयी दिल्ली, 2004
11. डॉ. अमरनाथ, नारी मुक्ति का संघर्ष, रेमाधव पब्लिकेशन्स प्रा.लि., नोएडा, 2007
12. डॉ. ऋतु वार्ष्णेय, यशपाल के उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2010
13. डॉ. ज्योति पांडुरंग गायकवाड़, यशपाल के उपन्यासों में नारी पात्रों का चित्रण, ए.बी.एस पब्लिकेशन, वाराणसी, 2014
14. डॉ. प्रमोद पाटील, यशपाल के उपन्यास, विकास प्रकाशन, कानपुर, 2008
15. डॉ. भ. ह. राजुरकर, डॉ. राजमल बोरा, तुलनात्मक अध्ययन: स्वरूप और समस्याएँ, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
16. डॉ. भगवान पाठक, यशपाल के उपन्यासों की सामाजिक चेतना, रमन बुक सेंटर, मथुरा, 2010
17. डॉ. भूलिका त्रिवेदी, यशपाल: व्यक्तित्व एवं कृतित्व, चिंतन प्रकाशन, कानपुर, 1992
18. डॉ. मनमोहन सहगल, कथाकार यशपाल, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 2007

19. डॉ. रामचंद्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2017
20. डॉ. विजय कुमार विठ्ठल जाधव, यशपाल के उपन्यासों में चित्रित पात्रों का स्वरूप विश्लेषण, साहित्य सागर, कानपुर, 2005
21. देवीशंकर अवस्थी, नयी कहानी सन्दर्भ और प्रकृति, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019
22. नासिरा शर्मा, औरत के लिए औरत, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018
23. परमानन्द श्रीवास्तव, उपन्यास का पुनर्जन्म, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2015
24. प्रो. कमला प्रसाद, राजेंद्र शर्मा, स्त्री: मुक्ति का सपना, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2014
25. प्रोफेसर बिपिन चंद्र, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1998
26. मधुरेश, क्रांतिकारी यशपाल: एक समर्पित व्यक्तित्व, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1979
27. मधुरेश, हिन्दी उपन्यास का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018
28. मधुरेश, हिन्दी कहानी का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018
29. मन्मथनाथ गुप्त, स्त्री-पुरुष संबंधों का रोमांचकारी इतिहास, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2020
30. यशपाल, गाँधीवाद की शव परीक्षा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018
31. यशपाल, न्याय का संघर्ष, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद, 2003
32. यशपाल, मार्क्सवाद, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018
33. यशपाल, यशपाल रचनावली(खंड-1 से लेकर 14), आनन्द(संपा.), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007
34. यशपाल, सिंहावलोकन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2019
35. योगेश सूरी, यशपाल के उपन्यासों में नारी जीवन की समस्याएँ, चंद्रलोक प्रकाशन, कानपुर, 1994
36. रजनी पाम दत्त, आज का भारत, रामविलास शर्मा (अनु.), ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, 2004
37. राजेंद्र यादव, उपन्यास स्वरूप और संवेदना, वाणी प्रकाशन, 2020

38. राजेंद्र यादव, कहानी स्वरूप और संवेदना, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2020
39. रामविलास शर्मा, मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984
40. रोमिला थापर, भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2021
41. शंभुनाथ, हिन्दी उपन्यास राष्ट्र और हाशिया, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2016
42. सरोज गुप्त, यशपाल: व्यक्तित्व और कृतित्व, अनुराग प्रकाशन, अजमेर, 1970
43. सुदर्शन मलहोत्रा, यशपाल के उपन्यासों का मूल्यांकन, पराग प्रकाशन, दिल्ली, 1984
44. सुमित सरकार, आधुनिक भारत(1885-1947), सुशीला डोभाल(अनु.), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018
45. सुरेन्द्र चंद्र तिवारी, यशपाल और हिन्दी कथा साहित्य, सरस्वती प्रेस, बनारस, 1956
46. सुषमा धवन, हिन्दी उपन्यास, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1961
47. सौ. शकुंतला प्रताप वाघ (चव्हाण), यशपाल के उपन्यासों का अनुशीलन, अमन प्रकाशन, कानपुर, 2012

असमिया पुस्तकें:

1. অধ্যাপক নগেন শইকিয়া, আধুনিক অসমিয়া সাহিত্যৰ অভিলেখ, অসম সাহিত্য সভা, জোৰহাট, 1977
2. অমল চন্দ্ৰ দাস, অসমিয়া উপন্যাস পৰিক্ৰমা, বনলতা প্ৰকাশন, গুবাহাটী, 2012
3. অৰিন্দম বৰকটকী, বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য্য ৰামধেনু সম্পাদকীয়, বনলতা প্ৰকাশন, গুবাহাটী, 2007
4. গুণাভিৰাম বৰুৱা, আসাম বুৰঞ্জী, অসম প্ৰকাশন পৰিষদ, গুবাহাটী, 2003
5. গোবিংদ প্ৰসাদ শৰ্মা, বীৰেন্দ্ৰ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য:উপন্যাসিক, বনলতা প্ৰকাশন, গোবাহাটী, 2010
6. গোবিন্দ প্ৰসাদ শৰ্মা, উপন্যাস আৰু অসমীয়া উপন্যাস, স্টুডেংট্সস স্টোৰ্স, গুবাহাটী, 2009
7. ডাঁ. ডম্বৰুধৰ নাথ, অসম বুৰঞ্জী, বিদ্যা ভবন, জোৰহাট, 1987
8. ডাঁ. নগেন ঠাকুৰ, এশ বছৰৰ অসমিয়া উপন্যাস, জ্যোতি প্ৰকাশন, গুবাহাটী, 2012
9. ডাঁ. পৰাগ কুমাৰ ভট্টাচাৰ্য, আধুনিক উপন্যাস, অসম পব্লিশিংগ কম্পনী, গুবাহাটী, 1999

10. डॉ. प्रफुल्ल कटकी, स्वराजोत्तर असमिया उपन्यास समीक्षा, वीणा लाईब्रेरी प्रकाशन, गुवाहाटी, 2009
11. डॉ. प्राप्ति ठाकुर, रामधेनुर चुटिगल्प विचार आरु विश्लेषण, भवानी वुक्स, गुवाहाटी, 2012
12. डॉ. मलया खाओन्द, डॉ. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य आरु तेओंर उपन्यास, साहित्य प्रकाशन, गुवाहाटी, 2007
13. डॉ. रत्ना दत्त, मृत्यंजय एटि विश्लेषण, असमिया अन लाइन प्रकाशन, डिब्रुगढ़, 2017
14. डॉ. रमेश चंद्र कलिता, स्वाधीनता आंदोलन आरु असम, असम प्रकाशन परिषद, गुवाहाटी, 2008
15. डॉ. सत्येंद्रनाथ शर्मा, असमिया उपन्यासार गतिधारा, सौमर प्रकाशन, गुवाहाटी, 2001
16. डॉ. सत्येंद्रनाथ शर्मा, असमिया साहित्यर समीक्षात्मक इतिवृत्ति, सौमार प्रकाशन, गुवाहाटी, 2020
17. डॉ. सागर बरुवा, भारतर स्वाधीनता आंदोलनत असमर अवदान,जागरण साहित्य प्रकाशन, नगाँव, 2013
18. डॉ. हेमंत कुमार शर्मा, बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्यर साहित्य-कृति, चंद्र प्रकाशन, गुवाहाटी, 2001
19. तरणी पाठक, असमर बुरंजी (प्राक् ऐतिहासिक युगर परा 2016 खृष्टाब्दलोईके), चन्द्र प्रकाशन, 2017
20. पद्मनाथ गोहाई बरुवा, असमर बुरंजी, वि.एटि पाब्लिकेशन, गुवाहाटी, 2017
21. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, प्रतिपद, चंद्र प्रकाशन, गुवाहाटी, 2015
22. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, राजपथे रिङियाय, चंद्र प्रकाशन, गुवाहाटी, 2016
23. लक्ष्मीनाथ तामुली, भारतर स्वाधीनता संग्रामत असमर अवदान, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2017

पत्र-पत्रिकाएँ:

1. इंद्रप्रस्थ भारती (यशपाल विशेषांक), नानक चंद (सं.),दिल्ली, वर्ष15-, अंक-4, अक्टूबर-दिसंबर, 2003
2. साहित्यमाला: पूर्वोत्तर भारतीय साहित्य, केंद्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली, 2017,
3. भारतीय लेखक (यशपाल विशेषांक), भीमसेन त्यागी (सं.), अंक- 5-6, अक्टूबर, 2003 - मार्च, 2004
4. वर्तमान साहित्य (यशपाल विशेषांक), प्रो. कुँवरपाल सिंह (सं.), अंक-10-12, अक्टूबर-नवम्बर-दिसम्बर, 2003

शब्द कोश:

1. आचार्य रामचंद्र वर्मा, प्रामाणिक हिन्दी कोश, लोकभारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद, 1998
2. धीरेंद्र वर्मा (संपा.), हिन्दी साहित्य कोश खण्ड- 1, ज्ञानमण्डल लिमि., वाराणसी, 1985
3. धीरेन्द्र वर्मा (संपा.), हिन्दी साहित्य कोश, खण्ड- 2, ज्ञानमण्डल लिमि., वाराणसी, 2015
4. श्यामसुंदर दास, हिन्दी शब्द सागर, नागरी प्रचारणी सभा, काशी, 1971
5. हिन्दी एंग्लो-ऐसमीज़ डिक्शनरी, बुधीन्द्र चंद्र बरुवा, एल.बी.एस पब्लिकेशन, 2018
6. हिन्दी-असमिया व्यावहारिक लघु कोश, केंद्रीय हिन्दी निदेशालय, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, 1985

बायोडाटा

1. नाम	:	पूजा शर्मा
2. पिता का नाम	:	श्री बेदु शर्मा
3. माता का नाम	:	श्रीमती देबी शर्मा
4. पता	:	साउथ इंद्रनगर, अगरतला, त्रिपुरा- 799006
5. जन्मतिथि	:	03.12.1991
6. शैक्षणिक योग्यता	:	क) दसवीं (2008) – द्वितीय श्रेणी ख) बारहवीं (2010) – द्वितीय श्रेणी ग) स्नातक (2013) – द्वितीय श्रेणी घ) स्नातकोत्तर- हिन्दी (2015) – प्रथम श्रेणी ङ) एम. फिल-हिन्दी (2018) – प्रथम श्रेणी
7. मोबाइल	:	8453376081
8. ईमेल	:	sharmapujadey@gmail.com
9. भाषा ज्ञान	:	हिन्दी, अँग्रेजी, असमिया, बांग्ला

10.प्रकाशित शोध पत्र:

i. पूजा शर्मा एवं डॉ. अमिष वर्मा, *यशपाल के उपन्यास और नारी-मुक्ति के प्रश्न*, शोध दिशा (यूजीसी केयर लिस्टेड), अंक-57/2, जनवरी-मार्च, 2022, ISSN:0975-735X, पृ. 60 - 65

ii. पूजा शर्मा एवं डॉ. अमिष वर्मा, *'भारत छोड़ो आंदोलन' की औपन्यासिक अभिव्यक्ति [संदर्भ: 'मेरी तेरी उसकी बात' (हिन्दी) और 'मृत्युंजय' (असमिया)]*, शोध संविद (पीयर रिव्यूड), अंक-13, वर्ष- 7, जुलाई-दिसम्बर, 2020, ISSN:2393-980X, पृ. 73 - 78

11.संगोष्ठियों में पत्र वाचन:

क्रम सं.	शीर्षक	आयोजक	तिथि
1	असमिया उपन्यासकार बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास 'मृत्युंजय' का स्त्री-पक्ष	राष्ट्रीय उच्चतर शिक्षा अभियान (RUSA), मिज़ोरम हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालय, आइज़ोल और हिन्दी विभाग, मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल	29 नवम्बर, 2019
2	हिन्दी उपन्यास और यशपाल	हिन्दी विभाग, मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल	12 जून, 2020

(पूजा शर्मा)

अनुसंधित्सु का विवरण

नाम	:	पूजा शर्मा
उपाधि	:	पीएच.डी.
विभाग	:	हिन्दी
शोध-प्रबंध का शीर्षक	:	**यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन**
प्रवेश तिथि	:	26.07.2019
शोध प्रस्ताव की संस्तुति		
1) विभागीय शोध समिति की तिथि	:	17.09.2019
2) बी.ओ.एस. की तिथि	:	19.09.2019
3) स्कूल बोर्ड की तिथि	:	26.09.2019
मिज़ोरम विश्वविद्यालय पंजीयन संख्या	:	1900206
पीएच.डी. पंजीयन संख्या	:	MZU/Ph.D./ 1316 of 26.07.2019
अवधि विस्तार (एक्सटेंशन)	:	-

(प्रो. सुशील कुमार शर्मा)
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल

शोध-प्रबंध सार
ABSTRACT

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन

(YASHPAL AUR BIRENDRA KUMAR BHATTACHARYA KE UPANYASON KA TULANATMAK ADHYAYAN)

[मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल के हिन्दी विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.)

की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध का सारांश]

AN ABSTRACT SUBMITTED IN PARTIAL FULFILLMENT OF THE REQUIREMENTS FOR THE DEGREE OF DOCTOR OF PHILOSOPHY

पूजा शर्मा

PUJA SARMA

MZU Regd. No 1900206

Ph.D. Regd. No. MZU/Ph.D./1316 of 26.07.2019

हिन्दी विभाग

शिक्षा एवं मानविकी संकाय

DEPARTMENT OF HINDI

SCHOOL OF EDUCATION AND HUMANITIES

अगस्त, 2022

AUGUST, 2022

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन

(YASHPAL AUR BIRENDRA KUMAR BHATTACHARYA KE UPANYASON KA TULANATMAK ADHYAYAN)

प्रस्तुतकर्ता

पूजा शर्मा

हिन्दी विभाग

PUJA SARMA

Department of Hindi

शोध-निर्देशक

डॉ. अमिष वर्मा

हिन्दी विभाग

Dr. Amish Verma

Department of Hindi

मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल के शिक्षा एवं मानविकी संकाय के अंतर्गत
हिन्दी विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.) की उपाधि के
लिए अपेक्षित आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध का सारांश

Submitted in partial fulfilment of the requirement of the degree of Doctor of Philosophy in Hindi of Mizoram University, Aizawl.

विषयानुक्रमणिका

भूमिका

अध्याय-1 यशपाल: जीवन, रचनात्मक परिवेश एवं लेखकीय चेतना का निर्माण

1.1 यशपाल का जीवन एवं रचनात्मक समकाल

1.2 यशपाल की लेखकीय चेतना का निर्माण

1.3 यशपाल की साहित्यिक उपलब्धि

अध्याय-2 बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य: जीवन, साहित्यिक परिवेश एवं रचनाशीलता

2.1 बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के जीवन प्रसंग

2.2 बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का साहित्यिक परिवेश

2.3 बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य की रचनाशीलता

अध्याय-3 यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री और स्त्री-पुरुष संबंध

3.1 यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री

3.2 यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री-पुरुष संबंध

अध्याय-4 यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों के विविध पक्ष

4.1 जाति-वर्ण संबंधी दृष्टि

4.2 वर्ग-चेतना और आर्थिक विषमता

4.3 भारत छोड़ो आंदोलन की औपन्यासिक अभिव्यक्ति

4.4 भारत की आजादी और विभाजन

अध्याय-5 यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का शिल्प

5.1 भाषा

5.2 कथा-शिल्प

उपसंहार

संदर्भ ग्रंथ-सूची

शोध-प्रबंध सार

यश्पाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन

तुलना करना मनुष्य का स्वभाव है। वह हर वस्तु की खूबियों-खामियों को तुलनात्मक अंदाज में देखता-परखता है। किसी भी वस्तु की गुणवत्ता उसके समांतर दूसरी वस्तु की गुणवत्ता के ज्ञान के आधार पर तय होती है। यह तुलनात्मक बोध मनुष्य के स्वभाव-संस्कार में रचा बसा है। साहित्य के अध्ययन की तुलनात्मक पद्धति एक विशिष्ट पद्धति है, जिसमें एक से अधिक रचनाओं/रचनाकारों अथवा भिन्न-भिन्न भाषाओं में रचित साहित्य का अध्ययन किया जाता है। इसके जरिए दो भिन्न युगों या एक ही युग की दो भिन्न भाषाओं या एक ही भाषा के दो भिन्न रचनाकारों के साहित्य का अध्ययन किया जाता है। तुलनात्मक अध्ययन की इस पद्धति से भिन्न-भिन्न रचनाकारों, उनकी विचारधारा, युगीन परिस्थितियाँ, रचनाओं की भाषा शैली आदि की समानता एवं भिन्नता का अध्ययन करना आसान हो गया। इस पद्धति से निश्चित तौर पर हमारे सीमित ज्ञान क्षेत्र को विस्तार मिलता है। यह अकारण नहीं है कि आज शोध के क्षेत्र में तुलनात्मक अध्ययन की पद्धति को विशेष महत्व दिया जा रहा है।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध '**यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन**' में हिन्दी के अत्यंत महत्वपूर्ण उपन्यासकार यशपाल और असमिया के प्रतिष्ठित उपन्यासकार बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन-विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

अध्ययन की सुविधा के लिए सम्पूर्ण शोध-प्रबंध को पाँच अध्यायों में विभक्त किया गया है। शोध-प्रबंध का पहला अध्याय '**यशपाल: जीवन, रचनात्मक परिवेश एवं लेखकीय चेतना का निर्माण**' है। इस अध्याय को तीन उप-अध्यायों में बाँटा गया है।

प्रथम उप-अध्याय '**यशपाल का जीवन एवं रचनात्मक समकाल**' है। इस उप-अध्याय में यशपाल के जीवन और उनके समय के साहित्यिक परिदृश्य का विवेचन किया गया है। यशपाल का जन्म फिरोजपुर छावनी के एक खत्री परिवार में हुआ था। उनके माता-पिता का नाम क्रमश: प्रेमादेवी और हीरालाल था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा गाँव में तथा हाई स्कूल लाहौर में हुई। पंजाब नेशनल कॉलेज में पढ़ाई के दौरान उनके जीवन में एक नया मोड़ आया। पंजाब नेशनल कॉलेज में दाखिल होते ही उनका परिचय क्रांतिकारी भगतसिंह, सुखदेव और भगवतीचरण वोहरा से हुआ। सन् 1926 ई. तक वे पूरी तरह से क्रांतिकारी बन गये और अपने आपको क्रांतिकारी दल के कार्य के लिए समर्पित कर दिया। सन् 1931ई. में चंद्रशेखर आजाद की मृत्यु के बाद यशपाल हिंदुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र सेना का प्रतिनिधित्व स्वीकार करते हैं। सन् 1932 ई. में आयरिश महिला सावित्री देवी के मकान पर पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। जेल में रहते हुए उन्होंने साहित्य लिखना आरम्भ किया। इसी बीच उनकी शादी प्रकाशवती जी से हुई। शादी के कुछ ही दिनों बाद यशपाल गंभीर रूप से बीमार हो गए। इस कारण सजा की अवधि पूरी होने के सात-आठ वर्ष पहले ही 2 मार्च, 1938 को उन्हें रिहा कर दिया गया। जेल से रिहा होने के बाद उन्होंने'विप्लव' नामक पत्रिका के संपादन का कार्यभार संभाला। आजीवन रचनाशील बने रहे यशपाल की 26 दिसंबर, 1976 को मृत्यु हो गई।

यशपाल का रचनाकाल 1939 से 1974 तक फैला हुआ है जो हिन्दी कहानी के इतिहास में नई कहानी का दौर है। यशपाल के लेखन का आरंभिक युग भारत की गुलामी का युग था। यह असल में भारतीय समाज के संक्रमण का दौर था। एक ओर जहाँ भारतीय समाज तमाम किस्म की रूढ़ियों, अंधविश्वास, जातिवाद और अस्पृश्यता आदि से ग्रस्त था, वहीं दूसरी ओर यह भारतीय नवजागरण का दौर भी था जिसमें

लोकतांत्रिक प्रगतिशील मूल्यों का प्रसार तेज़ी से हो रहा था। भारतीय नवजागरण के पुरोधाओं का एक तबका मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित था। यशपाल भी उन्हीं में से एक थे। मार्क्सवाद से प्रभावित होने के कारण यशपाल के साहित्य में नैतिक मान्यताओं की प्रतिष्ठा, शोषण एवं रूढ़ि के प्रति विद्रोह, समतामूलक समाज की स्थापना, उपेक्षितों और असहायों के प्रति सहानुभूति, आदि साफ तौर पर दिखाई देती है। वहीं दूसरी ओर कुछ ऐसे साहित्यकार उभरे जो मनोविश्लेषणवाद एवं ऐतिहासिकता के आधार पर साहित्य की रचना कर रहे थे। स्वतंत्रता के पश्चात् कथा-साहित्य के क्षेत्र में पर्याप्त बदलाव आए। इसके प्रमुख कारण थे देश का विभाजन व सांप्रदायिक दंगे, स्वाधीनता के दौरान देखे गये स्वप्नों का बिखराव और इससे उत्पन्न व्यक्ति मन के अंतर्द्वंद्व, निराशा, कुंठा, संत्रास, जीवन मूल्य का विघटन, अकेलापन, स्त्री-पुरुष संबंधों में परिवर्तन आदि। इस दौर में कुछ ऐसे नए साहित्यकार उभरे जिन्होंने इन सबको अपनी कहानियों एवं उपन्यास की विषयवस्तु बनाया। विषयवस्तु के साथ-साथ शिल्प के स्तर पर भी परिवर्तन दिखाई देने लगे। इस दौर में आंचलिक और नगरीय जीवन बोध, व्यक्तिगत, पारिवारिक और स्त्री-पुरुष की यौन समस्याओं का चित्रण करनेवाला कथा-साहित्य लिखा जा रहा था। इस दौर में महिला साहित्यकारों का वर्ग भी उभरा जिन्होंने आधुनिक नारी की मानसिक यंत्रणा को अपने कथा-साहित्य में दर्शाया।

द्वितीय उप-अध्याय '**यशपाल की लेखकीय चेतना का निर्माण**' है। इस उप-अध्याय में यशपाल की रचना के प्रेरणा स्रोत एवं उनकी विचारधारा तथा लेखकीय चेतना के निर्माण की प्रकिया का विश्लेषण किया गया है। यशपाल की लेखकीय चेतना के निर्माण में उनके युग के राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक वातावरण का गहरा प्रभाव है। यशपाल के साहित्य की पृष्ठभूमि में मार्क्सवादी विचारधारा का भी गहरा असर है। साहित्य सृजन के प्रेरणास्रोत के संबंध में पूछे गए प्रश्न के उत्तर में यशपाल कहते हैं- "पार्थिव अनुभूति या कहें घटना तथ्य के आधार पर मैंने बहुत कम ही लिखा

है।... इसलिए, मेरी रचनाओं की मूल ध्वनि स्वीकृत मान्यताओं और वर्तमान परिस्थितियों के अंतर्विरोध की ही रही है।"[1]

तीसरा उप-अध्याय '**यशपाल की साहित्यिक उपलब्धि**' है। इस उप-अध्याय में यशपाल द्वारा रचित विविध प्रकार के साहित्य की चर्चा की गई है। आधुनिक हिन्दी साहित्य जगत में यशपाल का महत्वपूर्ण स्थान है। तत्कालीन समाज में फैली आर्थिक विषमता, समाजिक समस्या, वर्ग भेद की समस्या, विवाह की समस्या, राजनीति और प्रेम तथा स्त्री-पुरुष संबंध का सम्यक् चित्रण उनके साहित्य की निजी विशेषता है। इन्होंने अपने साहित्य में वर्तमान समाज की जर्जर मान्यताओं के खोखलेपन को यथार्थवादी ढंग से प्रस्तुत किया है। उन्होंने साहित्य की विविध विधाओं में अपनी कलम सफलतापूर्वक चलाई। साथ ही वे 'विप्लव' पत्रिका के संपादन कार्य से भी जुड़े रहे। उनके द्वारा रचित प्रमुख ग्यारह उपन्यास हैं-

1. दादा कामरेड, 2. देशद्रोही, 3. दिव्या, 4. गीता (पहले पार्टी कामरेड नाम से प्रकाशित हुआ था), 5.मनुष्य के रूप, 6. अमिता, 7. झूठा सच (दो भाग), 8. बारह घंटे, 9. अप्सरा का शाप, 10. क्यों फँसे, 11. मेरी तेरी उसकी बात (इस उपन्यास के लिए उन्हें 1976 ई. में साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ।) इसके अलावा उनके सत्रह कहानी संग्रह, दस निबंध संग्रह, तीन यात्रा साहित्य, तीन एंकाकी तथा आत्मकथा सिंहावलोकन(भाग-1, भाग-2, भाग-3) भी प्रकाशित हैं।

दूसरा अध्याय '**बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य: जीवन, साहित्यिक परिवेश एवं रचनाशीलता**' है। प्रस्तुत अध्याय को तीन उप-अध्यायों में विभाजित किया गया है। प्रथम उप-अध्याय '**बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के जीवन प्रसंग**' है। इस उप-अध्याय में

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के जीवन, विशेषकर साहित्यिक जीवन के बारे में चर्चा की गयी है। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का जन्म शिवसागर जिले के साफ्राइ में हुआ था। इनके पिता का नाम शशिधर भट्टाचार्य और माता का नाम आइदेउ भट्टाचार्य है। इनकी प्रारंभिक शिक्षा साफ्राइ में ही हुई और इसी समय उनके साहित्यिक जीवन का अंकुरण भी हुआ। इन्होंने जोरहाट के सरकारी विद्यालय से स्कूली शिक्षा और गुवाहाटी के कॉटन कॉलेज(तत्कालीन) से स्नातक की पढ़ाई पूरी की। विज्ञान के छात्र होते हुए भी वे आजीवन साहित्य का दामन पकड़े रहे। स्नातक करने के बाद विधि की पढ़ाई के लिए कलकत्ता गये। वहाँ रहते हुए वे असमिया पत्रिका 'बाँही' के सहायक सम्पादक के रूप में काम करने लगे। हालाँकि वे कलकत्ता में ज्यादा दिनों तक नहीं रह सके। वहाँ हुए सांप्रदायिक दंगों के कारण उन्हें गुवाहाटी लौट आना पड़ा। यहाँ आकर उन्होंने कुछ दिनों तक '**दैनिक असमिया**' पत्रिका के सहायक सम्पादक के रूप में काम किया। कुछ दिनों तक गुवाहाटी में रहने के बाद अपने दोस्त रिचाङ काइचिङ के बुलाने पर वे नागालैण्ड चले गये। नागा जीवन के वास्तविक अनुभवों के आधार पर उन्होंने सन् 1960 ई. में 'इयारुइंगम' नामक उपन्यास लिखा। इस उपन्यास के लिए उन्हें सन् 1961 ई. में '**साहित्य अकादमी**' पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 1952 में वे नागालैण्ड से गुवाहाटी लौटे। उन्होंने 'रामधेनु' और 'सादिनीया नवयुग' पत्रिका का संपादन कार्य किया। साहित्यिक कामों में व्यस्त रहने के बावजूद 1953 ई. में उन्होंने असमिया विषय में मुक्त (प्राइवेट) परीक्षार्थी के तौर पर स्नातकोत्तर की पढ़ाई पूरी की। इसके बाद 1977 ई. में उन्होंने 'असमिया साहित्य में हास्य-व्यंग्य' शीर्षक से गोहाटी विश्वविद्यालय से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। 1958 ई. मेंविनीता भट्टाचार्य के साथ उनकी शादीहुई। उनके द्वारा रचित **'मृत्युंजय'** उपन्यास के लिए उन्हें 1979 में **'ज्ञानपीठ' पुरस्कार** से नवाज़ा गया। 'ज्ञानपीठ' पुरस्कार पाने वाले असमिया भाषा के

वे पहले साहित्यकार हैं। सन् 1983 ई. से लेकर 1985 ई. तक वे असम साहित्य सभा के अध्यक्ष रहे। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य आजीवन साहित्य रचना में लगे रहे। 6 अगस्त, 1997 को उनकी मृत्यु हो गई।

द्वितीय उप-अध्याय '**बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का साहित्यिक परिवेश**' है। इस उप-अध्याय में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के समकालीन साहित्यिक परिदृश्य तथा उनकी साहित्य-दृष्टि आदि का विश्लेषण किया गया है। उनका रचना काल मूल रूप से बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध है। असमिया साहित्य में एक प्रख्यात साहित्यकार के रूप में जिस दौर में वे उभरे, वह स्वातंत्र्योत्तर दौर था। स्वतंत्रता के पूर्व असम में औद्योगिक संस्थान नहीं थे, परन्तु आज़ादी के बाद असम का औद्योगीकरण किया गया, जिसके कारण स्वातंत्र्योत्तर असम में मजदूरों से जुड़ी समस्याएँ दिखाई देने लगीं। आज़ादी के बाद की महँगाई, भूमि लगान में वृद्धि, आदि ने मजदूर-किसान एवं निम्न मध्यवर्गीय जनता की कमर तोड़ दी। ऐसे में आज़ादी के प्रति आम जनता का मोहभंग स्वाभाविक था। इस मोहभंग ने असमिया समाज में प्रगतिवादी विचारधारा को जन्म दिया। फलस्वरूप इस दौर के साहित्यकारों एवं उनके साहित्य में प्रगतिवाद का प्रभाव परिलक्षित होता है। साठ के दशक से यह धारा प्रखर रूप में प्रवाहित होने लगी। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य अपनी युवावस्था में मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित थे। फलत: उनकी आरंभिक कुछ कहानियों एवं उपन्यासों में नैतिक मान्यताओं की प्रतिष्ठा, शोषण एवं रूढ़ि के प्रति विद्रोह, समतामूलक समाज की स्थापना, उपेक्षितों और असहायों के प्रति सहानुभूति दिखाई देती है। उनके द्वारा रचित प्रथम उपन्यास 'राजपथे रिङियाय' एवं 'कलंग आजिउ बइ', 'वार्ड नं दुइ' आदि कहानी संग्रहों में प्रखर प्रगतिवादी स्वर दिखाई देता है। नवकांत बरुवा, योगेश दास आदि इस धारा के प्रमुख असमिया साहित्यकार हैं। सन् 1960 के आस-पास असमिया साहित्य में राजनैतिक आदर्शाभिव्यक्तिपरक उपन्यास की

एक नई धारा का उभार हुआ। इस दौर के ज्यादातर साहित्यकार राजनीति से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जुड़े हुए थे। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'राजपथे रिङियाय', 'इयारुइंगम', 'प्रतिपद', 'मृत्युंजय' आदि उपन्यासों में राजनैतिक चेतना स्पष्ट रूप में दिखाई देती है। वे गम्भीर रूप से मानवतावादी हैं। अत: उनकी राजनैतिक चेतना का लक्ष्य किसी राजनैतिक विचार की प्रतिष्ठा करना नहीं है, बल्कि उनका लक्ष्य मनुष्य है तथा राजनैतिक विचार उस लक्ष्य की प्राप्ति का सहायक मात्र। इसके अलावा इस दौर में असमिया में ऐतिहासिक उपन्यास, जीवनीपरक उपन्यास, मनोविश्लेषणवादी उपन्यास, आंचलिक उपन्यास, नगर केंद्रित उपन्यास, विज्ञानकथापरक उपन्यास तथा कुछ असम से बाहर की पृष्ठभूमि पर आधारित उपन्यास रचे गये।

तृतीय उप-अध्याय **'बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य की रचनाशीलता'** है। इस उप-अध्याय में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य की रचनाओं तथा उनकी साहित्यिक उपलब्धि की चर्चा की गयी है। असमिया भाषा साहित्य के 'नव्य-काव्य परम्परा' में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का नाम अत्यंत आदर के साथ लिया जाता है। सामाजिक अन्याय के प्रति वे अत्यंत सजग थे, फलस्वरूप उनके ज्यादातर साहित्य की विषयवस्तु सामाजिक यथार्थ पर आधारित है। उन्होंने विभिन्न विधाओं में साहित्य-सृजन किया। उनके द्वारा रचित लगभग बीस उपन्यास हैं। इसमें से छह उपन्यास हिन्दी में अनूदित हैं, जिनके नाम हैं- **1. माँ (आइ), 2. प्रजा का राज (इयारुइंगम), 3. शतघ्नी (शतघ्नी), 4. मृत्युंजय (मृत्युंजय), 5. अँधेरा-उजाला (मुनि चुनिर पोहर), 6. पाखी घोड़ा (फूलकौंवरर पाखी घौंरा)।** इसके अलावा इनकी रचनाओं में तीन कहानी संग्रह, एक कविता संग्रह, छ: जीवनी साहित्य, दो साहित्य-संस्कृतिमूलक ग्रंथ, चार अनूदित ग्रंथ तथा दो यात्रा-

साहित्य शामिल हैं। इसके साथ ही वे 'सादिनीया नवयुग', 'रामधेनु', 'बाँही', 'जनता' आदि पत्र-पत्रिकाओं का संपादन भी करते रहे।

तीसरा अध्याय '**यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री और स्त्री-पुरुष संबंध**' है। इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में बाँटा गया है। प्रथम उप-अध्याय '**यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री**' में यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में उपस्थित नारी और उससे जुड़े प्रश्नों के तुलनात्मक विश्लेषण के साथ-साथ दोनों लेखकों की स्त्री-दृष्टि का विश्लेषण भी किया गया है। यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य अपने उपन्यासों में स्त्री-पुरुष के समानाधिकार के स्वर को पूरी ताकत के साथ मुखरित करते हैं। यही कारण है कि उन्होंने अपने लगभग सभी उपन्यासों में ऐसी स्त्री पात्रों को रचा जो सदियों से चली आ रही सड़ी-गली परंपरा के प्रति विद्रोह करते हुए समाज में नारी जागृति का आह्वान करने का प्रयास करती हैं। यशपाल के उपन्यास 'दादा कामरेड' की शैल आधुनिक विचारों वाली युवती है। वह समाज द्वारा बनाये गये उस बंधन को स्वीकार नहीं करती जो स्त्री को पुरुष की दासता स्वीकार करने के लिए बाध्य करता हो। वह नारी को स्वतंत्रता के अधिकार से वंचित रखने वाले पुरुष समाज पर कटाक्ष करती हुई हरीश से कहती है-"यदि स्त्री को किसी न किसी की बनकर ही रहना है तो उसकी स्वतंत्रता का अर्थ ही क्या हुआ? स्वतंत्रता शायद इसी बात की है कि स्त्री एक बार अपना मालिक चुन ले, परंतु गुलाम उसे जरूर बनना है।"[2] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'अँधेरा-उजाला' उपन्यास की स्त्री पात्र सेउती और अलका भी यशपाल की शैल (दादा कामरेड) की भाँति पुरुष के अधीन गुलाम बनकर रहने का विरोध करती है। सेउती पुरुष प्रधान समाज को चुनौती देती हुई मीनधर से स्पष्ट कहती है- "मेरी भी क्या एक जिंदगी नहीं है? मैं पुरुष की दया पर ही हमेशा जिंदा रहना नहीं चाहती।" [3]

यशपाल पारंपरिक विवाह संस्था को स्त्री की स्वंत्रता में बाधक समझते हैं। अत: उन्होंने अपने उपन्यासों में ऐसी स्त्री पात्रों को रचा जो सदियों से चली आ रही इस पारंपरिक विवाह संस्था को निरर्थक मानती है। 'दादा कामरेड' की शैल, 'मनुष्य के रूप' की मनोरमा, 'मेरी तेरी उसकी बात' की उषा ऐसी ही स्त्री पात्र हैं, जो उपन्यास में विवाह संस्था का विरोध करती हुई दिखाई देती हैं। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'पाखी घोड़ा' उपन्यास की माकन पुरुष प्रधान समाज में विवाह के नाम पर स्त्री के ऊपर किये जाने वाले शोषण के प्रति विद्रोह करती हुई समाज में जागरुकता फैलाने का दृढ़ निश्चय करती है।

यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, ये दोनों उपन्यासकार शिक्षा को स्त्री मुक्ति का अन्यतम साधन मानते हैं। इन दोनों उपन्यासकारों का मानना है कि जब तक स्त्री शिक्षित नहीं होगी, तब तक वह अपने सामाजिक अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं हो सकती। शिक्षा स्त्री को उसके सामाजिक अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति सजग बनाने में मुख्य भूमिका अदा करती है। अत: यह अकारण नहीं है कि यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों की ज्यादातर स्त्री पात्र, चाहे वे शहरी हों, ग्रामीण हों या फिर आदिवासी हो, वे सभी शिक्षित, विवेकशील एवं अपने सामाजिक कर्तव्यों और अधिकारों के प्रति अत्यंत सजग दिखाई देती हैं। यशपाल द्वारा रचित उपन्यास 'दादा कामरेड' की शैल एम.ए. है, 'गीता' की गीता, 'मेरी तेरी उसकी बात' की उषा और माया रिसर्च स्कॉलर हैं, 'झूठा सच' की तारा आई.ए.एस. अधिकारी और कनक एम.ए. है, 'दिव्या' की दिव्या को नृत्यकला में सरस्वती का खिताब मिला है। वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास 'इयारुइंगम' की खुटिंगला (नागा जनजाति की स्त्री) अंग्रेजी स्कूल से पढ़ी हुई है, 'अँधेरा-उजाला' की बीनू(ग्रामीण स्त्री) बी.ए. है तो अलका (शहरी

स्त्री) एम. ए. है, 'पाखी घोड़ा' की जयंती (ग्रामीण युवती) नृत्यकला में पारंगत है तो माकन शांतिनिकेतेन से पढ़ी हुई है। ये सब अपने सामाजिक अधिकारों के प्रति सजग स्त्रियाँ हैं, जो दूसरों के बहकावे में नहीं आतीं और पुरुषों के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर चलने का सामर्थ्य रखती हैं।

इन दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में स्त्री की आर्थिक स्वतंत्रता पर विशेष बल दिया है। उनका मानना है कि जब तक नारी आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर नहीं होगी, तब तक वह शोषण का शिकार होती रहेगी। यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ने अपने उपन्यासों की स्त्री पात्रों जैसे शैल(दादा कामरेड), चंदा(देशद्रोही), दिव्या(दिव्या) और शारेंला (प्रजा का राज) के जरिए आर्थिक परतंत्रता के कारण दु:ख झेलती हुई स्त्री का चित्रण किया है। इसके अलावा यशपाल ने सोमा (मनुष्य के रूप), उषा (मेरी तेरी उसकी बात) तथा बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने कॅली दीदी (मृत्युंजय), माकन (पाखी घोड़ा), अलका (अँधेरा-उजाला) आदि जैसी स्त्री पात्रों के जरिए आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने के कारण अपनी शर्तों पर जीवन जीने में सक्षम हुई स्त्री का चित्रण किया है। इस तरह यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ने ही अपने उपन्यासों में आर्थिक रूप से परतंत्र स्त्री, चाहे वह किसी भी युग, किसी भी वर्ग या किसी भी समाज की हो, की पीड़ा और उसके संघर्ष को दर्शाया है। साथ ही ये दोनों उपन्यासकार अपने-अपने उपन्यासों की नारी पात्रों द्वारा समस्त नारी जाति को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने का संदेश देते हैं, ताकि वह समाज में पुरुष के समान अधिकार प्राप्त कर सके और स्वतंत्र रूप से अपना जीवन अपनी शर्तों पर जी सके।

यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इन दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में राष्ट्रीय आंदोलन में पुरुषों की ही भाँति स्त्रियों की बराबर की हिस्सेदारी को दर्शाया है। एक ओर जहाँ यशपाल के उपन्यासों की स्त्रियाँ जैसे 'मेरी तेरी उसकी बात' की उषा, 'गीता' की गीता प्रत्यक्ष रूप से आंदोलन में भाग लेती हुई दिखाई देती हैं, वहीं दूसरी ओर बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों की स्त्री पात्र जैसे 'मृत्युंजय' की कॅली दीदी व डिमि और 'पाखी घोड़ा' की माकन परोक्ष रूप से आंदोलन में भाग लेती हुई दिखाई देती हैं। भले ही इन दोनों उपन्यासकारों द्वारा चित्रित स्त्रियों के वर्ग, समाज, व्यक्तित्व अलग-अलग हैं, लेकिन स्वराज-प्रेम एवं अपने दायित्व के प्रति उनकी एकनिष्ठता उन्हें एक करती है। उन सब में गजब का जोश और समर्पण दिखाई देता है। वे अपने कर्तव्य पालन के लिए किसी भी हद तक जाने का सामर्थ्य रखती हैं।

यशपाल अपने उपन्यासों में नारी के प्रति धर्म के विकृत अप्रोच को उजागर करते हैं। इसका स्पष्ट रूप हमें 'झूठा सच' तथा 'दिव्या' उपन्यास में दिखाई देता है। 'झूठा सच' उपन्यास की तारा जब अपने पति के अत्याचार से मुक्ति पाने के लिए गली में कूद जाती है, उस वक्त नब्बू नामक एक मुसलमान युवक उसे उठा ले जाता है। नब्बू की कैद से इस्लाम धर्मोपदेशक हाफिज तारा को छुड़ाता है और अपने घर में आश्रय देता है। हाफिज के घरवाले तारा को अपने घर की बहू बनाना चाहते थे, जिसके कारण हाफिज तारा को धर्म परिवर्तन करने को कहता है। लेकिन जब तारा इस्लाम धर्म अपनाने से इनकार कर देती है तो हाफिज उसे एक गुण्डे के हाथों में सौंप देता है। इतर धर्म की स्त्री के प्रति इस्लाम की या किसी भी धर्म की यह कैसी सदाशयता है! इसी तरह 'दिव्या' उपन्यास में यशपाल ने नारी के प्रति बौद्ध धर्म के विकृत अप्रोच पर व्यंग्य किया है। लेकिन बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री के प्रति धर्म का यह

विकृत अप्रोच दिखाई नहीं देता। इसका कारण संभवतः यही हो सकता है कि वे स्वयं धर्म के प्रति आस्थावान थे।

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ने अपने उपन्यासों में परम्परावादी भारतीय नारी का चित्रण किया है। लेकिन दोनों उपन्यासकारों की दृष्टियों में पर्याप्त भिन्नता है। एक ओर जहाँ बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य 'मृत्युंजय' उपन्यास की गोसाइन, अनुपमा जैसी स्त्रियों के जरिए परम्परावादी भारतीय नारी की सहनशीलता, पतिपरायणता और त्याग की महानता को दर्शाते हैं, वहीं यशपाल अपने उपन्यासों की स्त्री पात्रों जैसे यशोदा (दादा कामरेड), चंदा (देशद्रोही), शकुंतला (अप्सरा का शाप)आदि के जरिए परम्परावादी भारतीय नारी के शोषण और उसके असहाय रूप को उजागर करते हैं।

यशपाल अपने उपन्यासों में स्त्रियों के लिए सदियों से चले आ रहे नैतिक मूल्य एवं मर्यादा की शृंखला की कड़ियों को तोड़ने का भरसक प्रयास करते हैं। अत: उन्होंने ऐसी स्त्री पात्रों को रचा हैजो यौन-संबंध की अपनी स्वतंत्रता एवं इच्छा को व्यक्त करना अपना मानवीय अधिकार मानती हैं।'दादा कामरेड' की शैल, 'झूठा सच' की डॉ. श्यामा, और 'मेरी तेरी उसकी बात' की उषा और माया स्वतंत्र यौन संबंध का समर्थन करती हुई दिखाई देती हैं। शैल बचपन से लेकर किशोरावस्था तक कई पुरुषों के सम्पर्क में आती है और उनके साथ उसका शारीरिक संबंध भी होता है। यहाँ तक की शैल स्वेच्छापूर्वक हरीश को अपनी देह सौंपती है, जिससे वह गर्भवती भी हो जाती है, परंतु वह अपने इस कार्य को अनैतिक नहीं मानती, बल्कि वह इसे अपना शारीरिक एवं नैसर्गिक अधिकार मानती है। वह समाज की परवाह न कर स्पष्ट शब्दों में अपने पिता से कहती है- "स्त्री होने के नाते मेरा जो प्राकृतिक अधिकार है, उससे कुछ अधिक मैंने नहीं

किया है। मैं मनुष्य हूँ; मनुष्य बनी रहना चाहती हूँ।"[4] लेकिन बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य स्त्री की यौन स्वतंत्रता को अनैतिक मानते हैं। उनका मानना है कि स्त्रियों के ये अनैतिक कार्य एक आदर्श समाज के निर्माण में बाधा उत्पन्न करते हैं। यही कारण है कि उनके द्वारा रचित प्रायः सभी स्त्री पात्र चाहे वह शहरी स्त्री अलका हो या ग्रामीण स्त्री डिमि, कॅली दीदी या आइधन- ये अपने पति के अलावा किसी भी दूसरे पुरुष के साथ शारीरिक संबंध स्थापित करते हुए दिखाई नहीं देतीं। लेकिन 'पाखी घोड़ा' उपन्यास की चंपा एक ऐसी स्त्री पात्र है, जिसका विवाहेतर संबंध पंचानन नाम के एक विवाहित पुरुष से होता है। चंपा के इस विवाहेतर संबंध को और उसकी स्वतंत्र प्रवृत्ति को बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य चंपा के भटकाव के रूप में चित्रित करते हैं। चंपा इसी भटकाव में नशे की हालत में सड़क दुर्घटना में मर जाती है। ज़ाहिर है बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य स्त्री की यौन स्वतंत्रता को स्वेच्छाचार के रूप में प्रस्तुत करते हैं और इसलिए उसका समर्थन भी नहीं करते।

द्वितीय उप-अध्याय **'यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री-पुरुष संबंध'** है। इस उप-अध्याय में यशपाल एवं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में प्रेम तथा स्त्री-पुरुष संबंध का विश्लेषण किया गया है। इसी क्रम में दोनों लेखकों की दृष्टियों की तुलना भी की गयी है। इन दोनों ने ही स्त्री-पुरुष संबंध में प्रेम को महत्व दिया है। यशपाल का मानना है कि प्रेम महज आंतरिक अनुभूति नहीं है। प्रेम का आकर्षण काम प्रेरित होता है। वे स्त्री-पुरुषों के आपसी आकर्षण को स्वाभाविक मानते हैं।यशपाल स्त्री-पुरुष के पारस्परिक संबंध को अनिवार्य मानते हुए 'दिव्या' उपन्यास के पात्र मारिश के माध्यम से कहते हैं-"भद्रे, नारी सृष्टि का साधन है। सृष्टि की आदि शक्ति का क्षेत्र वह समाज और कुल का केंद्र है। पुरुष उसके चारों ओर घूमता है जैसे कोल्हू का बैल।"[5] आगे वह फिर कहता है- "नारी प्रकृति के विधान से नहीं, समाज के ही विधान से

भोग्य है। प्रकृति में और समाज में भी स्त्री और पुरुष अन्योन्याश्रय हैं। पुरुष का प्रश्रय पाने से ही नारी परवश है, परंतु भद्रे नारी के जीवन की सार्थकता के लिये पुरुष का आश्रय आवश्यक है और नारी भी पुरुष का आश्रय है।"[6]

यशपाल 'बारह घंटें' उपन्यास के पात्र लारेंस के माध्यम से स्त्री-पुरुष के प्रेम को आध्यात्मिक मानने से इंकार करते हैं एवं विख्यात 'सावित्री- सत्यवान' की पौराणिक कथा को पार्थिव सिद्ध करते हुए कहते हैं- "सावित्री ने सत्यवान से अपने प्रेम की निष्ठा पूरी कर सकने के लिये यम से आग्रह किया-इसमें ऐसे प्राण डाल दो कि सौ पुत्र उत्पन्न कर सकने तक जवान बना रहे।...आत्मिक प्रेम से सौ पुत्र हो जायेंगे! सावित्री की निष्ठा में आत्मिक प्रेम की कल्पना थी या पार्थिव की आवश्यकता?"[7]

लेकिन बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य प्रेम के आध्यात्मिक रूप को स्वीकार करते हैं। उनके उपन्यासों के स्त्री-पुरुष पात्रों जैसे 'मृत्युंजय' के डिमि और धनपुर, 'पाखी घोड़ा' के सुमति बहन और विमल भाई, 'अँधेरा-उजाला' के मीनधर और आइधन के बीच प्रेम का आध्यात्मिक रूप दिखाई देता है। 'मृत्युंजय' की डिमि एक विवाहित स्त्री है। वह अपने बचपन के प्रेमी धनपुर से अपने प्रेम का इज़हार करती है और उसकी मौत तक उसके साथ रहती है, परन्तु अपनी मर्यादाओं को नहीं लाँघती। इस संबंध में डॉ. अमरेन्द्र त्रिपाठी अपने एक लेख में लिखते हैं-"डिमि-धनपुर के प्रेम को भट्टाचार्य जी ने आध्यात्मिक स्तर तक पहुँचाकर स्त्री-पुरुष संबंधों को एक नई गरिमा प्रदान की है।"[8]

यशपाल ने स्त्री-पुरुष संबंधों का विश्लेषण जहाँ मार्क्सवादी नज़रिए से किया है, वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के साहित्य में स्त्री-पुरुष संबंध गाँधीवाद से प्रभावित दिखाई देता है। यशपाल विवाह-पूर्व एवं विवाहेतर प्रेम को सहज एवं स्वाभाविक मानते हैं; वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इस मसले को सहज नहीं मानते और इसलिए

उनके उपन्यासों में प्रायः जहाँ कहीं भी विवाह-पूर्व अथवा विवाहेतर प्रेम दिखाई पड़ता है, वहाँ उसकी परिणति अंततः आध्यात्मिक प्रेम के रूप में होती है। यशपाल विवाह-पूर्व काम-संबंध को भी अनैतिक नहीं मानते, जबकि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के लिए विवाह-पूर्व काम हमेशा अनैतिक है, इसीलिए वे ऐसे संबंधों की आदर्श परिणति विवाह में देखते हैं।

चौथा अध्याय '**यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों के विविध पक्ष**' है। इस अध्याय को चार उप-अध्यायों में बाँटा गया है। प्रथम उप-अध्याय '**जाति-वर्ण संबंधी दृष्टि**' है। इस उप-अध्याय में यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में वर्णित जाति-वर्ण संबंधी दृष्टिकोण का विश्लेषण किया गया है। यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इन दोनों के उपन्यासों में जाति-वर्ण संबंधी मुद्दों को उठाया गया है। यशपाल जाति-वर्ण संबंधी प्रचलित मान्यताओं का घोर विरोध करते हैं। उन्होंने अपने उपन्यासों में जाति-वर्णव्यवस्था की कटुता को उजागर किया है। जाति-वर्णव्यवस्था का समर्थन करने वाली जातियाँ स्वयं को सर्वाधिक पवित्र और श्रेष्ठ मानती हैं। उनकी धारणा है कि निम्न वर्ण-जाति के व्यक्ति के स्पर्श मात्र से ही उनका धर्म नष्ट हो जाता है। यही कारण है कि 'दिव्या' उपन्यास में मद्र गणराज्य के महाश्रेष्ठी प्रेस्थ(जो किसी समय दास था) का पुत्र पृथुसेन शस्त्र परीक्षा में 'सर्वश्रेष्ठ खड्गधारी' का गौरव युक्त स्थान प्राप्त करने के बावजूद जब 'सरस्वती पुत्री' दिव्या की शिविका को कंधा लगाने आगे बढ़ता है, तब कुलीन रूद्रधीर उसका विरोध करते हुए कहता है- "दास-पुत्र को अभिजात वंश के युवकों के साथ शिविका में कन्धा देने का अधिकार नहीं है।"[9] उसके प्रत्युत्तर में पृथुसेन कहता है कि "मेरे अधिकार का निश्चय मेरा खड्ग करेगा।"[10] इस प्रसंग के जरिए यशपाल ने ब्राह्मणों की छद्म श्रेष्ठता तथा उनके विशेषाधिकार को निम्नवर्ग द्वारा दी गयी चुनौती को दर्शाया है। ब्राह्मण धर्म की

कुलीनता का छद्म उस समय तार-तार हो जाता है, जब दिव्या अपनी कुलीनता की मर्यादा को त्यागकर पृथुसेन को अपना सर्वस्य सौंप देती है। यशपाल 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में ब्राह्मणवादियों द्वारा अकारण दिखायी गई श्रेष्ठता पर व्यंग्य करते हुए कोहली से कहलवाते हैं- "परलोक में दो चुल्लू जल के लिये तरसने का वहम। पितरों के श्राद्ध के नाम पर ब्राह्मणों को डैथ ड्यूटी दो। ब्राह्मण का पेट परलोक माल भेजने की ऐजेंसी। कभी स्वर्ग पहुँचे माल की रसीद आयी?...ब्राह्मण एजेंट सिर्फ हिंदू का माल स्वर्ग पहुँचाता है। बाकी दुनिया की आत्मा परलोक में भूखी-प्यासी रहती है।"[11] साथ ही यशपाल ने 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में ब्राह्मणों द्वारा अछूतों पर किये गये अत्याचार का वर्णन भी किया है। ब्राह्मणवादी क्रूरता से तंग आकर ब्राह्मण लड़का देवदत्त पण्डित अपना धर्म परिवर्तन कर ईसाई बन जाता है और स्पष्ट रूप से कहता है कि मैं हिंदुओं की क्रूरता और कुसंस्कारों को मिटाने के लिए अपना जीवन अर्पित कर रहा हूँ।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य भी असमिया समाज में फैले जाति-भेद से भली-भाँति परिचित थे। उनकी दृष्टि में प्रचलित जाति-भेद तुच्छ है। वे मानव को मानव धर्म की दृष्टि से देखने के पक्षधर हैं। उन्होंने अपनी इसी विचारधारा को उपन्यासों में विभिन्न पात्रों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। 'मृत्युंजय' में उपन्यासकार ने तत्कालीन समाज में मौजूद धार्मिक आडंबर, जातिगत भेद-भाव को मूल्यहीन मानकर भेदभाव रहित एक ऐसे आदर्श समाज की प्रतिष्ठा की कल्पना को अभिव्यक्त किया है, जिसमें जात-पात के कुसंस्कारों का संकीर्ण मनोभाव न हो। उपन्यास की आदिवासी स्त्री पात्र डिमिके हाथों से गोसाईं जी के चाय पीने के लिए तैयार हो जाने पर आहिना कोंवर कहते हैं-"हे कृष्ण आपकी मति मारी गयी है क्या गोसाईं जी? डिमि के हाथ की चाय पीएँगे, हे कृष्ण! मैं तो नहीं लूँगा, हे कृष्ण!"[12] आगे फिर कहते हैं- "जाति देने से तो अफीम खाना बेहतर है,

हे कृष्ण।"[13] इसके प्रत्युत्तर में भिभिराम रामायण-महाभारत से उदाहरण देते हुए आहिना कोंवर के मन में व्याप्त संकीर्णता को दूर करने की कोशिश करता हुआ कहता है- "यदि भगवान कृष्ण कुब्जा मालिन के घर भोजन कर सकते हैं, यदि सीता अशोक वन में राक्षसी के हाथ का भोजन खाकर जी सकती हैं, तो क्या हम डिमि के हाथ का खाकर अपनी जाति नहीं बचा सकते? सच तो यह है कि जात-पाँत ही चूहे का बिल है: एकदम घुप्प अँधेरा। इससे हम न निकल सकते हैं, न इसमें घुस ही सकते हैं और ऐसे बाहर साँस भी नहीं ले सकते हैं। फिर आदमी की पहचान तो उसके काम से होती है।"[14]

असमिया समाज में उच्चस्थान पर बैठे ब्राह्मण एवं सत्राधिकार एक ओर जहाँ शंकरदेव, माधवदेव के प्रति धार्मिक आस्था रखते हैं, वहीं दूसरी ओर निम्नजाति के लोगों को अवहेलित करते है। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य 'माँ' उपन्यास के पात्र केंदुकलाई के माध्यम से ब्राह्मणों एवं सत्राधिकारों के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त करते हुए लिखते हैं-"क्यों, तुझे मालूम नहीं है कि कलिता का वंश हमसे कितनी घृणा करता है। उनके 'नाम-घर' में हमें प्रवेश तक करने नहीं दिया जाता। हम उनसे किस बात में कम हैं? वे हमको आदमी भी मान नहीं सकते।"[15]

यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इन दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में अंतरजातीय विवाह के माध्यम से जात-पात के भेदभाव को दूर करने का प्रयास किया है। यशपाल ने 'मनुष्य के रूप' उपन्यास में हिन्दू लड़की मनोरमा एवं पारसी युवक सुतलीवाला तथा 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में ईसाई लड़की उषा एवं हिन्दू लड़के अमरकांत के विवाह को दर्शाया है। वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने भी 'माँ'उपन्यास में कलिता कुल के लड़के रजत का विवाह सूतकुल की लड़की नुमली के साथ, 'पाखी घोड़ा' उपन्यास की मुसलमान लड़की फ़िरोजा का विवाह हिन्दू युवक

रबीन दत्त के साथ तथा 'मृत्युंजय' उपन्यास की मिकिर युवती डिमि का विवाह गारो युवक डिली के साथ सम्पन्न होते हुए दर्शाया है।

द्वितीय उप-अध्याय '**वर्ग-चेतना और आर्थिक विषमता**' है। इस उप-अध्याय में इन दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में अंतर्निहित वर्ग चेतना और आर्थिक विषमता संबंधी दृष्टिकोण को रेखांकित किया गया है। यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों की विषयवस्तु चाहे सामाजिक हो या राजनैतिक, प्राय: सभी उपन्यासों में उनकी वर्गीय चेतना साफ दिखाई पड़ती है। आर्थिक आधार पर हमारा समाज दो वर्गों में बँटा हुआ है: शोषक और शोषित। यशपाल वर्ग के सवाल को मार्क्सवादी नज़रिए से देखते हैं और इसलिए समाज में मौजूद वर्गभेद को खत्म कर एक वर्गविहीन समतामूलक समाज की स्थापना के लिए वर्ग-संघर्ष के माध्यम से समाज की आर्थिक व्यवस्था में बदलाव को आवश्यक मानते हैं। ज़ाहिर है कि यशपाल केवल विचार के माध्यम से किसी किस्म के सामाजिक परिवर्तन के कोरे भाववाद में नहीं उलझते हैं। इसी संबंध में वे अपने निबंध 'देखा, सोचा, समझा' में लिखते हैं- "यह उदाहरण है समाज की आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन किये बिना, समाज में शोषित और शोषक वर्गों के मौजूद रहते, केवल विचारों के बल से समाज से अशांति और विषमता को दूर करने की कल्पना। इसे आप हृदय परिवर्तन का नाम देते हैं।"[16] यशपाल सामाजिक अर्थव्यवस्था पर किसी एक वर्ग के अधिकार को अनुचित मानते हैं। इसलिए उन्होंने समाज में फैली आर्थिक विषमता को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए वर्ग-संघर्ष को अनिवार्य माना है। 'दादा कामरेड' उपन्यास में मजदूर नेता हरीश अदालत द्वारा फाँसी की सजा सुना दिये जाने के बाद भी साम्राज्यवादी नीतियों के विरुद्ध विनाश का नारा लगाता है और दुनिया भर के मजदूरों के प्रति सहानूभुति प्रदर्शित करता है। इसी तरह 'देशद्रोही' उपन्यास का पात्र

नासिर सम्पूर्ण संसार से पूँजीवाद को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिये तत्पर दिखाई देता है।

सामाजिक अर्थव्यवस्था का पूँजीभूत रूप पूँजीपतियों के अधीन रहता है, जिसका प्रयोग वह सर्वहारा वर्ग के शोषण के लिये करता है। 'दादा कामरेड' उपन्यास का पात्र अख्तर पूँजीपतियों का प्रतिनिधित्व करने वाले इंजीनियर, कश्मीरी और जाबर को जान से मार डालने का इरादा रखता है। कारखाने में फैली अव्यवस्था से ऊब कर वह हरीश से कहता है- "अरे सुन तो, तमंचा है तेरे पास। बस मुझे तीन आदमियों को मारना है। एक इंजीनियर, दूसरा साला ये कश्मीरी और तीसरा वह हरामी जाबर! इनके मारे सारी लाइन बरबाद है। यह जाबर हरेक मजदूर से महीनों दुअन्नी रुपया लिये जाता हैं साले ने अपना साहूकारा अलग खोल रखा है। आना रुपया रोज का सूद लेता है, और जब अपने मजदूर एक होने लगते हैं, साला दो चार को निकाल बाहर करता है और नये मजदूर ले आता है। साले ने बीसियों खुफिया लगा रखे हैं। तेरी कसम, इसने रफीक को पीटने के लिये गुण्डे छोड़ रखे हैं! मैं इन तीन को ठंडा कर दूँ तो हजारों के दिल ठंडे हो जायेंगे।"[17] अख्तर की इन पंक्तियों में मजदूरों की वर्ग चेतना मुखरित हो रही है।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य समतामूलक समाज की स्थापना के लिए वर्ग-संघर्ष की अनिवार्यता को स्वीकार नहीं करते। वे गाँधीवादी संशोधनवाद के रास्ते समाज में समरसता कायम करना चाहते हैं। 'पाखी घोड़ा' के पात्र रविचंद्र के जरिए अपने मनोभाव को व्यक्त करते हुए वे कहते हैं- "असमिया जाति को धनी और गरीब इन दो भागों में बाँट देने का मतलब है, इस छोटी-सी जाति के टुकड़े-टुकड़े कर देना, इनकी एकता नष्ट कर देना और एकता नष्ट कर देने का मतलब है असमिया संस्कृति की उन्नति

को सदा-सदा के लिए अवरुद्ध कर देना।"[18] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य वर्गभेद रहित एक समतामूलक समाज की स्थापना के लिएगाँधी के गठनमूलक कार्य केमहत्व को स्वीकार करते हैं।'अँधेरा-उजाला'उपन्यास का मीनधर ग्रामीण समाज में फैले शोषित एवं शोषक वर्ग के अंतर को गाँधी के गठनमूलक कार्य के जरिए समाप्त करने का प्रयत्न करता है। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ग्रामीण समाज में फैली आर्थिक विषमता को समाप्त करने के लिए वर्ग-संघर्ष के बदले श्रेणी मैत्री को आवश्यक मानते हैं। 'अँधेरा-उजाला' उपन्यास का पात्र गजेन शर्मा मीनधर द्वारा वर्ग-संघर्ष की अनिवार्यता संबंधी प्रश्न पूछे जाने पर कहता है-"इस गाँव में उत्पीड़न करने वाला मालिक तो कोई नहीं है। रैयत लोग ही मालिकों से ज्यादा प्रमुख हो उठे हैं। सब लोग मिलकर प्रयास करें तो समूचे गाँव को एकजुट कर उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।...कोई उँचा-नीचा नहीं रहेगा, सभी मिहनत-मजदूरी करेंगे, और सबको बराबर का हिस्सा मिलेगा।"[19]

तृतीय उप-अध्याय '**भारत छोड़ो आंदोलन की औपन्यासिक अभिव्यक्ति**' में इन दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में भारत छोड़ो आंदोलनकी अभिव्यक्ति तथा उत्तर भारत और पूर्वोत्तर भारत में उस आंदोलन के प्रभाव का तुलनात्मक विश्लेषण किया गया है। यशपाल का 'मेरी तेरी उसकी बात' और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का 'मृत्युंजय'-ये दोनों ही उपन्यास भारत छोड़ो आंदोलन की पृष्ठभूमि में लिखा गया है। इन दोनों ही उपन्यासों में समाजवादियों द्वारा गुप्त रूप से अंजाम दी गयी क्रांतिकारी गतिविधियों को दर्शाया गया है। 'मेरी तेरी उसकी बात'में उषा, रूद्रदत्त पाठक, बिरजू तथा उनके अन्य साथी सोशलिस्ट पार्टी के प्रभाव में हैं। यशपाल ने इस उपन्यास में उत्तर भारत के इलाकों- इलाहाबाद, बनारस, लखनऊ,बिहार, आदि में जनता द्वारा, खासकर छात्रों द्वारा भूमिगत रहकर की गई क्रांतिकारी गतिविधियों जैसे- रेल दुर्घटना,

बम विस्फोट, पुलिस थाने पर हमला कर कब्जा करना, सरकारी कर्मचारियों के बंगले को ध्वस्त करना, आदि का वर्णन किया है। सोशलिस्ट उषा आंदोलन के दौरान भूमिगत रहकर भी अपने भाषणों के जरिए देश की जनता में ब्रिटिश विरोधी भावना पैदा करने की कोशिश करती है। उपन्यास में आंदोलन के दौरान बलिया जिले में बिरजू और अन्य गुप्त आंदोलनकारियों द्वारा समांतर सरकार गठित किये जाने का भी विस्तृत वर्णन किया गया है। वहीं, 'मृत्युंजय' उपन्यास में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य गोसाईं, अहिनाकोंवर, सेवक मधु केवट, जयराम, भिभिराम आदि पात्रों के जरिए आंदोलन में हिंसा-अहिंसा को लेकर तत्कालीन असम की जनता के अंतर्द्वंद्व को अभिव्यक्त करने का प्रयास करते हैं। नगाँव के पश्चिमी अंचलों- मायाङ, बारपुजिया, बढ़मपुर, कामपुर, आदि में एक ओर जनता गाँधी के अहिंसात्मक आंदोलन से प्रभावित थी तो दूसरी ओर अत्याचार से पीड़ित जनता सुभाष चंद्र बोस की हिंसात्मक नीति को अपनाते हुए मृत्युवाहिनी सेना गठित कर रेल दुर्घटना आदि को अंजाम दे रही थी। 'मृत्युंजय' उपन्यास में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के दौरान अंग्रेजों के विरुद्ध असमिया जनता की ऐसी ही हिंसात्मक-अहिंसात्मक प्रतिक्रिया और आंदोलन को सफल बनाने में उनके महत्वपूर्ण योगदान को रेखांकित करने की कोशिश की गई है।

चौथा उप-अध्याय '**भारत की आज़ादी और विभाजन**' है। इस उप-अध्याय में यशपाल औरबीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों के माध्यम से उत्तर भारत और असम में भारत की आज़ादी और विभाजन के पूर्व, दौरान एवं पश्चात् की घटनाओं के प्रभाव एवं विस्तार को समझने और विश्लेषित करने का प्रयास किया गयाहै। नौ सेना विद्रोह भारत की आज़ादी के पूर्व घटित एक महत्वपूर्ण घटना थी। भारत की आज़ादी के लिये किये गये आंदोलनों में से यह एक महत्वपूर्ण आंदोलन था,जिसने ब्रिटिश साम्राज्यवाद

की नींव को हिला दिया। यशपाल के 'गीता' और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में नौ-सैनिकों के विद्रोह का चित्रण किया गया है। यशपाल ने अपने उपन्यास 'गीता' में तत्कालीन बंबई शहर के परेलइलाके में नौ-सैनिकों द्वारा किये गये विद्रोह का चित्रण किया है। उपन्यास में उपन्यासकार ने नौ-सैनिक विद्रोह के दौरान बंबई के परेलइलाके में आम जनता एवं दुकानदारों द्वारा किये गये विद्रोह का वर्णन बहुत ही बारीकी से किया है।

बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में नौ-सैनिकों के आंदोलन के दौरान असम के नवयुवकों द्वारा आंदोलनकारियों के समर्थन की योजना को स्पष्ट रूप चित्रित किया है। वे लिखते हैं कि नवीन और दूसरे आंदोलनकर्त्ताओं ने "आंदोलनकर्त्ताओं की एक सभा बुलाने,...उसी में नौ सेना के विद्रोह के उद्देश्यों को ठीक ढंग से समझाने और आज की रात के अंदर-अंदर ही एक प्रचार-पत्र प्रकाशित करके(गुवाहाटी) के निकट जालुकबारी में जो सैनिक छावनी है उसमें उस प्रचार-पत्र को वितरित कर देने का कार्यक्रम निर्धारित किया।"[20] परंतु इन लोगों के कुछ करने से पहले ही "नौ सेना वाहिनी ने वल्लभ भाई पटेल के समक्ष समर्पण कर दिया।"[21] स्पष्ट है कि इस विद्रोह का प्रभाव असम में न के बराबर ही था।

देश की आज़ादी और विभाजन एक सिक्के के दो पहलू हैं। देश कीआज़ादी और विभाजन दो ऐसी घटनाएँ हैं, जो एक ही साथ घटित हुईं, मगर जहाँ आज़ादी ने भारत के लोगों के दिलों को ऊर्जा और उत्साह से भर दिया, वहीं विभाजन ने तमाम भारतवासियों के मन पर एक भयानक छाप छोड़ दी। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् स्वतंत्रता आंदोलन की गति तीव्र हो गई और अंग्रेजी हुकूमत की शक्ति कमजोर पड़ने लगी। आंदोलन की गति को रोकने के लिए अंग्रेज सरकार ने अपनी पुरानी 'फूट डालो राज करो' की नीति को अपनाया। उन्होंने धर्म के आधार हिन्दुओं-मुसलमानों को उकसाया, जिसके कारण

काँग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच आपसी संघर्ष बढ़ता गया। इस आपसी संघर्ष ने देश में सांप्रदायिकता का जहर घोल दिया। यशपाल का वृहदाकार उपन्यास 'झूठा सच' विभाजन की पृष्ठभूमि को ही आधार बनाकर लिखा गया है। इस उपन्यास में विभाजन से पूर्व, उसके दौरान एवं उसके बाद सांप्रदायिकताकी आग में जलते देश का चित्रण किया गया है। यह उपन्यास दो खण्डों में विभाजित है। पहले खंड-'वतन और देश' का प्रकाशन 1958 में हुआ। इसमें पंजाब के लाहौर तथा उसके आस-पास के कुछ हिस्सों में विभाजन के पूर्व से लेकर विभाजन तक हुए सांप्रदायिक दंगों तथा जनमानस पर पड़े उसके प्रभाव का चित्रण किया गया है। दूसरा खण्ड 'देश का भविष्य' है,जिसका प्रकाशन 1960 में हुआ। इसमें विभाजन के बाद सांप्रदायिकता के विकराल रूप, विस्थापन के दर्द, काँग्रेसी नेताओं की स्वार्थपरता, समाज में फैले भ्रष्टाचार, आदि का चित्रण किया गया है। एक ओर जहाँ विभाजन से पूर्व समस्त उत्तर भारत में सांप्रदायिकता का जहर फैला हुआ था, वहीं दूसरी ओर ब्रिटिश सरकार तथा मुस्लिमलीग द्वारा असम को बंगाल के साथ जोड़कर पाकिस्तान में सम्मिलित करने की साजिश के विरोध में असम के प्रमुख नेता गोपिनाथ बरदलै के नेतृत्व में असमवासियों द्वारा असम में स्थायी शासन स्थापित करने तथा असमिया भाषा एवं अस्तित्व की रक्षा के लिए आंदोलन किये जा रहे थे। इस आंदोलन में असम के सभी वर्ग के लोगों ने साथ दिया। असमिया उपन्यासकार बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में तत्कालीन असम में गोपिनाथ बरदलै के नेतृत्व में असम की जनता द्वारा किये गये आंदोलन का चित्रण बहुत बारीकी से किया गया है। तत्कालीन समय में उत्तर भारत में फैली सांप्रदायिकता का प्रभाव असम में दिखाई नहीं देता। मुस्लिम लीग द्वारा कलकत्ता में की गई 'सीधी कार्रवाई' के दिन हुए सांप्रदायिक दंगे में बहुत लोग मारे गए, जिसके बारे में सुनकर असम की जनता भी डर गई। असम के कांग्रेसी नेता गोपिनाथ बरदलै द्वारा बंगाल में शामिल न

होने की घोषणा के पश्चात् असम में भी मुस्लिम लीग द्वारा 'सीधी कारवाई' की तैयारी शुरू कर दी गई थी,लेकिन असम में इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा,जिसका प्रमुख कारण यह था कि लीग द्वारा असम को बंगाल के साथ जोड़कर पाकिस्तान में सम्मिलित करने की कुटिल राजनीति से असम के अधिकांश मुसलमान भी सहमत नहीं थे। असम में लीग की लोकप्रियता न के बराबर थी। परिणामस्वरूप असम में हुई 'सीधी कार्रवाई' के दिन भी असम में कोई गड़बड़ी नहीं हुई। पाखी घोड़ा' का मुसलमान पात्र सिराजुद्दीन हजारिका कहता है- "लीग की राजनीति का हममें से अधिकांश लोग समर्थन नहीं करते।"[22] इस संबंध में डॉ. सागर बरुवा लिखते हैं- "मुस्लिम लीग की असम शाखा ने पाकिस्तान बनाने की चिंता के विपरीप असम के मुसलमानों की आर्थिक-सामाजिक उन्नति को अधिक महत्व दिया।"[23] हालाँकि जिस दिन असम में लीग द्वारा पाकिस्तान की माँग के लिए जुलूस निकला था, उस दिन इस जुलूस के विरोध में गुवाहाटी शहर में एक बड़ा जुलूस निकला था, जिसमें सभी वर्गों के लोग शामिल हुए। इस घटना का स्पष्ट चित्रण बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने उपन्यास 'पाखी घोड़ा' में किया है।

पंचम अध्याय '**यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों का शिल्प**' है। इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में विभाजित किया गया है। प्रथम उप-अध्याय '**भाषा**' में यशपाल के उपन्यास और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के हिन्दी में अनूदित उपन्यासों की भाषा का विश्लेषण और उसकी तुलना की गयी है। यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग भी दिखाई पड़ता है। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य की तुलना में यशपाल के उपन्यासों में संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग अधिक दिखाई देता है,खासकर 'दिव्या', 'अमिता' और 'अप्सरा का शाप' उपन्यास में। इन दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में स्थानीय भाषा की झलक भी दिखाई देती है। साथ ही इन दोनोंउपन्यासकारोंके उपन्यासों में विदेशी शब्दों का प्रयोग

भी मिलता है। यशपाल के उपन्यासों में प्रसंगानुकूल अंग्रेजी, उर्दू, रूसी, पश्तो, आदि भाषा का प्रयोग किया गया है। कहीं-कहीं अंग्रेजी के पूरे-पूरे वाक्यों का भी प्रयोग किया गया है। वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास 'अँधेरा-उजाला' में बस एक ही पात्र के जरिए पूरे उपन्यास में एक-दो स्थान पर ही अंग्रेजी के पूरे वाक्य दिखाई देते हैं। बाकी अन्य उपन्यासों में अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग भले ही दिखाई देते हैं, परंतु अंग्रेजी के पूरे-पूरे वाक्य दिखाई नहीं देते। इसका कारण यह है कि उनके उपन्यासों के ज्यादातर पात्र ग्रामीण हैं। इन दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग भी मिलता है। लेकिन बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग सीमित है। यशपाल ने जहाँ अपने उपन्यासों में हिन्दी के मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग किया है, वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के अनूदित उपन्यासों में असमिया के कुछ मुहावरों और असमिया की कुछ लोकोक्तियों का प्रयोग हिन्दी में अनूदित कर किया गया है। परंतु अनुवादकों ने उसके भाव में कोई अंतर नहीं आने दिया है। साथ ही उपन्यासों के हिन्दी में अनूदित होने के कारण हिन्दी के कुछ मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग भी किया गया है। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों के अनूदित होने पर भी उनकी मूल संवेदना में कोई अंतर दिखाई नहीं देता है।

द्वितीय उप-अध्याय '**कथा शिल्प**' है। इस उप-अध्याय में यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों की संरचना, कथा-प्रविधियों आदि का विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। इन दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में पूर्वदीप्ति शैली, दृश्यात्मक, परिदृश्यात्मक आदि कथा प्रविधियों का प्रयोग मिलता है। यशपाल के 'पार्टी कामरेड', 'झूठा सच', आदि उपन्यासों तथा बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में नेताओं के भाषण में भाषण शैली का प्रयोग किया गया है। यशपाल

अपने उपन्यासों में व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग बखूबी किया है। लेकिन बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में प्रायः इस शैली का प्रयोग नहीं किया गया है। यशपाल के 'देशद्रोही' उपन्यास के इन कथनों को उदाहरण के तौर पर देख सकते हैं- "मोटर और दूसरे यंत्रों से बद्री बाबू को घृणा थी। जीवन की सादगी को नष्ट कर,उसमें विषमता लाने वाली मशीनरी को भी वे अच्छा न समझते थे, परंतु उनका समय जनता का समय था। काँग्रेस के कार्यकर्ताओं के बहुत कुछ कहने-सुनने, समझाने पर समय की बचत करने के लिए उन्होंने मोटर का व्यवहार स्वीकार कर लिया था।"[24] इन पंक्तियों के माध्यम से यशपाल काँग्रेसी नेता बद्रीबाबू के जरिए उस पूरे वर्ग के व्यवहार और चरित्र पर व्यंग्य करते हैं।

दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में काव्यात्मक शैली का भी प्रयोग किया है, जिससे गद्य के साथ-साथ हमें पद्य का भी आंनद प्राप्त होता है। पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग इन दोनों ही उपन्यासकारों के उपन्यासों में दिखाई देता है। उदाहरणस्वरूप बीरेन्द्र कुमार भट्टचार्य के 'मृत्युंजय', 'शतघ्नी', अँधेरा-उजाला और यशपाल के 'देशद्रोही', 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में कई स्थलों पर पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग किया गया है। 'मृत्युंजय' उपन्यास का पात्र धनपुर अपने बचपन की प्रेमिका की बातों को याद करता है। वहीं यशपाल के 'देशद्रोही' उपन्यास का खन्ना पकड़ लिये जाने पर अपनी पूर्व पत्नि और अपने परिवारवालों से जुड़ी अतीत की स्मृतियों को याद करता है। जब अतीत की घटना को फ्लैशबैक शैली में अलग-अलग लोगों द्वारा नैरेट किया जाता है तो नैरेटर के बदलने से अवलोकन बिन्दु भी बदल जाता है। अवलोकन बिंदु के बदल जाने पर उपन्यास में एक ही समय पर कथा के अलग-अलग रूप दिखाई देते हैं। इस तरह से विभिन्न अवलोकन बिन्दुओं के माध्यम से कथा को आगे बढ़ाने की शैली भी

दोनों उपन्यासकारों के यहाँ दिखाई पड़ती है। निश्चित तौर पर इन दोनों ही उपन्यासकारों के उपन्यासों का शिल्प सुंदर एवं सुगठित है।

संदर्भ

[1] डॉ. भूलिका त्रिवेदी, यशपाल: व्यक्तित्व एवं कृतित्व, चिंतन प्रकाशन, कानपुर, 1992,पृ. 58

[2] यशपाल, दादा कामरेड, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018, पृ. 21

[3] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, नवारुण वर्मा (अनु.), किताबघर, नई दिल्ली, 1990, पृ. 135

[4] यशपाल, दादा कामरेड, पृ.145

[5] यशपाल, दिव्या, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2017, पृ. 114

[6] वही, पृ. 115

[7] यशपाल, बारह घंटे, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2015, पृ. 109-110

[8] डॉ. अमरेन्द्र त्रिपाठी, बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का रचना-कर्म(मृत्युंजय के विशेष संदर्भ में) (लेख), साहित्यमाला: पूर्वोत्तर भारतीय साहित्य, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली, 2017, पृ. 74

[9] यशपाल, दिव्या, पृ. 12

[10] वही

[11] यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018, पृ. 202

[12] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, कृष्ण प्रसाद सिंह मागध(अनु.),भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2013, पृ. 99-100

[13] वही, पृ. 102

[14] वही

[15] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, माँ, लोकनाथ भराली (अनु.)हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, 1963, पृ. 93

[16] यशपाल, यशपाल रचनावली (खंड-11), आनन्द(संपा.), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007, पृ. 398

[17] यशपाल, दादा कामरेड, पृ. 54

[18] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, डॉ. महेन्द्रनाथ दुबे(अनु.), भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 1990, पृ. 42

[19] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, पृ. 49

[20] बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, पृ. 232

[21] वही, पृ. 241

[22] वही, पृ. 315

[23] डॉ. सागर बरुवा, भारतर स्वाधीनता संग्रामत असमर अवदान, जागरण प्रकाशन, नगाँव, 2013, पृ. 304 (अनुवाद मेरा)

[24] यशपाल, देशद्रोही, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014, पृ. 93

शोध-प्रबंध के महत्वपूर्ण निष्कर्ष

अध्ययन की सुविधा के लिए प्रस्तुत शोध प्रबंध के महत्वपूर्ण निष्कर्षों को बिन्दुवार इस रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है:

1. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ने अपने उपन्यासों में स्त्री की आर्थिक स्वतंत्रता पर बल दिया है। उन दोनों का मानना है कि जब तक स्त्री आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर नहीं होगी तब तक उसका शोषण होता ही रहेगा।
2. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्यने अपने उपन्यासों में स्त्री शिक्षा को विशेष महत्व दिया है।
3. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने उपन्यासों में समाज में स्त्री के समानाधिकार पर बल दिया है।
4. यशपाल के उपन्यासों में स्त्री की यौन स्वतंत्रता का स्वर मुखरित हुआ है। मगर बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों में स्त्री की यौन स्वतंत्रता का सवाल महत्वपूर्ण नहीं है। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य स्त्री की यौन स्वतंत्रता का समर्थन भी नहीं करते। वे एक आदर्श समाज के लिए स्त्री की यौन स्वतंत्रता को अनैतिक मानते हैं। इसीलिए उनके यहाँ प्रायः तमाम स्त्री पात्र, वह चाहे शहरी हो या ग्रामीण,अपने पति के अलावा किसी और पुरुष के साथ शारीरिक संबंध स्थापित करती हुई दिखाई नहीं देती।
5. यशपाल ने अपने कुछ उपन्यासों में स्त्री के प्रति धर्म के विकृत अप्रोच को दर्शाया है, जबकि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के यहाँ स्त्री के प्रति धर्म का विकृत अप्रोच दिखाई नहीं देता। इसका कारण संभवतः यह है कि वे स्वयं धर्म के प्रति आस्थावान थे।
6. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने-अपने उपन्यासों में राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने वाली स्त्रियों का चित्रण किया है। लेकिन यशपाल के उपन्यास की स्त्रियाँ समाजवादी विचारधारा से प्रभावित हैं और प्रत्यक्ष रूप से आंदोलन में भाग लेती हैं,

जबकि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास की स्त्रियाँ गाँधीवादी विचारधारा से प्रभावित हैं और परोक्ष रुप से आंदोलन में भाग लेती हैं।

7. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ने अपने उपन्यासों में परम्परावादी भारतीय नारी का चित्रण किया है। लेकिन दोनों उपन्यासकारों की दृष्टियों में पर्याप्त भिन्नता है। एक ओर जहाँ बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य भारतीय नारी की सहनशीलता, पतिपरायणता और त्याग की महानता को दर्शाते हैं, वहीं यशपाल अपने उपन्यासों में परम्परावादी भारतीय नारी के शोषण और उसके असहाय रूप को उजागर करते हैं।
8. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों के उपन्यासों में स्त्री-पुरुष का प्रेम दिखाई देता है। यशपाल ने स्त्री-पुरुष के आकर्षण को सहज एवं स्वाभाविक माना है। वे प्रेम को स्त्री-पुरुष की परस्पर संतुष्टि की कामना और परस्पर आश्रय की भावना के रूप में देखते हैं। वे प्रेम रहित यौन संबंध को अनुचित मानते हैं। वे प्रेम को स्त्री-पुरुष के जीवन की स्वाभाविक माँग के रुप में देखते हैं। यशपाल ने स्त्री-पुरुष संबंधों का विश्लेषण जहाँ मार्क्सवादी नज़रिए से किया है, वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के साहित्य में स्त्री-पुरुष संबंध गाँधीवाद से प्रभावित दिखाई देता है। यशपाल विवाह-पूर्व एवं विवाहेतर प्रेम को अनिवार्यतः अनैतिक नहीं मानते बल्कि उसे सहज एवं स्वाभाविक मानते हैं। इसके अलावा वे स्त्री-पुरुष के परस्पर आकर्षण और प्रेम को स्थायी रूप देने के लिए विवाह जैसी संस्था को अनिवार्य नहीं मानते। वे विवाह को एक बंधन मानते हैं। वहीं बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य विवाह-पूर्व एवं विवाहेतर प्रेम को सहज नहीं मानते और इसलिए उनके उपन्यासों में प्रायः जहाँ कहीं भी विवाह-पूर्व अथवा विवाहेतर प्रेम दिखाई पड़ता है, वहाँ उसकी परिणति अंततः आध्यात्मिक प्रेम के रूप में होती है। यशपाल विवाह-पूर्व काम-संबंध को भी अनैतिक नहीं मानते, जबकि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के लिए विवाह-पूर्व काम हमेशा अनैतिक है, इसीलिए वे ऐसे संबंधों की आदर्श परिणति विवाह में देखते हैं।

9. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य इन दोनों के उपन्यासों में जाति-वर्ण संबंधी मुद्दों को उठाया गया है। यशपाल जाति-वर्ण व्यवस्था को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहते हैं, जबकि बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का जाति-वर्ण संबंधी दृष्टिकोण संशोधनवादी है। यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ने जात-पात के भेदभाव को दूर करने के लिए अपने उपन्यासों में अंतरजातीय विवाह को एक विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया है।

10. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के प्रायः सभी उपन्यासों में उनकी वर्गीय चेतना साफ दिखाई पड़ती है। यशपाल वर्ग के सवाल को मार्क्सवादी नज़रिए से देखते हैं और इसलिए समाज में मौजूद वर्ग भेद को खत्म कर एक वर्ग विहीन समतामूलक समाज की स्थापना के लिए वर्ग-संघर्ष के माध्यम से समाज की आर्थिक व्यवस्था में बदलाव को आवश्यक मानते हैं। यशपाल केवल विचार के माध्यम से किसी किस्म के सामाजिक परिवर्तन के कोरे भाववाद में नहीं उलझते हैं। जबकि,बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य समतामूलक समाज की स्थापना के लिए वर्ग-संघर्ष की अनिवार्यता को स्वीकार नहीं करते। वे गाँधीवादी संशोधनवाद के रास्ते समाज में समरसता कायम करना चाहते हैं। वे ग्रामीण समाज में फैली आर्थिक विषमता को समाप्त करने के लिए वर्ग-संघर्ष के बदले श्रेणी-मैत्री को आवश्यक मानते हैं।

11. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास 'मृत्युंजय' और यशपाल के उपन्यास 'मेरी तेरी उसकी बात' में 'भारत छोड़ो आंदोलन' में जनता की भागीदारी का विस्तृत चित्रण किया गया है। यशपाल भारत की आजादी में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के महत्व को स्वीकार नहीं करते। अपने वामपंथी विचारधारात्मक रुझान के कारण यशपाल 'भारत छोड़ो आंदोलन' और उसमें गाँधी की भूमिका के प्रति नकारात्मक रूप से काफी 'क्रिटिकल' हैं। यशपाल के विपरीत बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने 'मृत्युंजय' उपन्यास में

असम की जनता पर गाँधी और उनके आंदोलनों के प्रभाव को बहुत ही महत्वपूर्ण ढंग से दर्शाया है। 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में आंदोलन में भाग लेने वाले कई वामपंथी और समाजवादी युवक-युवतियाँ दिखाई देते हैं, परन्तु एक भी गाँधीवादी युवक या युवती उपन्यास में मौजूद नहीं है। यशपाल ने संभवतः यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि देश के युवावर्ग की गाँधी की अहिंसात्मक नीति में कोई आस्था नहीं है। यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने क्रमशः उत्तर भारत और असम के कुछ खास हिस्सों में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के प्रभाव और प्रसार का चित्रण बहुत ही बारीकी से किया है। निश्चय ही चित्रण की इस प्रक्रिया में दोनों रचनाकारों की अपनी-अपनी विचारधाराओं ने भी अपना काम किया है। विचारधारा की भिन्नता के कारण 'भारत छोड़ो आंदोलन' के प्रति और उसके प्रभाव के प्रति दोनों उपन्यासकारों के नजरिए में पर्याप्त अंतर दिखाई पड़ता है।

12. यशपाल के वृहदाकार उपन्यास 'झूठा सच' में विभाजन से पूर्व, उसके दौरान एवं उसके बाद सांप्रदायिकता की आग में जलते देश का चित्रण किया गया है। एक ओर जहाँ विभाजन से पूर्व समस्त उत्तर भारत में सांप्रदायिकता का जहर फैला हुआ था, वहीं दूसरी ओर सांप्रदायिकता का कोई खास प्रभाव असम में दिखाई नहीं देता। असम को बंगाल के साथ जोड़कर पाकिस्तान में सम्मिलित करने की साजिश के विरोध में असम के प्रमुख नेता गोपिनाथ बरदलै के नेतृत्व में असमवासियों द्वारा स्थायी शासन स्थापित करने तथा असमिया भाषा एवं अस्तित्व की रक्षा के लिए आंदोलन किये जा रहे थे। असम के अधिकांश मुसलमान भी असम को बंगाल के साथ मिलाकर पाकिस्तान में शामिल किए जाने के खिलाफ थे। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अपने 'पाखी घोड़ा' उपन्यास में असम में गोपिनाथ बरदलै के नेतृत्व में असम की जनता द्वारा किये गये इस आंदोलन का चित्रण बारीकी से किया है।

13. यशपाल के उपन्यासों में बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यासों की तुलना में भाषाई विविधता नजर आती है। उनके उपन्यासों में अंग्रेजी भाषा के पूरे-पूरे वाक्य भी दिखाई देते हैं, जो बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के यहाँ 'अँधेरा-उजाला' उपन्यास छोड़कर अन्य उपन्यासों में नहीं मिलते। बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास चूँकि असमिया से हिन्दी में अनूदित हुए हैं, इस कारण असमिया भाषा के कुछ शब्दों का प्रयोग वहाँ दिखाई पड़ता है। यशपाल के उपन्यासों में हिन्दी और थोड़े-बहुत पंजाबी के मुहावरे एवं लोकोक्तियों का प्रयोग मिलता है तथा बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के अनूदित उपन्यासों में असमिया के मुहावरों और असमिया की लोकोक्तियों का प्रयोग हिन्दी में अनूदित कर किया गया है।

14. यशपाल और बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य दोनों ही उपन्यासकारों ने विभिन्न कथा-प्रविधियों का प्रयोग अपने उपन्यासों में किया है। पत्र, भाषण, व्यंग्य, पूर्वदीप्ति, दृश्यात्मक, परिदृश्यात्मक, आदि विविध कथा-प्रविधियों को इन दोनों ही उपन्यासकारों के उपन्यासों में देखा जा सकता है। तुलनात्मक रूप से यशपाल के उपन्यासों में औपन्यासिक शिल्प की विविधता ज़्यादा है।

संदर्भ ग्रंथ-सूची

अधार ग्रंथ:

1. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, अँधेरा-उजाला, नवारुण वर्मा (अनु.),किताबघर, नई दिल्ली, 1990
2. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पाखी घोड़ा, डॉ. महेंद्रनाथ दुबे (अनु.), भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 1990
3. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, प्रजा का राज, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2002
4. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, मृत्युंजय, कृष्णप्रसाद सिंह मागध (अनु.),भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2013
5. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, शतघ्नी, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1962
6. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, माँ, लोकनाथ भराली (अनु.), हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, 1963
7. यशपाल, अप्सरा का शाप, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2015
8. यशपाल, अमिता, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2017
9. यशपाल, गीता, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010
10. यशपाल, दादा कामरेड, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2016
11. यशपाल, दिव्या, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2017
12. यशपाल, देशद्रोही, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014
13. यशपाल, बारह घंटे, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2015
14. यशपाल, मनुष्य के रूप, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009
15. यशपाल, मेरी तेरी उसकी बात,लोकभारती प्रकाशन,इलाहाबाद, 2018
16. यशपाल, झूठा सच(भाग-1, 2), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018
17. यशपाल, यशपाल रचनावली(खंड-5), आनन्द(संपा.), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007

सहायक ग्रंथ :

हिन्दी पुस्तकें:

1. अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2012
2. इंद्रनाथ चौधुरी, तुलनात्मक साहित्य का भारतीय परिपेक्ष, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2010
3. कामताप्रसाद गुरु, हिन्दी व्याकरण, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2019
4. खगेंद्र ठाकुर, कहानी परम्परा और प्रगति, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2018
5. गोपाल कृष्ण शर्मा, यशपाल का उपन्यास साहित्य, नवचेतना प्रकाशन, दिल्ली, 2004
6. गोपाल राय, उपन्यास की संरचना, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012
7. गोपाल राय, हिन्दी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002
8. चमनलाल, यशपाल के उपन्यास, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2002
9. चमनलाल, यशपाल के उपन्यासों में राजनैतिक चेतना, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 1985
10. चौहार्य मिश्र, यशपाल के उपन्यासों की सामाजिक तथा राजनैतिक चेतना एवं शिल्प-विधान, संजय बुक सेंटर, नयी दिल्ली, 2004
11. डॉ. अमरनाथ, नारी मुक्ति का संघर्ष, रेमाधव पब्लिकेशन्स प्रा.लि., नोएडा, 2007
12. डॉ. ऋतु वार्ष्णेय, यशपाल के उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2010
13. डॉ. ज्योति पांडुरंग गायकवाड़, यशपाल के उपन्यासों में नारी पात्रों का चित्रण, ए.बी.एस पब्लिकेशन, वाराणसी, 2014
14. डॉ. प्रमोद पाटील, यशपाल के उपन्यास, विकास प्रकाशन, कानपुर, 2008
15. डॉ. भ. ह. राजुरकर, डॉ. राजमल बोरा, तुलनात्मक अध्ययन: स्वरूप और समस्याएँ, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
16. डॉ. भगवान पाठक, यशपाल के उपन्यासों की सामाजिक चेतना, रमन बुक सेंटर, मथुरा, 2010
17. डॉ. भूलिका त्रिवेदी, यशपाल: व्यक्तित्व एवं कृतित्व, चिंतन प्रकाशन, कानपुर, 1992
18. डॉ. मनमोहन सहगल, कथाकार यशपाल, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 2007

19. डॉ. रामचंद्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2017
20. डॉ. विजय कुमार विठ्ठल जाधव, यशपाल के उपन्यासों में चित्रित पात्रों का स्वरूप विश्लेषण, साहित्य सागर, कानपुर, 2005
21. देवीशंकर अवस्थी, नयी कहानी सन्दर्भ और प्रकृति, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019
22. नासिरा शर्मा, औरत के लिए औरत, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018
23. परमानन्द श्रीवास्तव, उपन्यास का पुनर्जन्म, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2015
24. प्रो. कमला प्रसाद, राजेंद्र शर्मा, स्त्री: मुक्ति का सपना, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2014
25. प्रोफेसर बिपिन चंद्र, 'भारत का स्वतंत्रता संघर्ष', हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1998
26. मधुरेश, क्रांतिकारी यशपाल: एक समर्पित व्यक्तित्व, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1979
27. मधुरेश, हिन्दी उपन्यास का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018
28. मधुरेश, हिन्दी कहानी का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018
29. मन्मथनाथ गुप्त, स्त्री-पुरुष संबंधों का रोमांचकारी इतिहास, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2020
30. यशपाल, गाँधीवाद की शव परीक्षा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018
31. यशपाल, न्याय का संघर्ष, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद, 2003
32. यशपाल, मार्क्सवाद, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018
33. यशपाल, यशपाल रचनावली(खंड-1 से लेकर 14), आनन्द(संपा.), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007
34. यशपाल, सिंहावलोकन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2019
35. योगेश सूरी, यशपाल के उपन्यासों में नारी जीवन की समस्याएँ, चंद्रलोक प्रकाशन, कानपुर, 1994
36. रजनी पाम दत्त, आज का भारत, रामविलास शर्मा (अनु.), ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, 2004
37. राजेंद्र यादव, उपन्यास स्वरूप और संवेदना, वाणी प्रकाशन, 2020

38. राजेंद्र यादव, कहानी स्वरूप और संवेदना, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2020
39. रामविलास शर्मा, मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984
40. रोमिला थापर, भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2021
41. शंभुनाथ, हिन्दी उपन्यास राष्ट्र और हाशिया, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2016
42. सरोज गुप्त, यशपाल: व्यक्तित्व और कृतित्व, अनुराग प्रकाशन, अजमेर, 1970
43. सुदर्शन मलहोत्रा, यशपाल के उपन्यासों का मूल्यांकन, पराग प्रकाशन, दिल्ली, 1984
44. सुमित सरकार, आधुनिक भारत(1885-1947), सुशीला डोभाल(अनु.), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018
45. सुरेन्द्र चंद्र तिवारी, यशपाल और हिन्दी कथा साहित्य, सरस्वती प्रेस, बनारस, 1956
46. सुषमा धवन, हिन्दी उपन्यास, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1961
47. सौ. शकुंतला प्रताप वाघ (चव्हाण), यशपाल के उपन्यासों का अनुशीलन, अमन प्रकाशन, कानपुर, 2012

असमिया पुस्तकें:

1. अध्यापक नगेन शईकीया, आधुनिक असमिया साहित्यर अभिलेख, असम साहित्य सभा, जोरहाट, 1977
2. अमल चंद्र दास, असमिया उपन्यास परिक्रमा, बनलता प्रकाशन, गुवाहाटी, 2012
3. अरिन्दम बरकटकी, बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य रामधेनु सम्पादकीय, बनलता प्रकाशन, गुवाहाटी, 2007
4. गुणाभिराम बरुवा, आसाम बुरंजी, असम प्रकाशन परिषद, गुवाहाटी, 2003
5. गोविंद प्रसाद शर्मा, बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य:उपन्यासिक, बनलता प्रकाशन, गोवाहाटी, 2010
6. गोविन्द प्रसाद शर्मा, उपन्यास आरु असमीया उपन्यास, स्टूडेंट्सस स्टोर्स, गुवाहाटी, 2009
7. डॉ. डम्बरुधर नाथ, असम बुरंजी, विद्या भवन, जोरहाट, 1987
8. डॉ. नगेन ठाकुर, एश बछ्ररर असमिया उपन्यास, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2012
9. डॉ. पराग कुमार भट्टाचार्य, आधुनिक उपन्यास, असम पब्लिशिंग कम्पनी, गुवाहाटी, 1999

10. डॉ. प्रफुल्ल कटकी, स्वराजोत्तर असमिया उपन्यास समीक्षा, वीणा लाईब्रेरी प्रकाशन, गुवाहाटी, 2009
11. डॉ. प्राप्ति ठाकुर, रामधेनुर चुटिगल्प विचार आरु विश्लेषण, भवानी वुक्स, गुवाहाटी, 2012
12. डॉ. मलया खाओन्द, डॉ. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य आरु तेओंर उपन्यास, साहित्य प्रकाशन, गुवाहाटी, 2007
13. डॉ. रत्ना दत्त, मृत्यंजय एटि विश्लेषण, असमिया अन लाइन प्रकाशन, डिब्रुगढ़, 2017
14. डॉ. रमेश चंद्र कलिता, स्वाधीनता आंदोलन आरु असम, असम प्रकाशन परिषद, गुवाहाटी, 2008
15. डॉ. सत्येंद्रनाथ शर्मा, असमिया उपन्यासार गतिधारा, सौमर प्रकाशन, गुवाहाटी, 2001
16. डॉ. सत्येंद्रनाथ शर्मा, असमिया साहित्यर समीक्षात्मक इतिवृत्ति, सौमार प्रकाशन, गुवाहाटी, 2020
17. डॉ. सागर बरुवा, भारतर स्वाधीनता आंदोलनत असमर अवदान,जागरण साहित्य प्रकाशन, नगाँव, 2013
18. डॉ. हेमंत कुमार शर्मा, बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्यर साहित्य-कृति, चंद्र प्रकाशन, गुवाहाटी, 2001
19. तरणी पाठक, असमर बुरंजी (प्राक् ऐतिहासिक युगर परा 2016 खृष्टाब्दलोईके), चन्द्र प्रकाशन, 2017
20. पद्मनाथ गोहाई बरुवा, असमर बुरंजी, वि.एटि पाब्लिकेशन, गुवाहाटी, 2017
21. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, प्रतिपद, चंद्र प्रकाशन, गुवाहाटी, 2015
22. बीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, राजपथे रिङियाय, चंद्र प्रकाशन, गुवाहाटी, 2016
23. लक्ष्मीनाथ तामुली, भारतर स्वाधीनता संग्रामत असमर अवदान, ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी, 2017

पत्र-पत्रिकाएँ:

1. इंद्रप्रस्थ भारती (यशपाल विशेषांक), नानक चंद (सं.),दिल्ली, वर्ष15-, अंक-4, अक्टूबर-दिसंबर, 2003
2. साहित्यमाला: पूर्वोत्तर भारतीय साहित्य, केंद्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली, 2017,
3. भारतीय लेखक (यशपाल विशेषांक), भीमसेन त्यागी (सं.), अंक- 5-6, अक्टूबर-दिसंबर, 2003
4. वर्तमान साहित्य (यशपाल विशेषांक), प्रो. कुँवरपाल सिंह (सं.), अंक-10-12, अक्टूबर-नवम्बर-दिसम्बर, 2003

शब्द कोश:

1. आचार्य रामचंद्र वर्मा, प्रामाणिक हिन्दी कोश, लोकभारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद, 1998
2. धीरेंद्र वर्मा (संपा.), हिन्दी साहित्य कोश खण्ड- 1, ज्ञानमण्डल लिमि., वाराणसी, 1985
3. धीरेन्द्र वर्मा (संपा.), हिन्दी साहित्य कोश, खण्ड- 2, ज्ञानमण्डल लिमि., वाराणसी, 2015
4. श्यामसुंदर दास, हिन्दी शब्द सागर, नागरी प्रचारणी सभा, काशी, 1971
5. हिन्दी एंग्लो-ऐसमीज़ डिक्शनरी, बुधीन्द्र चंद्र बरुवा, एल.बी.एस पब्लिकेशन, 2018
6. हिन्दी-असमिया व्यावहारिक लघु कोश, केंद्रीय हिन्दी निदेशालय, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, 1985